# समर्पण

जिनके पुनीत कर-कमलोंसे भागवती दीक्षा अंगीकार कर, साध्वी
वर्गमें जिन्होंने त्याग, संयम, तप व सेवाका महान आदर्श रखा
तथा जिन्होंने अपना समस्त जीवन ही जिनके द्वारा
उठाये गये कार्योंके लिये अर्पित कर दिया, उन
वंदनीया साध्वी श्री देवश्रीजी महाराज की
यह [illegible] इन्हीं आचार्य भगवन
श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी
महाराजके कर-कमलोंमें
सादर (समर्प)ित !

# प्रस्तावना

## भारतीय संस्कृतिकी विशेषता—त्यागमार्ग

भारतीय संस्कृतिकी यह एक मुख्य विशेषता है कि इसके उपासक आजसे हजारों वर्ष पूर्व इस निष्कर्ष पर पहुंच गए थे कि सांसारिक सुख और उनके साधन हेय हैं। इनसे कभी भी स्थायी और ध्रुव आनन्दकी प्राप्ति नहीं होती। जिन्हें जन साधारण सुख-रूप मानते हैं वे सब पदार्थ 'विषकुम्भं पयोमुखम्' की अवस्थामें हैं। उनमें वस्तुतः दुःख ही दुःख है। उनकी प्राप्तिसे कभी तृप्ति भी नहीं होती। जैसे-जैसे उनके निकट पहुंचते हैं, वे क्षितिजकी रेखाकी तरह दूर दूर होते जाते हैं। यदि कभी मिल भी जाएं तो उनके भोगका सुख क्षणिक होता है। उनके लिए हमारी इच्छाएं हमेशा बढ़ती रहती हैं। दुनियाके सब साधनों पर अधिकार हो जानेके बाद भी नहिराज व राजा ययातिकी भांति हमें यह कहनेके 'न जातु [illegible]

ने इसे एक ब्राह्मणी सन्यासिनी समझा किन्तु मुसलमाने बताया कि वह एक क्षत्रिय बाला थी और योग्य पति न मिलनेके कारण उसने मुनि-व्रतोंको ग्रहण किया। इस घटनासे ब्राह्मणी और क्षत्रियाणी दोनों प्रकारकी सन्यासिनियोंका होना सिद्ध होता है।"

इसे हम अपवाद कह सकते हैं या जैन और बौद्ध संस्कृतिका प्रभाव। अर्थशास्त्रमें स्पष्ट लिखा है कि स्त्रीको सन्यास दिलाने वाला पुरुष दण्डनीय है। डा० आल्टेकरका कथन है कि २०० ई० पूर्व तक स्त्रीके लिए विवाह करना अनिवार्य हो चुका था। ऋषि कुणिककी पुत्री सुभ्रूने पिताके कहनेके बावजूद विवाह नहीं किया। वह तप किया करती थी। अन्त समयमें मालूम हुआ कि वह स्वर्ग नहीं जा सकती थी। निदान ऋषि शृंगवत्को उसके साथ विवाह करनेके लिए रजामन्द किया गया। सुभ्रू एक रात अपने पतिके पास रही। उसके बाद ही वह स्वर्गमें प्रवेश करनेकी अधिकारिणी बनी।

भारतमें विदेशी आक्रमण होनेके बाद हार और निराशाके वातावरणने सन्यासकी ओर झुकाव बढ़ा। जैन व बौद्ध परम्परा तथा कुछ उपनिषदोंमें इसका स्थान पहले ही प्रतिष्ठित था। आपस्तम्ब धर्मसूत्रमें सन्यासको अवैदिक प्रथा बताया गया था। अब इस मान्यतामें परिवर्तन हो गया। फिर तो विधवाएं भी सन्यास लेने लगीं। मध्यकालीन युगमें मुसलमानोंकी विजय और अत्याचारोंके रूपमें वैदिक परम्परा के अनुरूप मन्य मठ और

की अधिक संख्यामें अपनाने लगे। परिणामतः स्त्रियां भी इस ओर मुड़ीं।

## बौद्ध धर्म और भिक्षुणी

बौद्ध परम्परामें भिक्षुणियोंका विशेष स्थान रहा है। बौद्ध ग्रन्थोंसे पता चलता है कि शुरूमें भगवान बुद्ध इस पक्षमें न थे कि नारियां सन्यास ग्रहण करें। परन्तु अपने प्रिय शिष्य आनंद तथा माता समान मौसी गौतमीके अनुरोधसे उन्होंने इस विषयमें आज्ञा दे दी। बुद्ध स्त्रियोंको स्वभावतः निर्बल समझते थे। उनका अनुमान था कि संघमें महिलाओंके प्रवेशसे १०० वर्ष बाद लोग धार्मिक नियमोंकी उपेक्षा कर देंगे। बादमें क्या हुआ, इसकी चर्चामें न पड़ते हुए हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि भगवान् बुद्धकी उदारतासे कई स्त्रियोंको त्राण व संरक्षण मिला। उस समयकी प्रसिद्ध वेश्या अम्बपालीने भी दीक्षा ली और अर्हन् पदको प्राप्त किया। भगवान् बुद्धके जीवनमें ही ७३ स्त्रियोंने निर्वाण प्राप्त किया। बौद्ध भिक्षुणियोंके उद्गार थेरी गाथाओंमें संगृहीत भी हैं। बौद्ध धर्मको सार्वभौम धर्म बनानेवाले महान् सम्राट अशोककी पुत्री भिक्षुणी बनकर लंकामें धर्म प्रचारके उद्देश्यसे अपने भाईके साथ गई थी। कहते हैं कि आज भी बहुतसे बौद्ध देशोंमें स्त्रियोंका स्थान प्रतिष्ठित और आदर पूर्ण है। यह तो निश्चित है कि भगवान् बुद्ध चाहते थे कि स्त्रियोंके विषयमें बड़ी सावधानी और विवेकसे काम लिया जाए। इस विषयमें निम्न वचन बड़े मनोरञ्जक हैं —

आनन्द—'भगवन्! स्त्रियोंके विषयमें कैसे व्यवहार करें ?'
बुद्ध—'उन्हें देखो मत आनन्द !'
आनन्द—'परन्तु यदि उन्हें देखना पड़े तो ?'
बुद्ध—'बहुत सावधान रहो आनन्द !'

## जैन संस्कृति और साध्वी

जैन संस्कृतिका इतिहास इस बातको प्रमाणित करता है कि त्यागमार्ग अथवा मोक्ष मार्गके विषयमें नारीको जो अधिकार स्पष्ट और असंदिग्ध भाषामें बिना किसी हिचकिचाहटके यहां प्राप्त हुए, वे अन्यत्र इस रूपमें उसे नहीं मिले। इस विषयमें जैन परंपरा अपना सानी नहीं रखती। यहां तीर्थंकर उसे माना गया है जो चतुर्विध संघ अर्थात् साधु-साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप तीर्थकी स्थापना करे। जैन मान्यताके अनुसार अनन्त चौबीसी हो चुकी हैं। इतिहासकी वहां तक गति भी शक्य नहीं। वर्तमान अवसर्पिणीको ही लें तो पता चलता है कि प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेवके समयमें ही नारी जातिने भी त्यागका मार्ग ग्रहण किया था। भगवान् ऋषभदेवकी दोनों पुत्रियों—ब्राह्मी और सुन्दरीने दीक्षा ली थी। मोक्ष मार्गके द्वार स्त्रियोंके लिए उसी प्रकार खुले थे जैसेकी पुरुषोंके लिए। माता मरुदेवीको केवल ज्ञानकी प्राप्ति हुई थी। श्वेताम्बर परंपराके अनुसार १६ वें तीर्थंकर मल्लिनाथ थे। राजीमतिने अपने मनोनीत पति भगवान् नेमिनाथका पदानुसरण करते हुए प्रथम [illegible] [illegible] मार [illegible] नेमिनाथके म है

भ्यता और स्वावलम्बनसे अपने लक्ष्यकी प्राप्ति कर सकेंगी, ता विश्वास नहीं था। अतः साध्वियों या भिक्षुणियोंका ज्जा साधुओं अथवा भिक्षुओंसे कम था और उन्हें इनके धीन रहना पड़ता था। कई बार साध्वियोंकी रक्षाका उत्तर-यित्व साधुओंको उठाना पड़ता था। उनके स्वतन्त्र विहार र निवास पर कई प्रकारके प्रतिबंध थे ताकि दुराचारी और ष्ट लोग उन्हें परेशान न कर सकें। 'पुरुषस्य प्रधानत्वात्'के द्धांतको लेकर जैन व बौद्ध दोनों परंपराओंमें ऐसे नियम बने चिरकालकी दीक्षिता साध्वी अथवा भिक्षुणी भी तत्काल क्षित साधु या भिक्षुको वन्दना करे। कुछ ग्रन्थोंको पढ़नेका धिकार साध्वियोंको नहीं दिया गया था। दिगम्बर परंपरा यह बात अस्वीकारकी गई कि स्त्री मोक्ष जा सकती है। श्वेता-रोंने मल्लिको तीर्थंकर माना, मगर उसे एक आश्चर्य कहा ता। आचारांगमें साधुओंके आचारके जो नियम दिए गए वे भिक्षु व भिक्षुणी दोनोंके लिये समानरूपसे थे। टीकाकारों उनकी कठोरता व उग्रता देख उन्हें जिनकल्पीके लिए मान्य या और इधर यह माना गया कि स्त्री जिनकल्पी नहीं हो कती। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि व्यवहारमें स्त्रीको पुरुषकी पेक्षा निबल माना गया और परिणामस्वरूप त्यागमार्गमें भी का पद पुरुषकी अपेक्षा निम्न स्तर पर ही रखा गया।

## ज्ज्वल भविष्य

बीसवीं शताब्दी विश्वकी नारीके लिए स्वतंत्रता और समा-

देवभोजोंकी गाथा पढ़कर स्वयं इस तथ्यका समर्थन करेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

## पंजाबमें क्रांतिकारी जैनाचार्यका प्रादुर्भाव

राजनैतिक दृष्टिसे हर्षवर्धनके बाद भारतका अधः पतन प्रारंभ हो गया। मुसलमानोंकी विजय तथा उनके साम्राज्यकी नींव पड़ जानेके कारण भारतीय जीवनमें निराशा सी छा गई। यहां की संस्कृति और धार्मिक परम्पराको जबर्दस्त धक्के लगे और ऐसा मालूम होने लगा कि इस्लामकी आंधी भारतकी पुरातन परम्पराको जड़से उखाड़ देगी। किन्तु यहांकी संस्कृतिमें कुछ ऐसे स्थायी तत्त्व थे जो तूफान और बवंडरके बीच भी अपना मस्तक ऊंचा रखनेमें समर्थ थे। उन्होंने इस्लामके उप-योगी तत्त्वों को आत्मसात करना और इस्लामपर अपना प्रभाव डालना शुरू किया। परिणाम यह हुआ कि मुसलमानोंने भारत को ही अपना देश मान लिया और यहांकी मान्यताओंके प्रति आदर दिखाना आरम्भ किया। हिन्दूसमाजका एक भाग कई कारणोंसे इस्लाममें दीक्षित हो गया था। मगर वह अपनी संस्कृतिका परित्याग नहीं कर सका। और इस तरह दोनों संस्कृतियां एक दूसरेसे लेन-देनका नाता जोड़ फलती फूलती रहीं। धीरे-धीरे दोनोंके संगमसे एक नई संस्कृतिका भी उदय हुआ जिसमें दोनोंके सुन्दर तत्त्वों का सम्मिश्रण था

परन्तु इसके बाद मध्य युगकी स्थापनाके बाद एक नवीन समस्या

नष्ट हो गई। अंगरेजोंने भारत पर शासन तो शुरू किया मगर वे इस देशको अपना नहीं सके। साथही इन्होंने ईसाई धर्म और युरोपीय सभ्यताका जाल भारतमें ऐसे कौशलसे बिछाना शुरू कियाकि जनसाधारणको इस बातका अनुभव तक न हुआ कि उनकी परंपरा पर कुठाराघात किया जारहा है पश्चिमकी इस हवामें यह तूफानका शोरगुल न था। यह तो धीरे धीरे भारतकी जनताका स्पर्श कर रही थी और अपने स्पर्शसे एक विषका संचार कर रही थी। इस विषके चमत्कारी प्रभावके फलस्वरूप भारतका शिक्षित वर्ग यह आवाज उठाने लगा कि हमारे पूर्वज जंगली थे, हम अबतक असभ्य और बर्बर जीवन व्यतीत करते रहे हैं तथा हमारे धर्मशास्त्रोंमें पागल-प्रलाप व चंडूखानेकी गप्पोंके सिवाय कुछ नहीं धरा। भारतीय संस्कृतिका यह सौभाग्य था कि ऐसे समयमें अर्थात १९ वीं शताब्दीमें कुछ ऐसे महापुरुषोंका जन्म हुआ जिन्होंने हमें गाढ़ निद्रासे जगाकर भारतके गौरवमय अतीतकी झाँकी दिखाई और पश्चिमी सभ्यताके मायाजालका भण्डाफोड़ किया। इन महापुरुषोंमें राजाराममोहनराय, महर्षि दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द तथा जैनाचार्य श्री आत्मारामजीके नाम मुख्य हैं।

महान जैनाचार्य श्री आत्मारामजीका जन्म पंजाबमें हुआ था। जैनसमाजमें क्रान्ति पैदा करनेवाले आचार्योंमें उनका नाम प्रथम श्रेणीका है। इन्होंने अपने थोड़ेसे जीवनमें जितने महत्त्वपूर्ण कार्य किये, वे इतिहासमें अपना विशेष स्थान रखते हैं

शास्त्रोंका गहरा अध्ययन तथा मंथन कर वे इस परिणाम पर पहुंचे कि उस समयका साधुवर्ग तथा यति समुदाय शास्त्रोंकी अवहेलना कर रहे हैं। उन्होंने सत्यकी ध्वजा हाथमें लेकर निर्भय हो साहस पूर्वक सद्धर्मका प्रचार शुरू किया। रूढ़िवादियों ने उनका तीव्र विरोध किया मगर वे अपने मार्ग पर डटे रहे और आगमोंके आधार पर अपनी मान्यताओंका समर्थन करने लगे। उनकी विद्वत्ता, सत्यप्रियता, चरित्रकी उत्कृष्टता, प्रतिभा और निर्भीकतासे जैनसमाज आकृष्ट हुआ। हजारों लोग उन पर श्रद्धा करने लगे। विशेषतः पंजाबमें जागृतिकी नई लहर दौड़ गई। आचार्य प्रवरने जगह जगह जैन मन्दिर खड़े करवाए, सैकड़ों वर्षोंसे भण्डारोंके अंधकारपूर्ण गड्ढोंमें पड़े हुए ग्रन्थ रत्नों को प्रकाशकी किरणोंसे आलोकित किया, लोक भाषा हिन्दीमें विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थोंकी रचनाकी, साधु समाजके शिथिलाचारको दूर कर उन्हें सन्मार्गका दर्शन कराया, श्रावकवर्गको उनके कर्तव्य का परिज्ञान कराया और विद्याध्ययनकी ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया। श्री वीरचंद राघवजी गांधी जैसे प्रखर विद्वान तैय्यार कर अमेरिका और युरोपमें भी जैनधर्मका दिव्य सन्देश पहुंचाया। ऐसे प्रतापी आचार्यका उस समय पथ-प्रदर्शन न मिला होता तो यह कहना कठिन है कि आज जैन समाजकी क्या दशा होती। उसका अस्तित्व बड़े भारी खतरेमें पड़ जाता और संसारके विद्वज्जन विश्वको जैनधर्मकी देनसे अपरिचित रहते। पूज्य आत्मारामजीकी उत्कट अभिलाषा थी कि जैनधर्मकी शिक्षा

के लिए एक विशाल साध्वी समुदायकी आवश्यकता थी। कार्य बहुत बड़ा था और उसका भार अकेले उठाना पूर्ण न होने पर। फिर भी जैन समाजका सौभाग्य था कि ऐसे महान् आचार्यके पश्चात् इनके दूसरे महान् आत्माके रूपमें विश्ववल्लभ साध्वीजीका नेतृत्व मिला। जिसने समाजके लिए जो कार्य आज तक इन्होंने किया है, जैनसमाजमें ऐसा और कोई व्यक्ति नहीं कर सका।

## चरित्रनायिका दीक्षार्थी

ज्ञानभास्कर आचार्यवर श्री आत्मारामजीके सत् प्रयत्नोंसे पुरुष समाजका अज्ञान दूर हुआ और उन्होंने अपनेमें नए जीवनके संचारका अनुभव किया। किन्तु इसका स्थायी परिणाम तभी संभव था जब महिला समाज भी अपनी गाढ़ निद्राको छोड़ कर नवीन सूर्योदयकी रश्मियोंसे पुलकित हो। भारतीय इतिहासके विद्यार्थी जानते हैं कि वैदिक कालके बाद स्त्रियोंकी स्थिति पतनोन्मुख हो गई। भगवान् महावीर और भगवान् बुद्धने उनका उद्धार किया। मगर विदेशी आक्रमणोंके फलस्वरूप स्त्री जाति की दशा फिर बिगड़ गई। उनमें शिक्षाका प्रचार न रहा, परदेकी चार दीवार ही उनकी दुनिया थी, अज्ञान उनका शृंगार था और तरह-तरहके अंधविश्वास उनके जीवन धर्म थे। उनमें नूतन जीवन धारा प्रवाहित करनेके लिए एक स्त्री-नायिकाकी परम आवश्यकता थी। इन्होंने इस अभावको भी पूर्ण कर दिया

जैन-महिला जातिके सौभाग्यसे अंबालेमें एक जैन श्रावकके घर बीबीभाईका जन्म हुआ। यही जीवाबाई कुछ वर्षों बाद वन्दनीया साध्वी देवश्रीजी बनी। यह उनका ही प्रताप है कि आज जैन समाजका साध्वी तीर्थ और श्राविका तीर्थ अपने गौरव और महत्त्वको पुनः स्थापित करनेमें समर्थ हुआ है।

## चरित्रकी विशेषताएँ

चरित्रनायिकाकी जीवन घटनाओंका यहां उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं। उनका विस्तृत वर्णन इस पुस्तकमें किया गया है। इन्हें पढ़कर पाठक अनुभव करेंगे कि वे कितनी विदुषी, धीर, गम्भीर, सहनशील, दृढ प्रतिज्ञ, निस्पृह, तपस्विनी और कष्ट-सहिष्णु थीं। पंजाबमें जैन महिला समाजके लिए उनका जीवन एक नए युगका श्रीगणेश करता है। इस युगमें पंजाबमें पहली बार जिस पंजाबी देवीने जैनधर्म द्वारा उपदिष्ट त्यागमार्ग को ग्रहण किया, वे हमारी चरित्रनायिका ही थीं। बाल्यावस्था से ही उनका स्नेहसिक्त हृदय अपने प्रेम और सहानुभूतिके क्षेत्रको प्राणी-मात्र तक विस्तृत कर देनेके लिए उत्सुक था। अपने खिलौने और मिष्टान्नके पदार्थोंको सहेलियोंमें बाँट देना, किसी भी याचकको घरके द्वारसे निराश न लौटने देना, एक निर्धना और साधनहीना बालाको सर्दीमें ठिठुरते देख अपने ऊनी कपड़े उसे पहिना देना और उसके फटे पुराने चीथड़े स्वयं पहिन लेना इत्यादि घटनाएँ जिस कन्याके बाल्यकालमें घटित हुई हों, उसका

भविष्य कितना उज्ज्वल और महान है, इसका अनुमान मनो-विज्ञान शास्त्री सहज ही लगा सकते हैं।

निठुर भाग्यने ११ वर्षोंका कठोर दाम्पत्यको यह अवसर भी न दिया कि वह अपने पतिका दर्शन भी कर सके। विवाह संस्कार सम्पन्न हो जानेके बावजूद हमारी चरित-नायिका बाल ब्रह्मचारिणी थी, इसमें सन्देह नहीं। दीक्षा लेनेकी इनकी उत्कट अभिलाषा थी। किन्तु और बाधाएं चीनकी दीवार बनकर इन्हें अपने इस निश्चयसे विचलित करनेके लिए आ खड़ी हुईं। आचार्य आत्मारामजीका यह सिद्धांत था कि वे संरक्षकोंकी आज्ञाके बिना किसीको दीक्षा न देते थे। इधर जीवीबाईके ससुराल वाले इन्हें गृहत्यागकी इजाजत ही नहीं देते थे। वे इनके रास्तेमें रुकावटें डालने लगे, धमकियां दी गईं और बल-प्रयोगको भी अनुचित नहीं समझा गया। जीवीबाई बड़े अस-मंजसमें थी किन्तु वीरहृदय बाला अपने हृदयसे तिलमात्र भी विचलित न हुई। दीक्षा लेनेमें एक एक क्षणका विलम्ब उसके लिए भारस्वरूप था। वह इस सत्यको भली-भांति समझती थी कि जिस व्यक्तिकी मृत्युके साथ मित्रता है, या जो मृत्युसे दूर भाग जानेका सामर्थ्य रखता है, अथवा जो यह जानता है कि मैं कभी मरूंगा नहीं; वह इस बातकी अभिलाषा रखता है कि कल होगा। अत वह स्थानांगमें वर्णित ये भावनाएं करने लगी कि 'मैं कब थोड़े या बहुत परिग्रहका त्याग करूं, मैं कब प्रव्रजिता होऊं और कब [illegible] करूं'। इसके बाद उन्होंने

मार्गको ही अपनी शरण समझा और आत्म-शुद्धिके लिए तप शुरु कर दिया। ध्रुव निश्चयके सम्मुख बाधाएं कब तक ठहर सकती हैं ? अन्तमें ओसीयाई इजाजत हासिल करनेमें सफल हुईं और जैनाचार्य श्रीमद् विजय वल्लभ सूरिश्वरजीके कर कमलों से वे त्याग मार्गका पथिक बननेमें सफल मनोरथ हुईं। अब उनका नाम देवश्रीजी रखा गया।

श्री देवश्रीजी अपने कर्त्तव्यको भली-भांति समझती थी। उन्होंने विद्याभ्यासमें पूरा परिश्रम किया। व्रतोंके पालनमें वे बहुत दृढ़ थी। वे जानती थीं कि सेवाका मार्ग अपनाने वालोंको अपना आचार कितना शुद्ध रखना पड़ता है। हिन्दी साहित्यके विख्यातनामा उपन्यास और कहानी लेखक मुंशी प्रेमचन्दजी एक स्थान पर लिखते हैं, "जाति सेवकोंसे सभी दृढ़ताकी आशा रखते हैं। सभी उन्हें आदर्श पर बलिदान होते देखना चाहते हैं। सार्वजनिक क्षेत्रमें आते ही उनके गुणोंकी परीक्षा अति कठोर नियमोंसे होने लगती है और दोषोंकी सूक्ष्म नियमोंसे। पहले सिरेका कुचरित्र मनुष्य भी साधु वेश रखनेवालोंसे ऊंचे आदर्श पर चलनेकी आशा रखता है और उन्हें आदर्शसे गिरते देखकर उनका तिरस्कार करनेमें संकोच नहीं करता।" हमारी चरित्र-नायिका इस कसौटी पर खरे हुए सोनेकी तरह खरी उतरी, यह निश्चित है

## शिक्षा प्रेम और 'गुरुकुल' की स्थापना

इनके [illegible] स्थापनाके कार्यको

बहुत प्रोत्साहन दिया था। कोई और साध्वी इस क्षेत्रमें वैसा काम नहीं कर सकी। इस विषयमें उन्होंने आचार्य प्रवर श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजीका पूरा पूरा हाथ बटाया। जो जो संस्थाएं आचार्यश्रीजी की प्रेरणासे स्थापित हुई, उन सबका समृद्ध सींचन श्रीदेवश्रीजीने पूरे प्रयत्नसे किया। लुधियाना व जंडियालामें आपने कन्या पाठशालाएं खुलवाई। महावीर विद्यालय बंबईको सहायता भिजवाई। मन्दिरों, उपाश्रयों और जीवदया आदिके फंडमें जो दान भिजवाया, वह तो अलग था ही।

मगर आत्मानन्द जैन गुरुकुल पंजाब गुजरांवाला आपकी कृपादृष्टिका विशेष पात्र रहा है। गुरुकुलको आर्थिक सहायता भिजवाना श्रीदेवश्रीजीके जीवनका एक मिशन था। यह स्वाभाविक था। स्वर्गीय गुरुदेव आत्मारामजीकी अन्तिम अभिलाषा को पूर्ण करनेका गुरुकुल एक प्रतीक था, उनके पट्टधर पंजाब-केसरी आचार्य श्री वल्लभविजयजीके करकमलोंसे इसकी स्थापना हुई थी, गुरुकुलके कार्यका श्रीगणेश वसंतपंचमीके दिन हुआ था और इसी शुभ दिन हमारी चरित्र-नायिकाकी आर्या बनने की भावना पूरी हुई थी। शिक्षा प्रसारमें आपकी विशेष रुचि भी थी।

मुझे गुरुकुलका विद्यार्थी, अध्यापक और अधिकारी रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं इस बातको अच्छी तरह जानता हूं कि श्रीदेवश्रीजीने किस उत्साह, लगन और तत्परतासे गुरुकुलके पौधेको अमृतरूपी जल प्रदान किया है वे जहां जहां जाती,

श्राविक और श्राविकाओंको गुरुकुलके लिए पक्की धारी और फुटकर सहायता की प्रेरणा करती। उनके व्याख्यानमें गुरुकुल सहायताका अकसर वर्णन आता। जो बहन-भाई दर्शनार्थ जाते, गुरुकुलके प्रति उनके कर्त्तव्यका उन्हें भान कराया जाता। विद्यार्थी जीवनमें मुझे तथा अन्य विद्यार्थियोंको श्रीदेवश्रीजीके प्रति इसलिए भी श्रद्धा थी कि उनके मातृ-स्नेहसे सिक्त उपदेशसे श्राविकाएं हमारे लिए गुरुकुलमें मिठाइयां भेजा करती थीं। कभी स्टेशनरी बांटी जाती, कभी धार्मिक पुस्तकें तथा कभी अन्य चीजें। जब कभी आप गुरुकुल पधारतीं, हमें समाज और देशकी सेवा करनेके लिए तय्यार होनेकी प्रेरणा देतीं और कहती कि धर्मको अपने जीवनमें विशेष स्थान दो तथा उत्कृष्ट चरित्रके सेवक बनो। अध्यापक और अधिकारी बननेके बाद मुझे मालूम हुआ कि किस प्रकार हजारों रुपएकी सहायता श्रीदेवश्री के उपदेशसे ही गुरुकुलको पहुंचती रही है। उस समय मैंने अपने हृदयमें यह भी अनुभव किया कि आपकी भिजवाई हुई सहायताको केवल चीजों या रुपयोंकी गिनतीमें आंकना कोई महत्व नहीं रखता। गुरुकुलके प्रति आपके प्रभावशाली उपदेशोंसे समाजमें जो वातावरण पैदा हुआ और उसे यह अहसास हुआ कि हमें अपने बच्चोंको गुरुकुल प्रणाली से शिक्षा देनेकी कितनी बडी भारी आवश्यकता है, वही आपकी गुरु कुलके लिए सची सेवा है। इतिहास उसे विस्मृत नहीं कर सकेगा।

## स्वाध्याय तल्लीनता

"त्याग, तपश्चर्या, आचारके नियमोंके पालनकी तत्परता, स्वभावकी मृदुलता, अद्भुत सहनशीलता, नम्रता और सरलता आदि गुणोंसे आपका चरित्र उज्ज्वल और अलंकृत था। आपके कंधो पर जिम्मेवारीका भार भी कम न था। गुरुकुलको हर संभव सहायता पहुंचाना तो आपका जीवन मन्त्र ही था। इतना होते हुए भी आपमें स्वाध्यायकी लगन इतनी उत्कट थी कि उसका उदाहरण अन्यत्र कम मिलता है। उनके दर्शनार्थ जानेवाले पुरुष, स्त्री, बच्चे सब जानते हैं कि वे सदा अपने हाथमें कोई न कोई ऐसे ग्रन्थ रखती थीं जिनका परिशीलन करना वो अपना कर्तव्य समझती थीं। कार्यको अधिकता, रुग्णावस्था, विहार, उत्सव या पर्व उनके स्वाध्यायमें बाधा न डाल सकते थे। 'साधु-साध्वीको क्षण भर भी प्रमाद न करना चाहिए', भगवान् महावीरके इस उपदेशका वन्दनीया साध्वी जी मूर्तरूप थीं उनके चरित्रकी इस विशेषतासे सभी प्रभावित थे।"

## कतिपय संस्मरण

चरित्र-नायिकाके दर्शन करने, उनका उपदेश सुनने, उनसे शंका समाधान तथा चर्चा करनेका मुझे कई बार अवसर मिला था। मैं निस्संकोच होकर कह सकता हूं कि उनके व्याख्यान की शैली इतनी मधुर, सरल, आकर्षक और विद्वत्तापूर्ण थी कि

श्रोतागणके हृदय पर उनकी बातका सीधा प्रभाव पड़ता था। मैं
कई मुनिराजोंके भी व्याख्यान सुने हैं। किन्तु श्रीदेवश्रीजी
व्याख्यानमें जो आनन्द आता था, जो प्राप्ति होती थी वह कु
स्थानोंको छोड़ अन्यत्र संभव न थी। एकबार उन्होंने अप
व्याख्यानमें आचार्य हेमचन्द्रजी द्वारा वर्णित श्रावकोंके गुणोंमें
'न्याय संपन्न विभवः' की ऐसी सुन्दर व्याख्याकी कि मुझे समा
वाद विस्मृत सा हो गया। मैंने अनुभव किया कि यदि संस
का प्रत्येक व्यक्ति केवल इतना ही देखले कि मैं जो कुछ कमा
हूं वह न्याय और सत्यके आधार पर है, तो विश्वमें स्थायी शां
की स्थापना हो जाए। पूंजी व श्रमके झगड़े, उपनिवेशों औ
साम्राज्योंके बखेड़े तथा विश्वयुद्धकी प्रलयकारी भयंकरता काप
होनेमें देर नहीं लगे।

एकबार आप बीकानेरमें विराजमान थीं। गुरुदेवका हीर
जयंती महोत्सव मनाया जा रहा था और मैं भाषणके लिए नि
मित था। गुरुकुलकी भजन मंडलीके विद्यार्थी भी मेरे साथ थे
एक दिन दो पहरके समय आपने मुझे बुलवाया और कहा
गुरुकुलमें सहायता देनेवालोंके नाम लिखलो। मैं उस सम
मित्रोंके साथ बीकानेरके कुछ सेठोंके महल देखनेके लिए ज
की तैयारी कर रहा था। सुना था कि वे अजायबघरसे क
महत्त्व नहीं रखते। अतः मैंने कामको टालनेकी कोशिशकी औ
कहा कि कल सुबह लिख लूंगा। आप गंभीरता, विश्वास औ
प्रेमपूर्वक कहने लगीं "कल तक तो कई श्राविकाओंके और ना

गया। स्नेहपूर्वक समझाने लगी, 'तुम पढ़े लिखे युवक यह भी नहीं देखते कि माता पिता तुम्हारे लिए कितने व्याकुल रहते हैं ? रुग्णावस्थामें उनकी चिंताको बढ़ाना क्या तुम्हारे लिए उचित था ?' मैंने कहा 'पत्र लिखनेका समय नहीं मिला'।' उन्होंने फरमाया, 'क्या दो मिनट भी नहीं निकाल सके ? इतना ही तो लिखना था कि सकुशल हूं'।" उनके इन शब्दोंका मुझपर बहुत प्रभाव पड़ा और अपने आलस्य या उपेक्षाभाव पर खेद भी हुआ। हमारी चरित्रनायिकाके गुणोंका वर्णन करना कोई सरल काम नहीं। उनकी हरेक प्रवृत्ति साधक और शिक्षा लेनेवालेको सजीव प्रेरणा देती है।

## प्रस्तावना लिखनेके विषयमें

इस पुस्तकके लेखक मेरे परम सुहृद् श्री ऋषभचन्दजी डागा ने जब मुझे पत्र लिखा कि आप इसकी प्रस्तावना लिखकर भेजें तो मैं असमञ्जसमें पड़ गया। मुझे महसूस हुआ कि यह कार्य मेरी योग्यताके बाहिरका है। कुछ क्षण बाद विचार आया कि यह तो मेरा कर्तव्य है। स्वर्गीया गुरुणीजीके प्रति मुझे श्रद्धाञ्जली बिना किसीकी प्रेरणाके ही अर्पित करनी चाहिए थी। इसमें योग्यताका क्या प्रश्न ? एक ही श्रीसंघका सदस्य होनेके नाते, गुरु कुलके विद्यार्थी अध्यापक और [illegible] रहनेके सम्बन्धसे, शिक्षा[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]के गुरु [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible]उनकी

गया। स्नेहपूर्वक समझाने लगीं, 'तुम पढ़े लिखे युवक यह भी नहीं देखते कि माता पिता तुम्हारे लिए कितने व्याकुल रहते हैं ? रुग्णावस्थामें उनकी चिंताको बढ़ाना क्या तुम्हारे लिए उचित था ?' मैंने कहा 'पत्र लिखनेका समय नहीं मिला'।' उन्होंने फरमाया, 'क्या दो मिनट भी नहीं निकाल सके ? इतना ही तो लिखना था कि सकुशल हूं।'' उनके इन शब्दोंका मुझपर बहुत प्रभाव पड़ा और अपने आलस्य या उपेक्षाभाव पर खेद भी हुआ। हमारी चरित्रनायिकाके गुणोंका वर्णन करना कोई सरल काम नहीं। उनकी दरेक प्रवृत्ति साधक और शिक्षा लेनेवालेको सजीव प्रेरणा देती है।

## प्रस्तावना लिखनेके विषयमें

इस पुस्तकके लेखक मेरे परम सुहृद् श्री ऋषभचन्दजी डागा ने जब मुझे पत्र लिखा कि आप इसकी प्रस्तावना लिखकर भेजें तो मैं असमन्जसमें पड़ गया। मुझे महसूस हुआ कि यह कार्य मेरी योग्यताके बाहिरका है। कुछ क्षण बाद विचार आया कि यह तो मेरा कर्तव्य है। स्वर्गीया गुरुणीजीके प्रति मुझे श्रद्धांजली बिना किसीकी प्रेरणाके ही अर्पित करनी चाहिए थी। इसमें योग्यताका क्या प्रश्न ? पञ्जाब श्रीसंघका सदस्य होनेके नाते, गुरुकुलके विद्यार्थी, अध्यापक और अधिकारी रहनेके सम्बन्धसे, शिक्षाक्षेत्रमें कार्य करनेके कारण तथा चरित्र-नायिकाके मुझ पर व्यक्तिगत स्नेहके आधार पर यदि मैं अपनी श्रद्धाके फूल उनकी

रहनेके बावजूद सामाजिक कार्योंमें बढ़ चढ़कर भाग लेते रहे हैं। कलकत्तेकी जैन संस्थाओंसे उनका पूरा पूरा सम्बन्ध और सहयोग रहा है। कई संस्थाओंके वे पदाधिकारी रहे हैं और निस्वार्थ भावसे समाज सेवाका कार्य करते रहे हैं। कुछ समय तक आपने जैन समाजके बुलेटिनोंका सम्पादन भी योग्यता पूर्वक किया है। व्यवसायमें संलग्न रहते हुए ही उन्होंने प्रवर्तिनीजीका विस्तृत सचित्र और सुन्दर जीवन चरित्र लिखनेका सफल साहस किया है इसके लिए पाठक उन्हें बधाई देंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। मैं चाहता हूं कि डागाजीकी समाज सेवाकी भावना उत्तरोत्तर बढ़ती जाए और समाजको इससे लाभान्वित होनेके अवसर मिलते रहें।"

पुस्तक प्रारम्भ करनेके बाद बिना समाप्त किए रखना कठिन है। मुझे आशा है कि पाठक पाठिकाएं एक महान् आर्याके उज्वल चरित्रसे योग्य प्रेरणा प्राप्त करेंगी। यह उनकी उन्नतिमें बहुत सहायक होगा।

जैनाश्रम
हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस | पृथ्वीराज जैन, एम० ए०, शास्त्री
[ १२ दिसम्बर, १९५० ]

रूपसे आकृष्ट करते हैं, और उनके जीवन-चरित्र हमारी जीवन-नौकाको भव-सागरसे पार उतारनेका मार्ग-दर्शन करनेके लिए प्रकाश-स्तंभ-तुल्य सिद्ध होते हैं। ऐसे महापुरुषों एवं महासतियोंके जीवन-चरित्रोंका अध्ययन तथा मनन करना एवं उनके आदर्श गुणोंको अपने जीवनमें उतारनेका प्रयत्न करना, प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है।

यों तो जैन-साहित्यमें सती-साध्वियोंके जीवन-चरित्रोंका अभाव नहीं, परन्तु वे अधिकांशतः ऐतिहासिक परिधिसे परे, पौराणिक, हैं। पौराणिक कथाओं की अपेक्षा ऐतिहासिक इतिवृत्तों का मूल्य अधिक होता है। यह जानते हुए भी किसी ने अद्यावधि ध्यान नहीं दिया। परन्तु इस ओर वर्तमान-कालिक सती-साध्वियोंके जीवन-चरित्रोंका प्रभाव एवं आकर्षण स्वाभाविकतया अधिक होता है, अतएव इनका जैन-साहित्यमें अभाव होना, खलने जैसा लगता है। इस अभावको लक्ष्य करके भाई ऋषभचन्दजी डागाने इस 'आदर्श प्रवर्तिनी' नामक सुन्दर ग्रन्थकी रचना की है। उनकी भावना एवं प्रयत्न अभिनन्दनीय एवं अनुकरणीय हैं।

न्यायाम्भोनिधि श्रीमद्विजयानन्द सूरीश्वरजी (उपनाम आत्मारामजी) महाराज जैन-शासनरूपी आकाशमें एक अत्यन्त जाज्वल्यमान नक्षत्र हो चुके हैं। उनके पट्टधर श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज भी वर्तमान समयके एक महान् शिक्षा-प्रचारक, प्रखर विद्वान उत्तम वक्ता एवं [illegible]

साधु हैं। इन महान् आचार्यकी प्रथम शिष्या पूज्या प्रवर्त्तिनी साध्वी श्री देवश्रीजी महाराजका यह जीवन-चरित्र प्रत्येक व्यक्ति के लिए पठनीय, मननीय एवं अनुकरणीय है।

भाई ऋषभचन्द्जी डागा कुशल व्यवसायी, उत्साही कार्य-कर्त्ता और सुयोग्य वक्ता होनेके साथ-साथ लेखक एवं विचारक भी हैं। इनकी रचनाओंको जैन-समाजने विशेष आदरपूर्वक अपनाया है। इनकी यह रचना पिछली सभी रचनाओंसे अधिक सुन्दर एवं महत्त्वपूर्ण है। मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि इस ग्रन्थका भी समुचित आदर होगा, और विद्वान् तथा धनिक वर्ग अन्यान्य जैन महापुरुषों तथा सतियोंके जीवन-चरित्र प्रकाशित करके जैन-साहित्यके इस वश्यक अङ्गकी पूर्ति करेंगे।

रतनगढ़ (राजस्थान)
ता० १६-१-५१

मेहता शिखरचन्द्र कोचर,
बी० ए०, एल० एल० बी०,
साहित्य-शिरोमणि, साहित्याचार्य,
सिविल जज,

# एक दृष्टि

महापुरुषोंका जीवन ही जगतके प्राणियोंको अज्ञानरूपी
अंधकारसे बचाकर सत्य मार्गरूपी प्रकाश पर लाता है। इसी-
लिए संसारके लोग इनकी जीवन-गाथाका अनुकरण कर अपनी
आत्माका कल्याण करते हैं। ऐसे महापुरुषोंमें बीसवी सदीके
श्रेष्ठतम महापुरुष श्रीमद् विजयानंदसूरीश्वरजी (आत्मारामजी)
महाराज हुए हैं जिन्होंने सत्य ज्ञान प्राप्तकर उसका लाभ समस्त
जगतको तथा मुख्यतः अपनी मातृभूमि पंजाबको देनेके लिए निर-
न्तर प्रयत्न किया। इनकी सदा यह मान्यता रही कि ज्ञानशून्य क्रिया
रूढ़ी विचारके सदृश होनेके कारण टिक नहीं सकती। अतएव
[illegible]
[illegible]

आते हुए दारुण आक्रमणोंसे अपनी और समाजकी रक्षाकर प्रभु महावीरका संदेश समस्त संसारमें पहुंचा सकें और अन्य लोगों पर भी जैनधर्मकी छाप डाल सकें। आपकी इस अभिलाषाको पूर्ण करने इन्हींके लाडले श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजने स्थान-स्थान पर सरस्वती मंदिर बनवाये और इन्हीं स्वर्गीय गुरुदेवकी अभिलाषा पूर्ण करनेमें अपने समस्त जीवनकी बाजी लगा रक्खी है। इनके साथ साथ इनके शिष्य-प्रशिष्योंने भी अपनी शक्तिके अनुसार इस कार्यमें पूरा पूरा हाथ बटाया। इनमें आपकी प्रथम शिष्या पूज्या प्रवर्तिनी साध्वी श्रीदेवश्रीजी महाराज ने अपने चरित्र-बलके प्रभावसे आप द्वारा उठाये गये इन समस्त अनुष्ठानोंमें मदद देने जीवन पर्यन्त एड़ीसे लगाकर चोटी तक जोर लगाया।

जिन मंदिर, उपाश्रय, साहित्य प्रकाशन, पाठशाला, विद्यालय, गुरुकुल, कॉलेज आदि संस्थाओंको अपने सदुपदेशों द्वारा प्रचुर मात्रामें आर्थिक सहायता दिलवाई। इतना ही नहीं, श्री आत्मानंद जैन गुरुकुल गुजरांवाला जैसी केवल एक संस्था ही को साठ सत्तर हजार रुपयोंकी सहायता दिलाकर अपने विद्याप्रेमका परिचय दिया। ऐसी महान् आत्माकी यह जीवन गाथा लिखकर भाई श्री हरखचन्द्र डागाने इतिहासकी सुन्दर सेवाकी है।

पुस्तकको सर्वांग सुन्दर बनानेके लेखकने भरसक प्रयत्न किया है। आपका साहित्य, चित्रोंका चुनाव मनको आकर्षित करता है

प्रवर्तिनीजीके जीवन सम्बन्धी घटनाओंका चित्रण अतिशयोक्तिसे परे रखकर व आद्योपान्त समान रूपसे रसधारा बहाकर अपनी कुशलताका भी परिचय दिया है।

मेरी दृष्टिमें अढाई सौ पृष्ठकी इतनी बड़ी पुस्तकके लिए जो समय, शक्ति और द्रव्य खर्च हुआ है, वह कई गुणा सफल हुआ है।

जैन-जैनेतर स्त्री-पुरुष सभी इस पुस्तकको पढ़ कर लाभ उठा सकते हैं।

भाई डागाजी बचपन ही से मेरे साथी रहे हैं। मैं भलिभांति जानता हूं कि इन्होंने व्यवसाय, धर्म, समाजके क्षेत्रमें केवल अपने बल पर उन्नति प्राप्त की है।

इनमें मौलिक विचार, तीक्ष्ण बुद्धि, अदम्य उत्साह, कार्य करने की क्षमता तथा धर्मके प्रति रुचि और समाज सेवाकी लगन वर्षों से चली आरही है।

मैं विश्वास करता हूं कि इनकी पूर्व रचनाओंकी भांति समाजमें इस पुस्तकका स्थान भी पूर्ण आदरणीय होगा। शासन देवसे प्रार्थना है कि इनकी यह प्रवृत्ति साहित्य सेवामें उत्तरोत्तर बढ़ती रहे।

१०, नारायणप्रसाद बाबू लेन
कलकत्ता।
ता. [illegible]

सत्पुरुष चरणेच्छु
राजवैद्य जसवंत राय जैन

लेखक

वर्तमान समयके युवक-युवतियां अधिकतर बेकार उपन्यास, नाटक तथा अश्लील पुस्तकोंको पढ़नेमें अपने समयका दुरुपयोग किया करते हैं। परन्तु इसके बदले महान् आत्माओंके अत्युपयोगी जीवनचरित्रोंसे अंकित पुस्तकोंका मनन करनेमें अपने समय का सदुपयोग करें तो उनके लिए अत्यन्त लाभप्रद हो सकता है।

जिस पुस्तकको पढ़ते समय अनीतिको अनादर सुनीतिको आदर, सद्ज्ञानको सन्मान, प्राणीमात्रके प्रति समभाव और धर्म के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती हो तथा भाई बहनके सन्मुख पढ़नेमें किंचित् मात्र भी संकोच व क्षोभ उत्पन्न न होता हो, ऐसी पुस्तक ही समाज व राष्ट्रके लिए उपयोगी हो सकती है। प्रस्तुत पुस्तक भी इसी श्रेणीमें है। इसमें एक ऐसी महान् आत्माका जीवनवृत्त है जिसने अपनी अनेक शिष्या-प्रशिष्याओंके संघाड़ेका सुसंचालन कर अपने आपको प्रवर्तिनी पदके योग्य प्रमाणित कर दिया था। तथा जिसने जीवन भर देश-काल-भावके अनुसार शुद्ध संयमका पालन कर जनताके समक्ष एक महान् आदर्श उपस्थित किया। ऐसी शान्त-मूर्ति, परम विदुषी, बाल-ब्रह्मचारिणी आदर्श प्रवर्तिनी आर्या (साध्वी) श्री देवश्रीजी महाराजके जीवन-गाथासे अंकित यह "आदर्श प्रवर्तिनी" नामक पुस्तक श्री सम्मेद जैन ग्रन्थमालाको पुष्प सं० ३ के रूपमें [illegible] पाठिकाओंके समक्ष उपस्थित [illegible]

[illegible]

श्रीसमुद्रविजयजी महाराजका आभार माने बिना नहीं रह सकता जिन्होंने हर समय चरित्रनायिकाकी जीवन-सम्बन्धी अनेक घटनाओंका खुलासा करनेमें हर समय अपनी उदारताका परिचय दिया तथा सम्मति प्रदानकर पूर्ण उत्साहित किया।

श्रीआत्मानन्द जैन गुरुकुल गुजरांवालाके भूतपूर्व विद्यार्थी, शिक्षक व अधिकारी, श्रीजैन पाठशाला बीकानेरके भूतपूर्व प्रधान-अध्यापक तथा 'श्रमण' मासिक पत्र बनारसके सम्पादक भाई श्री पृथ्वीराजजी जैन एम० ए०, शास्त्रीने अनेक कार्योंमें व्यस्त रहने पर भी मेरे अनुरोधको स्वीकार कर विस्तृत रूपसे प्रस्तावना लिख भेजनेका जो कष्ट उठाया तथा भविष्यके लिए मुझे उत्साहित किया एतदर्थ उनका हृदयसे आभार मानता हूं।

श्री मेहता शिखरचन्द्रजी कोचर बी० ए० एल० एल० बी०, साहित्य शिरोमणि, साहित्याचार्य, सिविल जज रतनगढ़का आभार माने बिना भी नहीं रह सकता जिन्होंने किंचित् वक्तव्य लिखकर चरित्रकी शोभा बढ़ानेमें योगदान दिया।

राजवैद्य श्री जसवंतरायजी जैनका भी आभार मानता हूं जिन्होंने इस पुस्तक पर 'एक दृष्टि' लिखकर उत्साहित किया।

चरित्रनायिकाकी सुशिष्या पूज्या साध्वी श्रीहेमश्रीजी महाराजका भी हृदयसे आभार मानता हूं जिन्होंने चरित्रनायिकाके जीवन सम्बन्धी अनेक घटनाओंको संकलन कर मुझे दिया तथा अपने सुपदेश द्वारा इस पुस्तकके प्रकाशनमें मैं अधिक सहयोग दिलाया।

जिन लोगोंने पुस्तक प्रकाशनमें आर्थिक सहयोग देकर अपनी लक्ष्मीका सदुपयोग किया है वे भी प्रशंसाके पात्र हैं। जिनकी सूचि अन्यत्र प्रकाशित की गई है।

साध्वी श्रीचन्द्रश्रीजीका भी आभार मानता हूं जिन्होंने चरित्रनायिकाके जीवन सम्बन्धी अनेक घटनाओंकी सूची गुजराती भाषामें उतार कर दी।

'आबू' तथा 'मेरी मेवाड़-यात्रा' नामकी पुस्तकोंसे साधारण सहयोग प्राप्त करनेके नाते उनके लेखकोंका भी हृदयसे आभार मानता हूं।

जीवन-चरित्र लिखते समय—चरित्रनायिकाके जीवन संबंधी घटनाओंको चित्रित करनेमें पूर्णरूपसे सावधानी रक्खी गई है। फिर भी छद्मस्थ ही ऐसा जो सर्वज्ञ होनेका दावा करे? यदि कहीं भाव-भाषा सम्बन्धी अनौचित्य दिखाई पड़े तो उसका उत्तरदायित्व लेखक होनेके नाते मुझ पर है।

इस पुस्तकमें जितने भी रेखाचित्र या रंगीन चित्र दिये गये हैं वे प्राय: समस्त शान्तिनिकेतनके सुप्रसिद्ध चित्रकार जैन श्रावक श्री हीराचन्दजी दुगड़के सुपुत्र श्री इन्द्र दुगड़ द्वारा बनाये गये हैं। उनके प्रति हमें गौरव होना चाहिये कि चित्रकला जगतमें वे जैन समाजकी एक निधिके रूपमें हैं। उनके विषयमें हमारे राष्ट्रपति महोदय श्री राजेन्द्रप्रसादजी तकने प्रशंसा की है।

## कतिपय स्पष्टीकरण

प्रस्तुत चरित्रमें वर्तमानाचार्य श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी

महाराजको आचार्य शब्दसे संज्ञित किया है जबकि उस समय वे मुनि पद पर प्रतिष्ठित थे। यह मात्र उनके वर्तमान पदको लक्ष्य में रखकर ही व्यवहृत किया गया। ऐसा न करने पर व्यवहार दृष्टिसे योग्य नहीं लगता।

इस पुस्तकके पृष्ठ ६६ में यह लिखा है :

"पर उनकी अधिकांश स्त्रियां अभीतक वैष्णवधर्मको अंगीकार किए हुई थी।"

वास्तवमें बात यह थी कि पंजाबमें अग्रवाल अधिकतर वैष्णव हैं पर मालेरकोटलाके अग्रवाल भाई स्थानकवासियोंके संसर्गसे स्थानकवासी हो चुके थे। तत्पश्चात् न्यायाम्भोनिधि जैनाचार्य श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वरजी महाराजके उपदेशसे सबके सब संवेगी ( मन्दिर आम्नाय ) बने। परन्तु उन सबका व्यवहार वैष्णवों के साथ होनेसे कई महिलाएं वैष्णवधर्मका पालन करती थीं। जिन्हें प्रवर्तिनीजी जैसी दिव्य विभूतिके ब्रह्मचर्यका अपूर्व तेज, दुष्कर तप, प्रबल त्याग, निस्पृहता और निस्पृहता आदि गुणों ने जैनधर्मकी ओर आकर्षित कर लिया।

पृष्ठ १६०-१६१ में 'पुण्य भूमि लाहौर' नामसे प्रकरण दिया है उसमें प्रसंगोपात्त जो बात चली आई वही दी गई है। बाकी इस विषयकी अधिक जानकारीके लिए पाठकोंको लाहौरमें प्रतिष्ठा महोत्सव तथा आदर्श जीवन और युगवीर आचार्य नामक पुस्तकें देखनी चाहिए।

पृष्ठ २०६ में --"गुजरांवाला शहरके बाहर एक बंगलेमें विराजमान

थे। पंजाब प्रान्तकी समस्त प्रजा आपके स्वागतको उपस्थित थी।"

चूंकि घटना क्रम यह था कि श्री सिद्धाचलजी आदि तीर्थोंकी यात्रा करते हुए—काठियावाड़, महाराष्ट्र, गुजरात, मारवाड़ आदि प्रान्तोंमें महान उपकार करते हुए लगभग १२-१३ वर्ष पश्चात् गुरुदेव पुनः पंजाब पधारे। इसलिए पंजाबियोंको उत्साह बहुत था हजारों पंजाबियोंके समूहके समूह गुरुदेवके स्वागतार्थ आये थे और अपने उपकारीके लिए इस प्रकार भक्तिरसमें ओत-प्रोत हो कर उमड़ पड़ना भक्तवर्गके लिए स्वाभाविक था।

पृष्ठ २०७ पंक्ति १२, चित्तश्री की बड़ी दीक्षाके विषयमें चरणश्रीजी व चित्तश्रीजीकी बड़ी दीक्षा वि संवत् १९७३ मगसर सुदी ६ को अपनी जन्मभूमि जामनगरमें ही वयोवृद्ध मुनिराज श्री जयविजयजीके करकमलोंसे हुई। बड़ी दीक्षा फाल्गुन वदी ३ को वल्लभी पुरी (वल) में आचार्य भगवान्‌की अध्यक्षतामें पन्यास (उपाध्याय) श्री सोहनविजयजी म० गणीके करकमलोंसे हुई। साथमें हेमश्रीजीकी शिष्या चम्पकश्रीजीकी भी बड़ी दीक्षा हुई।

चम्पकश्रीजी गृहस्थावस्थामें जीरा निवासी ब्रह्मचारी शंकर दासजीकी धर्मपत्नी थी। ब्रह्मचारीजीने स्वयं आकर भावनगरमें आचार्य म० से दीक्षा दिलवाई।

मुद्रित होते हुए कुछ भूलें रह गई हैं। अतः भूलसुधार प्रकरण में इनका स्पष्टीकरण कर दिया गया है। पाठक सुधार कर पढ़ें।

शिष्या परिवार वंशवृक्षमें श्री चित्तश्रीजी की शिष्या

महाराजको आचार्य शब्दसे संक्षित किया है जबकि उस समय वे मुनि पद पर प्रतिष्ठित थे। यह मात्र उनके वर्तमान पदको लक्ष्य में रखकर ही व्यवहृत किया गया। ऐसा न करने पर व्यवहार दृष्टिसे योग्य नहीं लगता।

इस पुस्तके पृष्ठ ६६ में यह लिखा है :

"पर उनकी अधिकांश स्त्रियां अभीतक वैष्णवधर्मको अंगीकार किए हुई थी।"

वास्तवमें बात यह थी कि पंजाबमें अग्रवाल अधिकतर वैष्णव हैं पर मालेरकोटलाके अग्रवाल भाई स्थानकवासियोंके संसर्गसे स्थानकवासी हो चुके थे। तत्पश्चात् न्यायाम्भोनिधि जैनाचार्य श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वरजी महाराजके उपदेशसे सबके सब संवेगी ( मन्दिर आम्नाय ) बने। परन्तु उन सबका व्यवहार वैष्णवोंके साथ होनेसे कई महिलाएं वैष्णवधर्मका पालन करती थी। जिन्हें प्रवर्तिनीजी जैसी दिव्य विभूतिके ब्रह्मचर्यका अपूर्व तेज, दुष्कर तप, प्रबल त्याग, निष्पक्षता और निस्पृहता आदि गुणोंने जैनधर्मकी ओर आकर्षित कर लिया।

पृष्ठ १६०-१६१ में 'पुण्य भूमि लाहौर' नामसे प्रकरण दिया है उसमें प्रसंगोपात्त जो बात चली आई वही दी गई है। बाकी इस विषयकी अधिक जानकारीके लिए पाठकोंको लाहौरमें प्रतिष्ठा महोत्सव तथा आदर्श जीवन और युगवीर आचार्य नामक पुस्तकें देखनी चाहिए।

पृष्ठ २०६ में—"गुरुदेव शहरके बाहर एक बंगलेमें विराजमान

थे। पंजाब प्रान्तकी समस्त प्रजा आपके स्वागतको उपस्थित थी।"

चूंकि घटना क्रम यह था कि श्री सिद्धाचलजी आदि तीर्थोंकी यात्रा करते हुए—काठियावाड़, महाराष्ट्र, गुजरात, मारवाड़ आदि प्रान्तोंमें महान उपकार करते हुए लगभग १२-१३ वर्ष पश्चात् गुरुदेव पुनः पंजाब पधारे। इसलिए पंजाबियोंको उत्साह बहुत था हजारों पंजाबियोंके समूहके समूह गुरुदेवके स्वागतार्थ आये थे और अपने उपकारीके लिए इस प्रकार भक्तिरसमें ओत-प्रोत हो कर उमड़ पड़ना भक्तवर्गके लिए स्वाभाविक था।

पृष्ठ २०७ पंक्ति १२, चित्तश्री की बड़ी दीक्षाके विषयमें चरणश्रीजी व चित्तश्रीजीकी बड़ी दीक्षा वि संवत् १९७३ मगसर सुदी ६ को अपनी जन्मभूमि जामनगरमें ही वयोवृद्ध मुनिराज श्री जयविजयजीके करकमलोंसे हुई। बड़ी दीक्षा फाल्गुन बदी ३ को वल्लभी पुरी (वळ) में आचार्य भगवान्की अध्यक्षतामें पन्यास (उपाध्याय) श्री सोहनविजयजी म० गणीके करकमलोंसे हुई। साथमें हेमश्रीजीकी शिष्या चन्दनश्रीजीकी भी बड़ी दीक्षा हुई।

चन्दनश्रीजी गृहस्थावस्थामें वीरा निवासी ब्रह्मचारी शंकर दासजीकी धर्मपत्नी थी। ब्रह्मचारीजीने स्वयं आकर आचार्य म० से दीक्षा दिलवाई।

दुर्दिन होते हुए कुछ भूले रह गई हैं। अतः भूलसुधार प्रकरण में उनका संशोधन कर दिया गया है। पाठक सुधार कर पढ़ें।

शिष्या परिवार वंशवृक्षमें जो चिन्तामणिश्रीजी की शिष्या

जरूरी होना चाहिये।'

"पालीताणाथी हेमश्रीजी आदिना पत्र आव्या करे छे। जीवन-चरित्र जेम बने तेम जल्दी छपाय तेम करो, जिन्दगी नो भरोसो न थी पांच वर्ष निकली गया अने आंखे जोई लईये एटले अमोने संतोष थाय। आदि आदि।"

प्रवर्तिनीजीका जीवनचरित्र यथाशक्ति प्राप्त आधारों पर लिखा गया है। फिर भी देश विभाजनके फलस्वरूप बहुतसे जीवन-प्रसंग अवशेष रह सकते हैं। अतः पाठकगण यदि मुझे सूचित करेंगे तो अगले संस्करणमें साभार उचित स्थानपर वर्णन कर दिया जायगा।

अपने इन दो शब्दोंमें इस पुस्तकके विषयमें क्या लिखूं? प्रवर्तिनीजीके जीवनका एक क्षण भी ऐसा नहीं जो मानव जीवनके उत्थानमें सहायक न हो। अतएव पाठकोंको यह पुस्तक मनन पूर्वक पढ़नेकी आवश्यकता है।

अन्तमें उन मित्रोंका हृदयसे आभार मानता हूं जिन्होंने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे इस कार्यमें सहयोग दिया है।

१३, [illegible] [illegible], कलकत्ता।

वि. सं. [illegible]

[illegible]

[illegible]

# विषयानुक्रमणिका

# आदर्श प्रवर्तिनी

अपनी यह दशा देख, आठ आठ आंसू रोने लगती है। तब न वह पावसकी रिमझिम, न वह नवल कलिकाओंकी शोभा और सुषमा, न वह सौरभयुक्त मन्द समीर, और न वह पुष्पोंका अट्टहास दृष्टिगोचर होता है। सर्वथा ही परिवर्तन हो जाता है। दुःखी मानव, अशान्त जीवनके कुछ क्षणोंको सुमधुर, आशान्वित और नवजीवनसे अनुप्राणित करनेवाले इन प्राकृतिक साधनोंके लिये विकल हो उठता है।

पर, अभावकी पूर्ति तो प्रकृतिका एक ध्रुव नियम ठहरा। निदान हेमन्तके अवसानपर वसन्तका आगमन होता है। वृक्षों पर नव पल्लव विहसने लगते हैं, कलिकाएं फूटने लगती हैं, पुष्प खिल उठते हैं, खेतों और मैदानोंमें हरितिमा लहराने लगती है, सुवासित मलय वात प्रवाहित होने लगता है और नवयौवना प्रकृति पुनः अपने समस्त सौन्दर्य और सुषमाके साथ पदार्पण करती है। यह है प्रकृतिका नियम। दुःखके पश्चात् सुख, और सुखके पश्चात् दुःख। पावसके पश्चात् शिशिर और हेमन्तके पश्चात् वसन्त। इसे ही "अभावकी पूर्ति" कहते हैं।

प्रकृतिका यह नियम मात्र ऋतुओं, जड़ पदार्थों और वनस्पतियों तक ही परिसीमित और अनिवार्य नहीं है, वरन् यह अनन्त चराचर विश्वके लिए चिरन्तन सत्य है। उत्थान और पतन, संयोग और वियोग, उन्नति और अवनति, सुख और दुःख का यह क्रम मानव जीवनमें भी [illegible] है। कभी मनुष्य सुखके [illegible] कभी मानवता को

विश्रृङ्खल सामाजिक और धार्मिक नियमोंका गठन कर, अज्ञानान्धकारमें भ्रमित जनताको विद्युत्स्तम्भके सदृश सत्पथ प्रदर्शित कर सके।

'अभावकी पूर्तिके नियमानुसार अनादि कालसे ऐसे पुरुषरत्न उत्पन्न होते ही आ रहे हैं।

जैन समाज भी ऐसे ही संघर्षोंके मध्य गुजरा है। इसने भी अनेक उतार और चढ़ाव देखे हैं। कभी इसने अन्य तीर्थियों द्वारा किये गये अनेकों आघातोंको सहा है तो कभी परस्पर अपने ही लोगों द्वारा आहत हुआ है। पर समय-समयपर आवश्यकतानुसार अनेक प्रतिभासम्पन्न महान् आचार्योंके जन्मसे यह उत्तरोत्तर उन्नतिकी ओर अग्रसर रहा है।

विक्रमकी उन्नीसवीं शताब्दीका अन्तिम काल था। चारों ओर देश और समाजमें, यहांतक कि धार्मिक संघोंमें भी अयोग्य, स्वार्थी और संकुचित विचारोंवाले व्यक्तियोंकी प्रधानता थी। जैन समाजमें भी शिथिलाचार वर्द्धित हो रहा था। कुछ मान-प्रतिष्ठाके लोलुप शिथिलाचारी यतियोंका इन दिनों विशेष बोलवाला था। ठीक इसी समय पञ्जाबके जिला फिरोजपुरके लेहरा ग्राममें कपूरमहा क्षत्रियवंशी गणेशचन्द्र और माता रूपादेवीके यहां एक महान आत्माका जन्म हुआ, जिसने आगे चलकर सुप्त समाजको जगाया तथा अपने अपार श्रम द्वारा नव चैतन्यका सञ्चार किया। वे थे दादागुरु श्री विजयानन्द सूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराज। आचार्यवर्यने देखा था

अम्बालाके एक प्रसिद्ध ओसवाल कुलमें लाला देवीचन्दजीके सुपुत्र लाला नानकचन्दजी भावूकी धर्मपत्नी श्री श्यामादेवीकी कुक्षि से पुत्री-रूपमें हुआ। बड़े होनेपर जिसने विश्वकी अनुपम विभूति नवयुग-प्रवर्तक न्यायाम्भोनिधि, दादाप्रभावक जैनाचार्य श्रीमद् विजयानन्दसूरीश्वरजी (आत्मारामजी महाराजके पट्टधर विश्ववत्सल, अज्ञानतिमिरतरणि, कलिकालकल्पतरु, मरुधर-सम्राट, पंजाबकेशरी, युगवीर आचार्य श्री श्री १०८ श्री श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजसे भगवती दीक्षा ग्रहणकर एक बड़े अभावकी पूर्ति की। जनताकी मनोकामना पूर्ण हुई।

# बाल्य जीवन

शिशुकी चेष्टायें और उसके मनका झुकाव तथा उसकी नानाविध प्रवृत्तियां उसके भावी जीवनको बहुत कुछ व्यक्त कर देती है। कहावत है :

"होनहार बीरवानके होत चीकने पात"

हमारी चरित्रनायिका जीबीबाई (देवश्रीजी) अपनी शैशवावस्थासे ही गम्भीर, सहृदय, भावुक,संसारसे उदासीन तथा तीक्ष्ण बुद्धिवाली थी। वे बहुधा एकान्तमें बैठकर न जाने क्या सोचा करती थीं। बचपनसे ही उनके हृदयमें प्राणीमात्रके

सहिष्णुताके पथसे कभी विचलित नहीं हुई।

कन्याओंको पढ़ाना इस समय लोगोंकी दृष्टिमें आवश्यक न था। जीवीबाईकी पढ़नेकी ओर स्वाभाविक रुचि थी। जब अपने पड़ोसियोंके बालकोंको पढ़ते देखती तो उनकी भी इच्छा पढ़नेकी होती थी और वे स्लेट और पुस्तकके लिये हठ करती। अतः पिताने उन्हें अक्षर-ज्ञानके लिये तथा यह पढ़-लिख कर विदुषी हो, इस दृष्टिसे प्रारम्भिक पाठशालामें नाम लिखा दिया।

इस प्रकार इस होनहार बालिकाने अपने जीवनके सात वर्ष व्यतीत कर दिये।

मैं आकुल रे अति सुखसे,
मैं आकुल रे अति दुखसे,
मानव जगमें बँट जावें,
सुख दुख से औ दुख सुखसे।

—सुमित्रानन्दन पंत

कविका कथन उपयुक्त है। जीवनमें यदि मात्र सुख ही सुख हो तो सुख भी नीरस और अनइच्छित हो जायगा और दुख ही दुख होने पर जीवन स्वयं एक भार बन जायगा। दुख बिना सुखका अनुभव नहीं किया जा सकता और बिना दुख, सुख क्या है इसका स्वरूप नहीं जाना जा सकता। एक कविने तो दुखमें ही सुखकी निष्पत्ति की है:—

दुख पंकिलमें ही तो खिलते,
उन्नतिके नव नव मंजुल शतदल,
जिन पर मनमोहक गुंजन कर,
मँडराते सुखके मधुकर प्रतिपल॥

—मदनकुमार मेहता

अतएव दुख आने पर मनुष्यको आकुल नहीं हो जाना चाहिये; अपितु जीवनने करवट ली है, यह मानकर, किन्हीं शुभ दिनोंकी प्रतीक्षा करनी चाहिये। उसी प्रकार सुख प्राप्त होने पर फूलकर दूसरोंको अकिंचन नहीं समझना चाहिये, क्योंकि सुखके पश्चात् दुखका क्रम है। इस प्रकार सुख और दुख मानव जीवनमें महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। जो व्यक्ति दुख आने पर विचलित

है ; उस पर किसीका अधिकार नहीं, यह सोचकर धैर्य धारण करना पड़ा।

समय मनुष्यके घावों पर मरहमका काम करता है। अतः ज्यों-ज्यों समय बीतने लगा, त्यों-त्यों लाला नानकचन्दजीका शोक-प्रवाह भी मन्द पड़ने लगा। कुछ घनिष्ट मित्रोंने उन्हें दूसरे विवाहके लिये बाधित किया। परिणामस्वरूप उनका एक सुयोग्य कन्यासे पाणिग्रहण हो गया। इस तरह उनका जीवन-प्रवाह उसी मंथर गतिसे प्रवाहित होने लगा। अबोध बालिका भी नई मां की गोद पाकर पुनः गृह-आंगनमें किलकने लगी। पर कालको यह स्वीकृत न था। कुछ समय पश्चात् जीवीबाईकी जेष्ठ भगिनी अक्कीबाईका अकस्मात् हृदय रोगसे देहावसान हो गया। एक मात्र आश्रयरूप जेष्ठ भगिनीके भी इस तरह काल-कवलित हो जाने पर चरित्रनायिकाके धैर्यका बांध टूट गया। और वे संसारसे सवथा उदासीन रहने लगी। उनका जीवनके प्रति दृष्टिकोण बदल गया। उनके हृदयमें सत्य मार्गकी खोजके लिए जिज्ञासाके भाव जागृत हुए। वे दिन-रात इन्हीं विचारोंमें रत रहने लगी कि वह कौन सा पथ है, जिसपर चलनेसे मृत्यु जीवन का हरण नहीं कर सकती, जरा यौवनका अन्त नहीं कर सकती, जीवनके मधुमासमें पतझड़का आगमन नहीं हो सकता ? निरन्तर चिन्तन और मननके पश्चात् उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवनको उसी मार्गकी खोजमें अर्पित कर देनेका दृढ़ सङ्कल्प कर लिया। इस तरह बाल्यावस्थामें उनके हृदयमें वैराग्यके भाव अङ्कुरित हो गये।

# बाल ब्रह्मचारिणी

उस समय जैन समाजकी दशा अत्यन्त दयनीय और हास्यास्पद थी। स्वस्थ सामाजिक नियमोंका स्थान रूढ़िवाद ने ग्रहण कर रहा था। बाल-विवाह, दहेज, बहुविवाह, वृद्ध-विवाह आदि अनेक कुरीतियां प्रचलित थीं। पंजाब प्रान्त भी इससे अछूता न था। जिनको गृहस्थ-जीवन क्या है, इसका किंचित् मात्र भी ज्ञान नहीं, ऐसे दूधमुंहे बच्चे विवाहके बन्धनमें बांध दिये जाते थे। परिणाम स्वरूप शारीरिक क्षीणताके साथ

नैतिक पतन भी बढ़ रहा था। पर धन और ऐश्वर्यमें मस्त समाज को इसका ध्यान न था।

धीरे-धीरे जीवोबाईने भी यौवनकी देहलीमें प्रवेश किया। उनका शारीरिक सौंदर्य निखर उठा। इस समय उनकी अवस्था तेरह वर्षकी थी। पर उनका ध्यान सांसारिक कार्योंकी ओर न था। यह वह अवस्था थी, जिसमें प्रवेश करने पर स्त्री-पुरुषके विचारों में भयंकर संघर्ष होता है। इस समय न वे बुद्धिमान् होते हैं और न मूर्ख, न वह बालक होते हैं और न विचारवान् युवक या युवती। अतः इस अवस्थाका अत्यन्त दुरुपयोग किया जाता है। माता-पिता या तो कन्याको विवाहित कर देनेकी चिन्तामें लग जाते हैं या पुत्रके लिये नई बहू लाने अथवा परिवारके भारको वहन करनेके लिये सहयोगी बनानेका यत्न करने लगते हैं।

लाला नानकचन्दजी भी अपनी इकलौती पुत्रीके लिये योग्य वर ढूंढने लगे। तेरह वर्षकी अवस्था उस समय विवाहके लिये बहुत बड़ी अवस्था थी। उन्हें यह भी पता न था कि जो कन्या विवाह नहीं करना चाहती है और जिसके हृदयमें वैराग्य की भावना उमड़ रही है वह कैसे वैवाहिक बन्धनमें बंध सकेगी?

यह [illegible] कन्या
के [illegible] लगी।
[illegible] और
[illegible]

हुआ, किसीको अनुभूत तक नहीं हुआ। ठीक दूसरे दिन सायं-काल बारात लुधियाने पहुंची। अभी एक प्रहर भी व्यतीत नहीं हुआ था कि लाला पन्नामलजीपर अचानक हैजेका प्रकोप हो गया और कुछ समयमें ही हृदयकी गति अवरुद्ध हो जानेसे उनका स्वर्गवास हो गया। चारों ओर हाहाकार और करुण-क्रन्दन छा गया। जहां अभी संगीत और वाद्यकी आनन्द सरिता प्रवाहित हो रही थी वहां दुःख और क्रन्दनका प्रवाह प्रवाहित होने लगा। गांवके समस्त नागरिक इस असहनीय आघातसे व्याकुल हो गये और स्वर्गीय आत्माके वियोगमें रो उठे।

इस समय जोवीबाईके हृदयका वर्णन करते तो यह लेखनी कुण्ठित हो रही है। फूलनेपर पहुंचनेके पूर्व ही लतापर जैसे वज्रपात हो गया। जिस बालिकाने यह जाना ही न था कि सुहाग क्या है, उसे वैधव्यने अकालमें ही आ घेरा। पैरोंकी महावर और सुहागकी सुन्दरी और हाथोंका पीला रंग जिससे अभी किंचित मात्र भी न छूटा था कि उसके सिरका सिन्दूर पोंछ दिया गया। एक दिन पूर्व पहनाई गई चूड़ियां तोड़ डाली गई और वैधव्यका काला ओढ़ना पहना दिया। हा! देव! यही तो तेरी विडम्बना है।

जिस बालिकाने जी भरकर अपने पतिके मुखका दर्शन भी नहीं किया था, कि उसे विधाताने सदाके लिये छीन लिया। कन्यादानके समय पाणिग्रहणके अतिरिक्त जिसने दूसरी बार

संकल्पतक भी नहीं किया, वह कहनेके लिये समाजकी नजरोंमें बाल-विधवा थी।

प्रथम तो जीजीबाईकी अभिलाषा सर्वदा विवाह करनेकी नहीं थी। इनकी अन्तरात्मा विवाह तथा विषय सुखोंके विरुद्ध थी। दूसरा, विवाह हो जानेके पश्चात् भी वह पतिसे हस्त-मिलाप दोषके अतिरिक्त पूर्णतः पवित्र ब्रह्मचारिणी थी।

अतः सद्बुद्धि वाले प्रत्येक व्यक्तिको यह माननेमें किंचित मात्र भी बाधा न होगी कि जीजीबाई विवाहित हो जानेपर भी बाल-ब्रह्मचारिणी थी।

# मूर्तिपूजापर पूर्ण श्रद्धा

पति वियोगके इस अन्तिम महा आघातसे जीवीबाईके जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा और जीवनके प्रति उनका दृष्टिकोण पूर्णत बदल गया। उन्हें सांसारिक सुख किंपाक फलके सदृश लगने लगे और किसी भी सांसारिक कार्यके प्रति अभिरुचि नहीं

रही। वैराग्यका जो पोला बाल्यावस्थाने ही रंगा हुआ था, वह दिन-प्रति-दिन प्रगाढ होता गया। इन्होंने अब यह अनुभव किया कि संसार असार है, जीवन क्षणभंगुर है, नाते-रिश्ते सब माया है और इस नाशवान् जीवनका मोह, मनुष्यकी सबसे बड़ी कमजोरी है। अतः अपनी आत्माको सच्चे सुखकी प्राप्तिके इस मार्गकी ओर लगानेका निश्चय किया, जहां न सुख है और न दुःख है और सदैव चिरन्तन आनन्दमय अवस्था है। इसके लिये सब कुछ उत्सर्ग कर देनेका भी दृढ़ संकल्प किया। धीरे-धीरे रात-दिन चिन्तन और मननमें ही इनका समय व्यतीत होने लगा।

"गुरु बिना ज्ञान नहीं" यह उक्ति मानकर वे अपने आध्यात्मिक गुरुकी खोज करने लगी। इनकी यह आकांक्षा थी कि वे जैन साधु-साध्वियोंके सम्पर्कमें आयें और उनसे निवृत्ति मार्गपर उपदेश, शास्त्रोक्त आचार-विचार तथा जिनेश्वर देवों द्वारा निर्दिशित मार्गपर चलनेकी शक्ति व ज्ञान प्राप्त करें। धर्मके सच्चे सिद्धान्तोंका अध्ययन, मनन और पालन करनेकी इनकी हार्दिक कामना थी। इनकी यह आत्माकी पुकार थी अतः शनैः शनैः जैन साधु-साध्वियोंके सम्पर्कमें आना प्रारम्भ किया।

जीवीबाईके पूज्य पिता लाला नानकचन्दजी मन्दिर आम्नाय (मूर्ति-पूजक) श्वेताम्बर जैन थे। मन्दिरके शुद्ध वातावरणमें मनुष्यके सात्विक भावोंका विकास होता है, ऐसी उनकी धारणा थी। वे मूर्तिमें ईश्वरका प्रतिबिम्ब देखते थे, इसलिये देव-प्रतिमा की पूजाको आत्मोन्नति तथा धार्मिक विकासके लिये श्रेष्ठ साधन

मानते थे। न्यायाम्भोनिधि जैनाचार्य श्रीमद् आत्मारामजी म० तथा उनके पट्टधर श्रीमद् विजयवल्लभ सूरि म० के पुण्य प्रतापसे पञ्जाबके जैन समाजमें मूर्ति-पूजाके प्रति पूर्ण आस्थाके भाव जागृत हो गये थे। परिणामस्वरूप बहुत समयसे बन्द मन्दिरोंके द्वार पुनः खुल गये और जगह-जगह मन्दिरोंमें भक्तिरससे ओतप्रोत गायन और कीर्तन होने लगे। जिन प्रतिमाओंको जो लोग अज्ञानवश पत्थर, जड़ और न जाने किन-किन शब्दोंसे सम्बोधित करते थे, अब वे इन युगल आचार्योंके उपदेशोंसे अज्ञान तिमिरका नाशकर ज्ञानके पुण्य प्रकाशको प्राप्त कर चुके थे। वे अब मूर्ति-पूजाकी वास्तविकता तथा उसके उद्देश्यको समझ गये थे। श्रीजीबाई भी उनके उपदेशोंसे पूर्ण प्रभावित हुई।

इस समय पञ्जाबमें मन्दिर आम्नायकी कोई साध्वीजी भी विद्यमान नहीं थी। वहां स्थानकवासी साध्वियोंका ही प्रायः आवागमन रहता था। अतः श्रीजीबाई प्रथम स्थानकवासी साध्वियोंके सम्पर्कमें आईं। वह उनसे वैराग्यकी सज्झायं सुनतीं तथा अनेक धार्मिक विषयोंपर विचार-विमर्श करतीं। पर स्थानकवासी साध्वियोंने उनके हृदयकी भावनाको न पहचाना और वे अपनी शिष्या बनानेका प्रयत्न करने लगीं। इससे श्रीजीबाईके हृदयपर उनके व्यक्तित्वका अच्छा प्रभाव न पड़ा और एक घटनाने तो उनके प्रति रही-सही समस्त श्रद्धा भी दूर कर दी। उन दिनों एक बार अमृतसरमें श्री देवश्रीजी आदि स्थानकवासी साध्वियोंका चातुर्मास था। श्रीजीबाई उनके पास आया जाया करती थी।

एक बार इन साध्वियोंने उन्हें फुसलाकर तथा दबाकर इच्छाके विरुद्ध जिन-मन्दिर न जानेका नियम दे दिया। घर जानेपर जोवीबाईने इस विषयपर गम्भीरतापूर्वक सोचा और अनुभव किया कि बिना सोचे-समझे ऐसा नियम लेनेकी क्या आवश्यकता थी। उन्हें सारा रहस्य ज्ञात हो गया। उन्होंने देखा कि इसमें एक कलुषित वृत्ति कार्य कर रही है। उन्होंने उसी समय प्रेम-देवीजी आदिको जाकर पूछा कि उन्हें किसीको इस प्रकार अज्ञान में रख कर, उसका दुरुपयोग करनेका क्या अधिकार था? वह तो उनके पास ज्ञान-पिपासा शान्त करने तथा तत्त्वज्ञान प्राप्त करनेकी दृष्टिसे आती थी। इसका अर्थ यह तो नहीं था कि मूर्ति और मूर्ति-पूजाके प्रति अपने विश्वासको छोड़ दिया था। मेरा आज भी जिन-प्रतिमाके प्रति अनुराग है और एक भक्तकी दृष्टिसे मैं मूर्तिमें भी साक्षात् भगवान्‌का दर्शन पाती हूं। साधना पथपर चलनेवाले अभ्यासीके लिये मूर्ति प्रथम सेतु आधार है।

साध्वियां इसपर बहुत लज्जित हुईं फिर भी उन्होंने उन्हें फंसा रखनेके लिये जाल फेंकते हुए कहा—"हमने तो तुम्हें सम्यक्त्व दे दिया है। जिससे सम्यक्त्व लिया जाता है, उसे उसीको शिष्या बनना पड़ता है। इसलिये अब तुम्हारा मूर्ति-पूजामें विश्वास रखना धर्म-पथसे विचलित होनेके सदृश होगा।"

साध्वियोंकी यह बात सुनकर जोवी बड़ी आश्चर्यान्वित हो गई। "मान न मान मैं तेरा मेहमान" वाली कहावत ही चरितार्थ हो गई थी। पर उनके हृदयमें तो शिष्या बननेका विचार

तक नहीं आया था और वे चाहती थी उन्हें दीक्षित ही करते। "मुझे आपकी शिष्या नहीं होना है" यह कहकर उन्होंने वहांसे प्रस्थान किया।

कुछ समय पश्चात् लाला मानकचन्दजी जीवीबाईको अम्बाले ले आये। इकलौती पुत्रीपर आई आपदासे वे अत्यन्त व्यथित थे। वे इस बातका ध्यान रखते थे कि उन्हें दुःख नहीं हो, अतः उनके लिये सर्व सुविधायें प्रस्तुत कर दी थी।

एक दिन अपने पिताको अकेले देखकर जीवीबाईने उनके समक्ष दीक्षा लेनेकी अभिलाषा प्रकट की। वे पूर्व ही उनकी मनोभावनाको जानते थे अतः उन्हें ठेस न लगे इसलिये चतुरता के साथ बोले—"धर्म-ध्यान, सेवा, सत्संग, पूजा और धर्मशास्त्रों के अध्ययनके पश्चात् दीक्षा लेनेकी बात सोचना।" पिता द्वारा इस प्रकार छुट्टी मिल जानेपर अब वे रात दिन धर्म-ध्यानमें निरत रहने लगी।

# दर्शन का सौभाग्य

आपको हर समय यही अभिलाषा रहने लगी कि कब मन्दिर आम्नाय ( संवेगी ) साध्वियोंका पञ्जाबमें आगमन हो और दर्शनोंका सौभाग्य प्राप्त हो।

कुछ समय पश्चात् आपको फिर लुधियाने जाना पड़ा। वहां आपके पुण्योदयसे श्रीमती भागवन्ती बाई नामकी एक धर्मात्मा विदुषीसे भेंट हुई और धार्मिक क्रियाओंके पालन करनेका महान् अवसर मिला। वे नित्य भागवन्ती बाईके यहां जाती और सामायिक, प्रतिक्रमण आदि नियम पूर्वक करती। यहां उन्होंने कई

धार्मिक विषयोंका अध्ययन, मनन और चिन्तन किया, जिससे आपकी आत्मा और भी अधिक निर्मल हो गई। मूर्ति-पूजाके प्रति आपकी श्रद्धा और भी अधिक दृढ़ हुई। अब आप मन्दिर आम्नाय साध्वियोंके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगी, जिससे कि वह स्वयं उनसे दीक्षा ग्रहण कर अपनी आत्माके कल्याणके साथ साथ, दूसरोंकी आत्माका भी निस्तार कर सके।

इसके पश्चात जीवीबाईका पुनः अम्बाला आना हुआ। आप आते ही अस्वस्थ हो गईं। जब आर्या प्रेमदेवीको यह ज्ञात हुआ कि जीवीबाई आई हुई हैं और ज्वरसे पीड़ित हैं, तो उन्होंने उनको पुनः प्रभावित करनेकी चेष्टाएं शुरु की। उन्होंने एक स्त्रीके साथ जीवीबाईको संवेदनाका संदेश भेजा और कहलाया—

"तुम अपने मनमें यह प्रण ठान लो कि जब मैं अच्छी हो आऊंगी तो प्रेमदेवीजीके हाथों ही दीक्षा ग्रहण करूंगी। और यह निश्चय है कि मेरे आशीर्वादसे तुम शीघ्र स्वास्थ्य लाभ कर सकोगी"। जीवीबाईने उक्त संदेश पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहलाया।

"मुझे मूर्ति-पूजा द्वारा पूर्ण आत्म-शान्ति प्राप्त होती है और इस सिद्धान्तमें मेरी आत्माका कल्याण मुझे स्पष्ट दिखाई देता है। इसलिए सत्यके इस सन्मार्गसे मैं कभी भी विचलित नहीं होऊंगी। ऐसा कौन मूर्ख होगा, जो चिन्तामणि रत्नको प्राप्त कर लेने पर भी कांचके टुकड़ेकी लालसा रखेगा।"

शीघ्र ही जीवीबाई स्वस्थ हो गई।

अब आपने अपने पिताजीसे फिर बहुत अनुनय-विनय किया कि वे यहां कहीं भी योग्य मन्दिर आम्नायकी साध्वियां हों, वहीं लेजाकर उनको दीक्षा दिलवा दें। उनके पिताजीने कहा "तुम्हें ऐसा कौन सा दुःख है, जो हमें त्याग कर जाना चाहती हो। सारा घर तुम्हारी आज्ञा माननेको प्रस्तुत है। धर्म-ध्यान जप-तप और पूजा-पाठ आदिकी तुम्हें पूर्ण स्वतन्त्रता है।" पर जोवीबाईने अनुरोध किया कि आप मोह, ममता, और मायाके पर्देको हटाकर सोचें। कौन किसका पिता है? कौन किसकी पुत्री है? यह सब सांसारिक सम्बन्ध हैं, जिनको काल एक ही झटकेमें समाप्त कर देता है। क्या आप मुझे यह विश्वास दिला सकते हैं कि मैं अमर रहूंगी और आपका तथा मेरा कभी भी विछोह नहीं होगा। उनके पिता जी ने उत्तर दिया "पुत्री! यह सब तो अपने अपने कर्मोंके आधीन है, जिसे विधाता भी बदल नहीं सकता।" तत्क्षण ही जोवीबाईने प्रत्युत्तर दिया "कर्मों पर विजय प्राप्त करनेके लिए ही तो चारित्र अंगीकार करना चाहती हूं। भगवान् कृष्णने भी तो अपनी पुत्रियोंको सहर्ष दीक्षा लेनेकी अनुमति दे दी थी। अतः आप भी मुझे आज्ञा देकर मेरी आत्माके कल्याणके लिये सहायक बनें।" इस प्रकारके तर्कोंको सुनकर जोवीबाईके पिता निरुत्तर हो गए और अपनी मूक सम्मति प्रदान कर दी। साथ ही उन्होंने जोवीबाईको यह सुझाया कि विवाहके पश्चात् पुत्री पर पिताका कोई अधिकार शेष नहीं रहता इसलिये उन्हें अपने श्वसुराल वालोंकी अनुमति प्राप्त करना भी

अनिवार्य है। प्रसंगवश उन्होंने यह विचार प्रकट किया कि वे अपनी आँखोंसे जीवीबाईको दीक्षित होते नहीं देख सकेंगे। इसलिये उन्हें लुधियानेमें ही दीक्षा लेनेकी व्यवस्था करनी चाहिये।

आपके सौभाग्यसे इसी समय पंजाबके 'जीरा' शहरमें दो ठाणोंसे मन्दिर आम्नाय साध्वियोंका पदार्पण हुआ। उनके साथ एक भाग्यवती श्राविका भी दीक्षा ग्रहण करनेके हेतु आई हुई थी और उसकी दीक्षाका यह शुभ कार्य यहीं पर परम पूज्य दादा आत्मारामजी महाराजके कर-कमलों द्वारा सम्पन्न होना था।

मन्दिर आम्नाय साध्वियोंके आगमनका शुभ संवाद शीघ्र ही समस्त पंजाबके गाँवों और नगरोंमें फैल गया और श्रावक तथा श्राविकाएँ भारी संख्यामें उनके दर्शनार्थ जीरानगरमें आने लगे। जब जीवीबाईको उनके आगमनकी सूचना मिली तो उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई और उन्हें उनकी चिरअपेक्षित [illegible] भी क्योंकि दर्शनकी अभिलाषा पूर्ण होती दृष्टिगोचर हुई। वे मन ही मन शासनदेवसे प्रार्थना करने लगीं कि वे शुभ अवसरसे लाभ उठानेका उन्हें बल प्रदान करें, ताकि उनकी दीक्षा लेनेकी कामना पूर्ण हो सके।

उन्होंने अपने हृदयमें प्रार्थना [illegible] कि [illegible] गुरुणीजी [illegible]

महाराज ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा "बहिन, इतनी आतुर क्यों है? अभी तुम्हारी दीक्षाका अभीष्ट समय नहीं आया है। यदि ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो शीघ्र ही तुम्हारी दीक्षा धूमधामसे सम्पन्न हो सकेगी। हम किसीको भूलभुलैयामें डालकर दीक्षा देनेवाली नहीं हैं। प्रथम तुम अपने घरवालोंकी अनुमति प्राप्त करलो। तुममें अगर वैराग्य की सच्ची भावना होगी तो, तुम्हारी आशा पूर्ण होगी। तुम होलाबाईके साथ-साथ लुधियाना लौट जाओ और धर्म-ध्यानमें चित्त लगाओ। तुम्हारी आत्माका कल्याण होगा।" अतएव गुरुणीजी महाराज की आज्ञा शिरोधार्य कर वह वापस लुधियाना लौटीं। गुरुणीजी के आशीर्वादके प्रतापसे आपका मन धर्म-ध्यानादि नित्य-नियम जप-तप और पूजा पाठ आदिमें और भी अधिक लीन होने लगा। इस प्रकार उन्होंने अपने जीवनको सर्वथा साध्वी-जीवनके ढाँचेमें ढाल लिया और दीक्षाकी पूर्व भूमिका तैयार करली।

महाराज ऐसी नहीं हैं कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दें और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है ? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फल-स्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।"

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थीं। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुंजय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोंमें श्रेष्ठहै, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहां तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, मानो उसका जन्म लेना ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहांका अणु-अणु पवित्र है, कंकड़-कंकड़पर अनन्त सिद्धोंकि निर्वाणकी कहानी लिखी हुई है और जिसकी छायामें कोटि व्यक्तियोंने जीवनका कल्याण किया है। ऐसे पवित्र तीर्थकी भेंट करते हुए किसे प्रसन्नता नहीं होती ?

महाराज ऐसी नहीं हैं कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दें और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है ? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फल-स्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।'

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थीं। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुंजय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोंमें श्रेष्ठ है, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहाँ तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, मानो उसका जन्म लेना ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहाँका अणु-अणु पवित्र है, कंकड़-कंकड़पर अनन्त सिद्धोंके निर्वाणकी कहानी लिखी हुई है और जिसके दर्शनसे कोटि [illegible] ऐसे पवित्र [illegible] बढ़े हुए किसे प्रसन्नता नहीं होगी।

[illegible] ही जीवोबाई अपने पिताजी और अन्य सम्बन्धियोंके साथ सिद्धाचलजी, गिरनार आबूजी, तारंगाजी, शंखेश्वरजी, केसरियाजीकी यात्रा कर दिल्ली आईं। मार्गके सब जिन-मन्दिरोंकी प्रतिमाओंके दर्शन व पूजा कर तथा साधु-साध्वियोंके दर्शन और उपदेशोंका लाभ लेते हुए तीर्थ-यात्राको सफल बनाया। मार्गमें [illegible] अपनी गुरुणीजी महाराजकी विद्वत्ता, त्याग, चारित्र और निस्पृहता आदि गुणोंका गान करती रहीं। एक बार उनके साथ वालोंने पूछा कि क्या तुम्हें तुम्हारी गुरुणीजी जैसी साध्वी इस तरफ यात्रा करते कहीं मिली? आपने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—"अन्य लोगोंका कहना नहीं पंजाब और मारवाड़ जैसे प्रान्तोंमें कठिन विहारोंका परिषह सहन कर तपनेवाली पूर्ण विदुषी-रत्न साध्वियाँ बहुत कम ही मिला करती हैं।"

इस प्रकार सारे गुजरात, काठियावाड़ और मारवाड़के बड़े-बड़े तीर्थ स्थानोंका पर्यटन कर जीवोबाई अपने पिताजी और कुटु-म्बियोंके साथ [illegible] एक वर्षके बाद [illegible] कलकत्ता जा पहुँची।

महाराज ऐसी नहीं हैं कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दें और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फल-स्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।"

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थीं। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुंजय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोंमें श्रेष्ठहै, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहाँ तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, मानो उसका जन्म लेना ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहाँका अणु-अणु पवित्र है, कंकड़-कंकड़पर अनन्त सिद्धोंके निर्वाणकी कहानी लिखी हुई है और जिसकी छायामें कोटि व्यक्तियोंने जीवनका कल्याण किया है। ऐसे पवित्र तीर्थकी भट करते हुए किसे प्रसन्नता नहीं होती ?

महाराज ऐसी नहीं हैं कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दें और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फलस्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।"

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थीं। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुञ्जय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोमें श्रेष्ठ है, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहां तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, मानो उसका जन्म लेना ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहांका अणु-अणु पवित्र है, कंकड़-कंकड़पर अनन्त सिद्धोंकि निर्वाणकी कहानी लिखी हुई है और जिसको छायाने कोटि कोटि व्यक्तियोंके जीवनका कल्याण किया है। ऐसे पवित्र स्थानको कौन स्पर्श करते हुए किसे प्रसन्नता नहीं होती?

महाराज ऐसी नहीं हैं कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दें और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है ? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फल-स्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।'

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थीं। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुंजय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोंमें श्रेष्ठहै, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहाँ तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, मानो उसका जन्म लेना ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहाँका अणु-अणु पवित्र है, कंकड़-कंकड़पर अनन्त सिद्धोंके निर्वाणकी कहानी लिखी हुई है और जिसकी छायामें कोटि व्यक्तियोंने जीवनका कल्याण किया है। ऐसे पवित्र तीर्थकी भेट करते हुए किसे प्रसन्नता नहीं होती ?

महाराज ऐसी नहीं हैं कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दें और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है ? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फल-स्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।"

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थी। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुंजय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोंमें श्रेष्ठ है, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहां तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, मानो उसका जन्म लेना ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहांका अणु-अणु पवित्र है, कंकड़-कंकड़पर अनन्त सिद्धोंके निर्वाणकी कहानी लिखी हुई है और जिसकी छायामें कोटि कोटि जीवोंने जीवनका कल्याण किया है। ऐसे पवित्र स्थानको मन करते हुए किसे प्रसन्नता नहीं होती ?

शीघ्र ही जीवीबाई अपने पिताजी और अन्य सम्बन्धियोंके साथ सिद्धाचलजी, गिरनार आबूजी, तारंगाजी, शंखेश्वरजी, केसरियाजीकी यात्रा कर दिल्ली आईं। मार्गके सब जिन-मन्दिरोंकी प्रतिमाओंके दर्शन व पूजा कर तथा साधु-साध्वियोंके दर्शन और उपदेशोंका लाभ लेते हुए तीर्थ-यात्राको सफल बनाया। सारे मार्ग आप अपनी गुरुणीजी महाराजकी विद्वता, त्याग, चारित्र और निस्पृहता आदि गुणोंका गान करती रहीं। एक बार उनके साथ वालोंने पूछा कि क्या तुम्हें तुम्हारी गुरुणीजी जैसी साध्वी इस सारी यात्रा भरमें नहीं मिली? आपने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—"आप लोगोंको मालूम नहीं पंजाब और मारवाड़ जैसे प्रान्तोंमें कठिन विहारोंका परिषह सहन कर सकनेवाली पूरे विद्या-सहित साध्वियाँ बहुत कम ही मिला करती हैं।"

इस प्रकार सारे गुजरात, काठियावाड़ और मारवाड़के बड़े-बड़े तीर्थ स्थानोंका पर्यटनकर जीवीबाई अपने पिताजी और कुटु-म्बियोंके सहित [illegible] वापिस अम्बाला आ पहुंची।

महाराज ऐसी नहीं हूँ कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दूँ और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है ? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फल-स्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।'

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थीं। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुञ्जय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रों में श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोंमें श्रेष्ठहै, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहां तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, मानो उसका जन्म लेना ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहांका अणु-अणु पवित्र है, कंकड़-कंकड़पर अनन्त सिद्धोंके निर्वाणकी कहानी लिखी हुई है और जिसकी छायामें कोटि व्यक्तियोंने जीवनका कल्याण किया है। ऐसे पवित्र तीर्थकी भेट करते हुए किसे प्रसन्नता नहीं होती ?

महाराज ऐसी नहीं हैं कि किसीको चोरी-छिपे दीक्षा दे दें और न मैं आप लोगोंकी प्रसन्नतापूर्वक बिना अनुमति लिये दीक्षा ग्रहण करूँगी। आपने मुझे क्यों बन्दीगृहमें डाल रखा है ? याद रखिये, एक दिन आप लोगोंको अवश्य पश्चात्ताप होगा कि आपने एक जीवके आत्म-कल्याणके मार्गमें रोड़े अटकाए। फल-स्वरूप उसदिन आप दीक्षाके लिये अनुमति प्रदान कर देंगे।'

कुछ समय बाद जीवीबाईके पिताका पत्र आया और अपने साथ तीर्थाधिराज सिद्धाचलजीकी यात्रा करनेके लिए बुला भेजा। जीवीबाई तीर्थ-यात्राके इस अपूर्व अवसरको खोना नहीं चाहती थीं। पहले तो उनके ससुरालवालोंने बहुत आनाकानी की, पर अन्तमें जीवीबाईके अनुनय-विनय करनेपर स्वीकृति देनी ही पड़ी। इस प्रकार वे शत्रुञ्जय ( सिद्धाचलजी ) की यात्राके लिये प्रस्थान करने अम्बाला आईं। जैन शास्त्रोंके अनुसार इस तीर्थ-यात्राका बहुत महत्त्व है। जिस प्रकार नमस्कार मन्त्र सब मन्त्रोंमें श्रेष्ठ है, पर्यूषण पर्व सब पर्वोंमें श्रेष्ठ है, उसी प्रकार समस्त तीर्थोंमें शत्रुंजय तीर्थ श्रेष्ठ है। इस पर्वतकी महिमामें तो यहाँ तक कह दिया गया है कि जिस श्रावक या श्राविकाने सिद्धाचलके दर्शन नहीं किये, उसका जन्म [illegible] ही व्यर्थ है। यह वह स्थान है, जहाँका [illegible] [illegible] कंकर-कंकर द्वारा अनन्त सिद्धि निर्वाणको [illegible] 'सिद्ध' हुए हैं और '[illegible]' [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] इस [illegible] [illegible] करते हुए '[illegible] [illegible] नहीं होता'।

शीघ्र ही जीवोंबाई अपने पिताजी और अन्य सम्बन्धियोंके साथ सिद्धाचलजी, गिरनार आबूजी, तारंगाजी, शंखेश्वरजी, केसरियाजीकी यात्रा कर दिल्ली आईं। मार्गके सब जिन-मन्दिरोंकी प्रतिमाओंके दर्शन व पूजा कर तथा साधु-साध्वियोंके दर्शन और उपदेशोंका लाभ लेते हुए तीर्थ-यात्राको सफल बनाया। सारे मार्ग आप अपनी गुरुणीजी महाराजकी विद्वता, त्याग, चारित्र और निस्पृहता आदि गुणोंका गान करती रहीं। एक बार उनके साथ वालोंने पूछा कि क्या तुम्हें तुम्हारी गुरुणीजी जैसी साध्वी इस सारी यात्रा भरमें कहीं मिली? आपने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—"आप लोगोंको मालूम नहीं पञ्जाब और मारवाड़ जैसे प्रान्तोंके कठिन विहारोंका परिषह सहन कर तपनेवाली पूर्ण क्रिया-पालक साध्वियां बहुत कम ही मिला करती हैं।"

इस प्रकार सारे गुजरात, काठियावाड़ और मारवाड़के बड़े-बड़े तीर्थ स्थानोंका पर्यटनकर जीवोंबाई अपने पिताजी और कुटुम्बियोंके साथ आपके गुरु पक्षमें वापिस अम्बाला आ पहुंची।

दासजीकी मातासे आग्रह किया कि वे आचार्य भगवानको चातुर्मास करनेकी विनति करें। इनके कहनेसे अम्बालाके श्रीसंघ के आगेवान आचार्यश्री भगवानसे चातुर्मासकी विनति करने गये और आचार्य विजयवल्लभ सूरीश्वरजीसे विनम्र निवेदन किया कि आप न्यायाम्भोनिधि विजयानन्द सूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराजसे अम्बाला पधारनेकी स्वीकृति दिलावें जिससे कि एक जिन-मन्दिरकी प्रतिष्ठा और एक धर्मानुरागी श्राविका बहिनकी दीक्षाका सुकार्य आप लोगोंके सान्निध्यमें सम्पन्न हो सके। वहांपर गुजरांवाला, जंडियाला, पट्टी, होशियारपुर आदि कई स्थानोंसे कई प्रतिनिधिमण्डल उन स्थानोंके श्रीसंघकी ओरसे चातुर्मासके लिए विनति करने आये हुए थे और दादा गुरुदेव द्वारा गुजरांवालामें आगामी चातुर्मासके लिये स्वीकृति प्रदान किये जानेकी अधिक सम्भावना थी, पर आचार्यश्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजने लाला गङ्गारामजीको पूर्ण आश्वासन दिला दिया था, इसलिए दादा साहबने इतना ही आदेश दिया "जहांकी फरसना होगी वहीं चतुर्मास होगा।"

इसपर आचार्य श्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजने लाला गङ्गारामजीको फरमाया "तुम चिन्ता न करो, ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो आपकी मनोकामना समयपर पूर्ण होगी।" कुछ समय उपरान्त पूज्य दादा श्री आत्मारामजी महाराजने अम्बालामें चातुर्मासकी स्वीकृति प्रदान कर दी। [illegible] हुआ। इससे पूज्य आत्म-सन्त पधारेंगे और दीक्षा होनेकी इनकी अभि

सहर्ष जीवीबाईको दीक्षाकी आज्ञा नहीं देंगे, इसकी हमारे यहां दीक्षा नहीं होगी। परन्तु आप ध्यानमें रखें कि ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा और इसके हृदयमें सच्ची भावना होगी तो, एक दिन तुम्हें दीक्षाकी स्वीकृति देनी ही होगी। यदि तुम अभी ही ले जाना चाहो तो, यह तुम्हारी चीज है, तुम लेजा सकते हो। हां! यदि तुम सहमत हो कि यह यहां रहते हुए साध्वीजी म० के पास चातुर्मास-पर्यन्त धर्मध्यान व अध्ययन करे तो तुम इसे यहीं छोड़कर जा सकते हो। तुम्हें विश्वास रखना चाहिये कि तुम्हारी स्वीकृतिके बिना इसकी कभी दीक्षा न होगी।"

दादागुरुदेव श्री आत्मारामजी म० के वचनोंको सुनकर ज्येष्ठ ऊपरसे तो शान्त हो गये पर अन्दर ही अन्दर जीवीबाईको लुधियाना से जानेका षड्यन्त्र करने लगे। इसके विरोध-स्वरूप अन्तमें जीवीबाईको अनशन करना पड़ा। अन्तमें उनके पिताजीने चातुर्मासके पश्चात् लुधियाने भेजनेका आश्वासन दिया, तब वे वापिस लौटे। कुछ समयके लिये जीवीबाईने भी इस तरह आत्म-शक्तिका अनुभव किया और उनकी भावनायें और दृढ़तर हो गईं। अब वे निशिदिन गुरुणीजी महाराजके पास अध्ययनमें दत्तचित्त रहने लगीं। परिणामस्वरूप उन्होंने जीव-विचार, नव-तत्त्व, अणगार धर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन आदिका ज्ञान प्राप्त कर लिया।

ज्ञानके साथ-साथ वैराग्यका रङ्ग भी दिन-प्रति-दिन गाढ़ा होता गया।

उनके प्रधान सचिव श्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजी और गुरुणी श्री चन्दनश्रीजी महाराज आदि चतुर्विध संघ सहित ऋषिगामे ही विराजमान हुए हैं। इसलिये अगर जीवीबाई यहां रहेगी तो फिर मुनियों एवं साध्वियोंके सत्संगमें रहनेसे उनकी दीक्षा लेने की भावनाको और अधिक प्रेरणा मिलेगी। निदान उन्होंने किसी प्रकार षड्यन्त्र रचकर जीवीबाईको जोधाग्राम भेज दिया। इस प्रकार जीवीबाई गुरुदेव आदिके दर्शनसे वञ्चित कर दी गई और उन्हें एक प्रकारसे वहां नजरबन्द कर दिया गया।

इस असमानवीय आचरणके प्रतिरोध स्वरूप आपने तीन दि-
के उपवास (अट्ठम) का व्रत ले लिया। इस पर उनके श्वसुर वाले घबराये और उन्हें तरह २ के आश्वासन देने लगे। उन्होंने जीवीबाईसे कहा कि "अगर तुम कुछ समय तक घर पर ही धर्म जीवन व्यतीत करके बता दो तो हम तुम्हें दीक्षा लेनेकी अनुमति दिला देंगे।" जीवीबाईने तपस्या पर तपस्या करनी आरम्भ कर दी। उन्होंने अपने स्वास्थ्यकी तनिक भी परवाह न की। इस कठिन तपस्याके बीच उन्हें ज्वर और खांसी रोग भी [illegible] और वे बहुत कमजोर भी हो गई पर आपने आत्मध्यान नहीं छोड़ा। यह आपकी आत्माकी दृढ़ताका प्रमाण है। एक दिन सास और जेठानीके पांव पकड़कर आप फूट-फूट कर रो पड़ीं और विनति की "आप क्यों मुझे त्यागी साधु मुनिराज के दर्शनसे वंचित रखते हैं, जिनके दर्शनमात्रसे आत्मा पवित्र होती है और कर्मोंका नाश होता है तथा [illegible] होता है।"

इस पर उनका हृदय पसीज गया और जीवीबाईसे उनकी अनुमति विना दीक्षा न लेनेके आश्वासन पा, उन्होंने उनके लुधियाना जानेकी व्यवस्था कर दी। दुर्भाग्यवश जीवीबाईके लुधियाना पहुंचनेके पूर्व ही आचार्य भगवान् आदि सर्व मुनिगण लुधियाना से जालन्धर, जन्डियाला, अमृतसर और नारोवाल होकर सनखतराके लिये विहार कर चुके थे। जहां कि दो सौ पचहत्तर जिन प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा और अंजनशलाका होनेको थी। तत्पश्चात् गुरुणीजी श्री चन्दनश्रीजी महाराज अन्य साध्वियों सहित उपरोक्त स्थलोंपर विचरण करती हुई सनखतरा पहुंच गईं। इस प्रकार जीवीबाई आचार्य भगवान वा अन्य साधु-साध्वियोंके दर्शनका सौभाग्य न पा सकी।

सनखतरामें जिन-प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा और अंजनशलाका का कार्य सम्पन्न कर दादागुरु श्री आत्मारामजी अपने शिष्यों और प्रशिष्यों सहित पसरूर, छुड़ांवाली, सतरांह, सोरांवाली और वहाला आदि स्थानोंमें तीर्थङ्कर भगवानोंकी वाणीका सन्देश देते हुए गुजरांवाला पधारे। विक्रम सम्वत् १९५३ की जेष्ठ सुदी सप्तमी मंगलवारको प्रात:काल दादा गुरुदेव यकायक अस्वस्थ हो गये और यह दुखद सम्वाद सुन गुजरांवाला व पञ्जाबके अन्य स्थानोंके श्रावक-श्राविकाएं उनके अन्तिम दर्शन पानेके लिये अधिकाधिक संख्यामें आने लगे। सभी मुनिगण उनकी सेवा-सुश्रुषामें लगे हुए थे। आचार्य श्री विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज उनके समीप ही बैठे हुए थे। इसी समय वहांके

पर्जीबाईने उन्हें रेल किराया देकर शुकुनका तिलक किया और जिन मन्दिरकी पुजारीकी पत्नीके साथ उन्हें अमृतसर गुरुदेव आदिके दर्शनार्थ विदा किया और शासनदेवसे जीवीबाईकी सफलताकी मंगलकामना की। अमृतसर पहुंचकर आपने गुरुदेव आदि अन्य साधुओंके और गुरुणीजी आदि साध्वियों के दर्शन किये और अपने आनेकी सारी कथा कह सुनाई। इसपर गुरुणीजी महाराज श्रीचन्दनश्रीजीने फरमाया "जीवी! गुरुदेव आदिके दर्शन-लाभकी सद्भावना तुममें कितनी ही बेगवान् क्यों न हो, तुम्हें इस प्रकार अपने सम्बन्धियों की बिना आज्ञाके यहां नहीं आना चाहिए था। उच्च आदर्शकी प्राप्तिके लिए उच्च उपाय ही प्रयोगमें लाये जाने चाहिये। हीन उपायों द्वारा उच्च आदर्श की प्राप्तिकी आकांक्षा अपेक्षणीय है।" इसपर जीवीबाईने क्षमा चाही और उनसे दीक्षा देनेकी प्रार्थना की और यह विचार प्रकट किया कि वह अब वापिस लौटना नहीं चाहती। गुरुणीजी महाराजने स्पष्टतः जीवीबाई को समझा दिया कि जब तक वह अपने माता पिता और श्वसुराल वालों से अनुमति प्राप्त नहीं कर लेगी, तब तक वे उसे दीक्षा देनेमें असमर्थ है। इसपर जीवीबाईने आचार्यश्री विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजसे दीक्षाके लिये विनति की। गुरु महाराजने फरमाया, "हम तुम्हारे सम्बन्धियों को पत्र लिखा देते हैं। वे सब आज्ञापत्र तब उनकी अनुमति प्राप्त होने पर, तुम्हारी इच्छा हो सकती।" जीवीबाईने पुनः अपने सम्बन्धियों द्वारा उनको दीक्षा में बाधा डालनेका

दिया। वहीं उपस्थित एक प्रमुख श्रावक लाला पन्नालालजी जौहरीसे यह कृत्य अपनी आखों देखा न गया और उन्होंने बीच में पड़कर कहा"आप इन्हें बलप्रयोग द्वारा बाहर नहीं ले जा सकते क्योंकि धर्म-स्थानोंमे हिंसा का कार्य वर्जित है। आप इन्हें समझाकर शान्तिपूर्वक ले जा सकते हैं।" जीवीबाईने भी अपने ज्येष्ठके साथ आई हुई लुधियानेकी प्रमुख श्राविका ढोलाबाई को एकान्तमे लेजाकर समझाया और बहुत ही अनुनय-विनय-पूर्वक कहा "तुम स्वयं धर्मात्मा प्राणी हो और तुम्हें सन्मार्ग की ओर बढ़ते हुए प्राणीको सहयोग देना चाहिये, न कि बाधायें खड़ी करना। इसलिये मेरे जेठ को समझाकर उनकी स्वीकृत दिला दें तो आपको इससे बड़ा पुण्य होगा, धर्मकी उन्नति होगी और मुझे शान्ति मिलेगी।" ऐसा कह वह ढोलाबाईके चरणों पर गिर पड़ी, और फूट-फूट कर रोने लगी। उदारहृदय ढोलाबाई का दिल भी पसीज गया। उन्होंने जीवीबाईको उनके ज्येष्ठकी स्वीकृति दिलाने का वचन दे दिया। ढोलाबाईने जीवीबाईके ज्येष्ठको भी समझा दिया कि जब जीवीबाई दीक्षा लेनेके लिये को इतनी दृढ़प्रतिज्ञ है तो उन्हें रोकना उचित नहीं। अन्तमें लुधियाना जाते जाते उन्होंने जीवीबाई को दीक्षाकी अनुमति दे दी और कहा "गुरुदेव स्वयं ज्ञानी है। इसलिए जीवीबाई अगर दीक्षा की पात्र हो तो वे उसे दीक्षा दे देव। हमें इसमें कोई आपत्ति नहीं।"

सफलताके इस रहस्य को जीवीबाई जानती थी। अतः अपने कल्याण-मार्गमें आनेवाली बाधाओं की उन्होंने किञ्चित् भी परवाह नहीं की और न अपने उत्साह व वैराग्यको न्यून किया। परिणामस्वरूप उनके ससुराल वालोंने आत्म-कल्याणके प्रशस्त पथ पर चलने की उन्हें अनुमति दे दी और वे लक्ष्यमें सफल हुईं। अब उनका ध्यान उस शुभ दिनपर केन्द्रित था कि वह दिन कब आवे, जिस दिन निर्ग्रन्थमें धर्म प्रव्रजित हो आत्म-कल्याण करें। अब उनका उत्साह चौगुना वर्धित हो गया था अतः वे निशिदिन अपनी गुरुणीश्री चन्दनश्रीजीके पास धर्म-ध्यानमें निमग्न रहने लगीं। अन्तर्निष्ठ आत्म शान्ति और भावी जीवनकी निश्चिन्तता से उनका अध्ययन सुचारु रूपसे चलता रहा। अब उन्हें उन समस्त विषयोंका पूर्ण ज्ञान हो गया था, जो एक भिक्षु या भिक्षुणी को चारित्र अंगीकार करनेके पूर्व जानना आवश्यक है। मात्र अब तो उसी शुभ दिवसकी प्रतीक्षा थी।

एक दिन लाला राम किशनजी व पन्नालालजीने कलि-काल कल्प, ज्ञान पूर्ण, धर्म दिवाकर, आचार्य श्री श्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजसे निवेदन किया कि जीवीबाईका दीक्षा महोत्सव अमृतसरमें ही उनके कर कमलों द्वारा सम्पन्न हो। उस पर गुरुदेवने कहा "अभी जीवीबाईको चन्दनश्रीजी (साध्वीजी) [illegible]

[illegible]

कुछ क्लेश तो अवश्य हुआ परन्तु गुरु वचनोंमें रहस्य और श्रेय की बात सोच, उन्होंने विशेषाग्रह नहीं करवाया और पूर्ववत अधिकाधिक धर्म-ध्यान व तपमें लीन रहने लगीं।

प्रवाहित नीर निर्मल होता है। एक स्थान पर एकत्र और रुका हुआ नहीं। उसमें विकार उत्पन्न हो जाता है। साधुका जीवन भी सदैव विहाररूप रहनेसे प्रवाहित नीरके सदृश शुद्ध रहता है। साधुको किसी स्थानसे न विराग और न मोह। संसार ही कुटुम्ब है। जन-कल्याणकी भावनासे वे भ्रमण व विचरते रहते हैं। जिसको मोह होता है, रुके हुए पानीके सदृश उसका संयम भी विकृत हो जाता है—उसमें दोष आ जाता है। संयमकी निर्मलताके लिये साधुका विहार आवश्यक है। अतः कुछ दिवस पश्चात् आचार्यदेवने अन्य साधुओंके साथ जोधपुरकी ओर विहार किया। इनके विहारानन्तर कुछ दिवस बाद गुरुनी श्री चन्दनांजीने भी उधर विहार किया। जीवीबाई भी साथ थीं। पैदल विहार, वह भी नंगे पाँव, जीवीबाईको यह भी कठिन परीक्षा थी। कोमल पाँवोंमें, कभी काँटे गड़ते तो कभी कंकड़। कभी मार्ग श्रम व्यथित करता तो कभी सूर्यका ताप, पर वे उसकी परवाह नहीं करते हुए साथ में चल रही थीं। किन्तु शरीर तो किसीकी नहीं सुनता चाहे वह संत हो या श्रावक, पुरुष हो या नारी। उसने [illegible] हुई [illegible] वह [illegible] देता है [illegible] यद्यपि जीवीबाई [illegible] [illegible] वह [illegible] हो [illegible] [illegible]

नहीं खोया और अपने लक्ष्यकी पगडंडी पर चलनेका प्रथम प्रयास समझ कर, वे अधिक उत्साहसे धर्म-ध्यानमें निमग्न रहने लगी। फिर क्या था ज्वर भी हार कर भाग गया।

गुरुदेव आगमनके संवादसे मंडियालाकी जनताकी प्रसन्नता का पार नहीं रहा। लाला हमीरमलजी दुगड़ और मण्डामलजी ओढा आदि अन्य प्रमुख श्रावक तथा श्राविकाओं सहित उनके स्वागतार्थ शहरसे बहुत दूर तक गये तथा अत्यन्त उत्साह व समारोहके साथ उनका नगर प्रवेश कराया। जब लोगोंने यह सुना कि गुरुणीश्री चन्दनश्रीजीने भी इधर ही विहार किया है तो वे बहुत प्रसन्न हुए तथा स्थानीय जनताने अपनेको सौभाग्यशाली समझा, कुछ समय पश्चात् गुरुणीश्री चन्दनश्रीजी भी पधार गईं। उनके आगमनमें महिलाओंमें एक नव-जागृति आ गई तथा व्याख्यान व पूजा पाठका तो स्रोत ही उमड़ गया था। समीपस्थ ग्रामोंसे सहस्रों स्त्री-पुरुष गुरुदेवकी अमृतवाणीका लाभ लेने आने लगे।

दिन बीतते गये। एक दिन आचार्य देवने वहाँसे और विहार करनेका निश्चय किया। इससे मंडियालाकी जनताको बहुत दुःख हुआ। एक दिन लाला हमीरमलजी, मंडामलजी और [illegible]जीने आचार्यदेवसे निवेदन किया कि आप हमारा [illegible] यहीं पर [illegible] जिससे हम दीक्षा महोत्सवका लाभ उठा सकें। [illegible] हम विनय व [illegible] आपको ध्यान देना ही होगा [illegible] मान कर गुरुदेवने

दिये। पर इन्होंने गहने लौटाते हुए कहा—"जिधर गया बनिया उधर गया बाजार"। अतएव हम लोग इन गहनोंको नहीं रखेंगे। इस प्रकार गहनोंका तीन-चार बार इधरसे-उधर आदान-प्रदान होता रहा। एक पक्ष भी उनको अपने पास स्थायी रूपसे रखने को इच्छुक न हुआ। अन्तमें उनके ससुरालवालोंको ही गहने रखने पड़े। इन्हें ओघोबाईको कहला भेजा, "मोह ममताकी वजहसे हममें तुम्हारी दीक्षाको अपनी आंखों देखनेकी शक्ति नहीं है इसलिए हमलोग उपस्थित नहीं हो सकेंगे। हाँ, शासनदेवसे हमारी यही विनति है कि वह तुम्हें चारित्र पालनेमें पूर्ण शक्ति प्रदान करें तथा तुम विशुद्ध चारित्र पालन कर दोनों कुलोंके मुख को उज्ज्वल करो।"

पंजाबके समस्त बड़े २ नगरोंमें ओघोबाई की दीक्षाका शुभ सम्वाद कुंकुम पत्रिकाओं द्वारा प्रसारित किया गया। समस्त पंजाबके श्रावक-श्राविकाएं उनके दीक्षा महोत्सवमें सम्मिलित होने स्यालकोटमें एकत्रित होने लगे। पंजाबमें यह प्रथम अवसर था, जब कि एक पंजाबी बाई की दीक्षा हो रही थी। इसलिए इस अपूर्व अवसरपर कोई भी धर्मानुरागी जैन वञ्चित रहना नहीं चाहता था। पूजा-प्रभावना रात्रि जागरण आदि आनन्दोत्सव प्रतिदिन होने लगे। इस पुण्य अवसर पर श्री श्री [illegible] विजयजी, श्री हर्षविजयजी, श्री सुमतिविजयजी, और गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी [illegible] श्री चन्दन श्रीजी महाराज [illegible] और [illegible]

आदि मंदिरालयमें ही विराजमान थीं।

दीक्षासे एक दिवसपूर्व जीवीबाईके हाथोंमें मेंहदी लगाई गई और उन्हें सुन्दर वस्त्राभूषण पहनाकर पालखीमें बिठाया गया तथा सारे शहरमें होकर धूम-धामसे उनका जुलूस निकाला गया। वहां उपस्थित प्रमुख विद्वान पट्टी निवासी पंडित अमीचन्दजी आदि और अनेक श्रावक उनकी पालखीके साथ २ जुलूसमें चल रहे थे। सबके मनमें आनन्दकी भावनाएं थीं। वे जीवीबाई को उनके त्यागके लिए धन्यवाद दे रहे थे। सभी जीवीबाईके गुणों का गान कर रहे थे। वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित जीवीबाई उस समय अलौकिक मालूम पड़ रही थी। लाला हमीरमलजी दूगड़ और उनकी धर्मपत्नीने जीवीबाईके माता-पिता का स्थान ग्रहण कर उनकी सारी दीक्षा का खर्च स्वयं वहन किया और बड़ी धूम-धामसे दीक्षा महोत्सव मनाया गया।

दीक्षाके दिन प्रातःकालसे ही दीक्षा-स्थल पर भारी भीड़ एकत्रित हो गई और पाण्डालमें पैर रखनेको भी खाली स्थान न मिला। इसी कोलाहलके बीच पूज्यपाद बाबाजी श्रीकुशल विजयजी, श्रीहीरविजयजी, श्रीसुमतिविजयजी और प्रातः-स्मरणीय पूज्यपाद श्री श्री १००८ श्री मद् विजयवल्लभ सूरीश्वर जी महाराज आदि मुनिगण और गुरुणीजी श्रीचन्दनश्रीजी महाराज अन्य साध्वियों सहित दीक्षा-स्थलपर पधारे। कुछ समय पश्चात् जीवीबाई मुनिसमुदाय और गुरुणीजी महाराज आदि अन्य साध्वियों को विनयपूर्वक वन्दना करने खड़ी हुई उनको

शांत और गम्भीर मुखमुद्रा इस समय बड़ी प्रभावशाली और दैवी दिखाई देती थी। श्रद्धा, भक्ति, त्याग और तेज की प्रतिमूर्ति मालूम होती थीं। दीक्षास्थल स्वर्गके समान मालूम हो रहा था।

शुभ घड़ी आनेपर गुरुदेव श्री विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजने विधिवत् दीक्षाकी विधि प्रारम्भ करदी। सब उपस्थित श्रावक-श्राविकाओंने शांतिपूर्वक दीक्षाके कार्यको देखा। इस प्रकार दादा गुरुदेव श्री विजयानन्द सूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराजके अन्तिम वचन सत्य निकले और आचार्य श्री विजय-वल्लभ सूरीश्वरजी महाराजके ही करकमलोंसे माघ शुक्ला ५ वि० सं० १६६४ के पुण्य दिवस जीवीबाईकी दीक्षा सम्पन्न हुई। आपकी दीक्षाका शुभ नाम गुरुदेवने श्रीदेवश्रीजी रखा और आप श्री चन्दनश्रीजीकी शिष्या बनीं।

मोह नहीं होता। कठिनसे कठिन बिमारी भी उन्हें कर्तव्यपथसे च्युत नहीं कर सकती और न कातर बना सकती है। बिमारीसे विकल होना और क्रन्दन करना उनका काम नहीं। यह तो होता है कापुरुषों और मृत्युसे डरनेवालोंका। जो स्वयं मृत्यु—कालको विजित करने निकला हो, वह उससे क्या डरेगा? नियतिने भी देवश्रीजीकी परीक्षाके लिये बिमारीका महा अमोघ अस्त्र छोड़ा। सचमुच जो कल प्रसन्नमुख, स्वस्थ और आनन्दमें ओत-प्रोत थी, उसका अकस्मात् बिना कारण भयंकर व्याधिमें ग्रस्त हो जाना, परीक्षा नहीं तो और क्या है? देवश्रीजी इस परीक्षामें उत्तीर्ण हुईं और धैर्य व शान्तिका दीक्षाके दूसरे दिवस ही अनुपम उदाहरण रखा।

दीक्षा समारोहके दिन श्री देवश्रीजी महाराजके आयंबिल था। दूसरे दिन प्रातःकाल वे गुरु महाराज श्रीशिवश्रीजी गुरुवर्याजीके दर्शनार्थ गईं और वहांसे लौटकर पारणा किया। तत्पश्चात् ही उन्हें कुछ बेचैनी अनुभव होने लगी और वह उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। जी मिचलाने लगा और वमन होनेकी संभावना होने लगी। पर गुरुदेवके व्याख्यानका समय था और उन्हें चिन्ता थी कि कहीं वह गुरुदेवके व्याख्यानसे वंचित न रह जाय, इसलिए उसका ध्यान करके, तथा अपनी तकलीफ और वेदना [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

ही वेदनाके भारको लिये हुए वे अपने ठहरनेके स्थान पर आईं।

गुरुणीजी महाराजको अपनी अस्वस्थताके बारेमें उन्होंने कुछ भी नहीं कहा। इसलिए गुरुणीजी महाराजने उन्हें आहारके लिए कहा और उनकी आज्ञा शिरोधार्य कर, वे आहार करने बैठ गईं। पर वे एक ग्रास भी नहीं खा सकीं। इस पर गुरुणीजी महाराजने उनसे पूछताछ की। तब उन्होंने शारीरिक वेदनाकी सब बात कहदी।

कुछ समय पश्चात् तो उनके शरीरमें असाध्य वेदना होने लगी। वमन, दस्त, सिर-दर्द और पेटमें दर्द होने लगा। इसलिए वे अपने ठहरनेके स्थानसे एक एकान्त कमरेमें चली गईं। जब गुरुणीजी महाराजने बहुत समय तक नई साध्वीजीको नहीं देखा, तो उन्होंने दूसरी साध्वियोंसे पूछा। एक साध्वीजी उन्हें ऊपर देखने गईं। वहां पहुंच कर उन्होंने हमारी चरित्रनायिकाको मूर्छित अवस्थामें पाया। उन्होंने तत्काल गुरुणीजी महाराजको बुलाया। वे वहां गईं और श्री देवश्रीजी महाराजकी अवस्था देखकर स्तब्ध रह गईं। उन्हें बड़ी चिन्ता हुई कि कल तो इसने चारित्र अङ्गीकार किया है और आज ही यह इतनी अधिक अस्वस्थ हो गई कि जीवनकी आशा भी लुप्त हो रही है। प्रत्येक सुलभ साधन द्वारा उपचार करने पर भी जब श्री देवश्रीजी महाराजकी अवस्थामें कोई सुधार नहीं हुआ तो इसकी सूचना गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजको दी। गुरुदेव अपने साथ वृद्ध साधु श्री हीरविजयजी महाराजको [illegible] स[illegible]को

करता था। जब इसे यह सर्व विदित हुआ तो वह भी आर्याओं (साध्वियों) के ठहरनेके स्थान पर आया और शीघ्र ही उसने औषधियोंका प्रबन्ध कर दिया। थोड़े ही समयमें हमारी चरित्र-नायिकाकी अवस्थामें कुछ सुधार होने लगा। वमन और दस्त बन्द हो गई। हाथ, पैर और सरमें पीड़ा कम हो गई। उनकी दोनों गुरु बहनें दवाकी मालिश करने लगी। इससे उन्हें कुछ शान्ति और चैन अनुभव होने लगा।

प्रातःकाल पुनः आचार्यदेव उन्हें दर्शन देने पधारे। ज्योंही उन्होंने "निस्सहि" का उच्चारण किया, हमारी चरित्रनायिकाने उन्हें वन्दना की और उनके दर्शन पाकर अपने भाग्यको सराहा।

धीरे २ श्री देवश्रीजी महाराज स्वास्थ्य लाभ करने लगी। इधर प्रति दिन उनके दर्शनार्थ श्रावक-श्राविकाओंका तांता बंधा रहता था और वे सबको सरल शब्दोंमें धर्मलाभ देती थी।

दीक्षाके साथ ही देवश्रीजी महाराज भी अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त करनेके लिए उत्कंठित रहने लगी। सदैव उनका समय प्रायः अध्ययन, मनन और चिन्तन में ही व्यतीत होता था। जैनागमों के साथ २ उनकी अभिलाषा संस्कृत व संस्कृत व्याकरण पढ़नेकी हुई। बिना व्याकरण तथा संस्कृतके ज्ञानके जैनागमोंको समझा भी तो नहीं जा सकता था। व्यक्तिकी इच्छा होती है तो उसको समय २ पर साधन भी मिलते जाते हैं। देवश्रीजीको भी पढ़ने का अनुपम अवसर प्राप्त हुआ।

जब गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज पट्टी नगरकी ओर विहार करने लगे तो गुरुणीजी महाराज श्री चन्दन-श्रीजीने उनसे विनति की कि उन्हें भी विहार करनेकी आज्ञा प्रदान की जाय। पर गुरुदेवने उन्हें कहा कि जबतक नव-दीक्षित साध्वीजीका स्वास्थ्य पूर्णतः विहारका कष्ट सहन करने योग्य नहीं हो, तबतक वे विहार न करें। यह आदेश देकर गुरुदेव तो पट्टी को विहार कर गये और साध्वियांजी महाराज सब वहीं विराजती रहीं।

जब हमारी चरित्रनायिकाको यह मालूम हुआ कि उनकी अस्वस्थताके कारण सब साध्वियां और गुरुणीजी महाराज विहार करनेसे वञ्चित रहे, तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने गुरुणीजी महाराजसे निवेदन किया कि वह विहार करनेके योग्य है और अब पूर्ण स्वस्थ है। उनकी विनति और आग्रहसे चन्दनश्रीजी महाराजने भी सब साध्वियों सहित पट्टीकी ओर विहार कर दिया

लेकर आई हो, ऐसी प्रतीत होती है। इनकी प्रशंसा इस शहरके घर घरमें हो रही है। ये शासनका उद्योत करनेमें आपका सहायक होगी, ऐसा प्रतीत होता है।" इस पर गुरुदेवने इतना ही फरमाया "ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो ऐसा ही होगा।"

गुरुदेवका आशीर्वचन आगे चाकर सत्य सिद्ध हुआ और इन्होंने गुरुदेवके उठाए गये कार्योंको सफल बनानेमें पूर्णतया सहयोग दिया जिसका विवरण पाठकोंको अन्यत्र पढ़नेको मिलेगा।

इस प्रकार मालेरकोटलाके श्रावक-श्राविकाओंने आपसे पूर्णतः लाभ उठाकर अपनेको धन्य समझा। विक्रम संवत् १९९६ का यह चातुर्मास गुरुदेवके सानिध्यमें आपने अपनी गुरुणीजी महाराजके साथ मालेरकोटलामें महिलाओंमें धर्मप्रचार करते हुए निर्विघ्न समाप्त किया।

हारिक ज्ञानके साथ साथ धार्मिक और आध्यात्मिक ज्ञानकी उन्नतिका भी वहां प्रबन्ध किया गया। नगरकी अनेक बालिकायें धीरे-धीरे वहां शिक्षणका लाभ लेने लगीं। छोटी-छोटी बच्चियां जब अपनी तुतली बोलीमें नमस्कार मन्त्रका उच्चारण करती अथवा चौबीस तीर्थंकरोंका नाम स्मरण करती, उस समय आनन्दका पार नहीं रहता था। इस प्रकार लुधियानामें दो महीना विराज- कर आपने होशियारपुरकी ओर विहार कर दिया।

# शिष्या रत्न

गुजरात प्रान्तमें स्तम्भन तीर्थके समीप नारगांव नामक एक प्रसिद्ध स्थान है। यहां करीब एक सौ घर पाटीदारोंके हैं जो सरदार कहलाते हैं। ये सब जैनधर्मावलम्बी हैं। यहां एक भव्य जिनालय भी है। प्रत्येक जैन यहां पर नित्य प्रति पूजा-पाठ, सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धार्मिक क्रिया करते रहते हैं। गुरुदेवके प्रभावसे सबकी धर्मकी ओर प्रवृत्ति और श्रद्धा अति-शय है। धर्मके पुण्य प्रभावसे यहां मुनि श्री [illegible] [illegible]विजयजी, [illegible]विजयजी आदि [illegible] [illegible]

४-५ दिव्य आत्माओंने चारित्र अंगीकार किया। इसी परिवार के श्रीउत्तमविजयजी महाराजके गृहस्थ अवस्थाकी पत्नी तथा भगिनी दोनोंने श्रीनेमविजयजीके समक्ष चारित्र अंगीकार करने की अभिलाषा प्रकट की।

मुनिश्रीनेमविजयजी महाराजने इन्हें बड़ौदाकी विजलीबाई नामक एक धर्मात्मा और विदुषी श्राविकाके पास जाकर उनकी सम्मति लेनेकी राय दी। उन्होंने कहा कि वह पुण्यवती श्राविका सर्व साधु-साध्वी समुदायके सम्पर्कमें आती है और इसलिए वह ठीक-ठीक बता सकती है कि तुम्हें किस साध्वीजीके पास दीक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

मुनिश्रीनेमविजयजी महाराजकी सलाह शिरोधार्य कर वे पालीताणाकी यात्रा करती हुई बड़ौदा पहुंची। वहां विजलीबाई से मिलकर इनकी आत्माको पूर्ण संतोष मिला और इन्होंने अपने आनेका अभिप्राय विजलीबाई को बताया। विजलीबाईने इन्हें कहा—"गुजरात प्रांतमें तो जैन साधु साध्वी अच्छी संख्यामें हैं। इसलिए तुम पञ्जाबमें जाकर दीक्षा लो और वहीं विचरण करो जिससे अपनी आत्माके कल्याणके साथ-साथ अन्य हजारों आत्माका भी कल्याण होसके।

विजलीबाईके धर्मभाई शेठ गोकुलचंदजीकी भी यही राय रही। इन दोनोंने इन्हें दीक्षाकी उचित व्यवस्थाका आश्वासन देकर अपने यहां ठहराया।

विक्रम सं०१९५६ की वैशाख शुक्ला ६ को होशियारपुरमें

दोनों का क्रमशः नाम श्री दानश्रीजी और श्री दयाश्रीजी रक्खा गया और वे दोनों हमारी चरित्रनायिका श्री देवश्रीजी महाराज की शिष्या बनीं। इसबार चातुर्मास यहीं पर हुआ।

होशियारपुरके चातुर्मास के पश्चात् हमारी चरित्रनायिका अन्य छोटे-छोटे गांवों में विहार करती हुई अपनी गुरुणीजी सहित जालन्धर पधारीं। उस समय मंडियालामें एक जिन मन्दिरका निर्माण कार्य सम्पन्न हो रहा था और प्रतिष्ठाका शुभ मुहूर्त निश्चित हो चुका था। इसलिए वहांके अग्रगण्य श्रावक ला० हमीरमलजी मण्डामलजी, वैशाखीरामजी, चेतरामजी आदि उनसे मंडियाला-गुरु पधारनेकी विनति करने आये। वहांके श्रीसंघकी भक्ति, भावना और उत्साहको वे कैसे टालतीं। इस जिनमन्दिरका प्रतिष्ठा-संस्कार पूज्यपाद गुरुदेव श्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजीके कर-कमलोंसे सम्पन्न होनेवाला था। वे वहां पधारीं।

प्रतिष्ठानन्तर हमारी चरित्रनायिका श्री देवश्रीजी महाराजने अपनी गुरुणीजी श्रीचन्दनश्रीजी तथा गुरु बहनें श्री छगनश्रीजी श्री उद्योतश्रीजी तथा अपनी सुशिष्या—श्री दानश्रीजी और श्री दयाश्रीजी महाराज आदि ६ ठाणोंके साथ छोटे-छोटे गांवोंमें धर्म-प्रचारका कार्य करती हुई अमृतसर पधारीं।

इधर श्री दानश्रीजी महाराजकी गृहस्थावस्थाकी मातुश्री भी दीक्षा लेनेके विचारसे आई हुई थीं। गुजरातमें जब उन्होंने पू० आचार्य विजयकमलसूरिके समक्ष दीक्षा लेनेकी अभिलाषा प्रकट की तो उन्होंने श्री देवश्रीजी महाराजके पास दीक्षा ग्रहण करनेकी

सम्पन्न हुआ और वे हमारी चरित्रनायिका श्री देवश्रीजी महाराज की शिष्या बनीं। उनका नाम श्री क्षमाश्रीजी महाराज रक्खा गया।

कुछ समय पश्चात् तीनों साध्वियां लौटकर अमृतसर पधारीं। अब अमृतसरमें सात साध्वियोंका समुदाय हो गया और दिन प्रतिदिन नारियोंमें धर्मरुचि बढ़ती रही।

बाई आदि कई श्राविकाएं आपके साथ आईं और आपकी अग-
वानीके लिए अम्बालासे लाला गंगारामजी आदि प्रमुख श्रावक
तथा चौधीबाई आदि प्रमुख श्राविकाएं सरहिन्द पर पहुंच गईं

रास्तेमें जगह-जगहसे आपके दर्शनार्थ नर-नारी आने लगे
यहां तक की राजपुरे और बंजारेकी सरायमें अम्बालाके प्रायः
समस्त नर-नारी नजर आने लगे।

विक्रम सं० १९५० की ज्येष्ठ शुक्ला तीजको आपने अम्बाला
शहरमें प्रवेश किया और इस वर्षका चातुर्मास इसी शहरमें
अनेकों धार्मिक कार्योंके साथ निर्विघ्न समाप्त किया।

चातुर्मासके पश्चात् सामानाके लोगोंकी विनतिको मान देकर
आप अम्बालासे सामाना पधारीं। आपने जिस उपाश्रयमें उतारा
किया, उस उपाश्रयमें आपके पधारनेके पूर्व स्थानकवासी श्रावि-
काएं सामायिक-प्रतिक्रमण करने आया करती थीं। आपके
पधारने पर उन्होंने प्रश्न किया कि हमलोग अब यहां पर
सामायिक आदि करने आसकती हैं या नहीं? आपने केवल
इतना ही फरमाया

"उपाश्रयका अर्थ ही उपासनागृह होता है। अतएव इस स्थान
पर धार्मिक क्रियाओंके अलावा दूसरा कार्य हो ही क्या
सकता है?"

इन श्राविकाओंने आपका स्पष्ट कथन सुनकर निवेदन किया
कि हमलोग तो मुंहपत्ति बांध कर ही सामायिक किया करती [illegible]
[illegible]

"मालेरकोटलाके श्रीसंघकी विनतियां पर विनतियां चातुर्मास यहां करनेके लिए हो रही हैं और मैंने सामाणाके श्रीसंघको चातुर्मास करनेका वचन दे दिया है। अतएव तुम अपनी शिष्याओंके साथ वहां चातुर्मास व्यतीत करने चली जाओ। मैं सोचता हूं कि वहां पर चातुर्मासमें धार्मिक उन्नतिके कार्य अधिक होनेकी संभावना है।"

गुरुदेवकी आज्ञा पाते ही आपने मालेरकोटलाकी ओर विहार कर दिया वहांपर श्रावकोंके घर संतोषजनक थे परन्तु उनके घरोंमें अधिकतर वैष्णव घरकी स्त्रियां आई हुई थीं। आपके पधारनेसे वहांपर धर्मका उद्योत हुआ। आप प्रतिदिन व्याख्यान फरमाती उनमें जैन दर्शन का प्रतिपादन अति उत्तम शैलीसे किया करती थी, जिससे श्रोताओं पर आपका अच्छा प्रभाव पड़ता था। यहां तक कि जिन घरोंमें वैष्णव स्त्रियां आई हुई थीं, उन सबमें परिवर्तन होने लगा और धीरे-धीरे वे जैन श्राविकाओंके आचारानुसार चलने लगीं। आगे चलकर वहीं पक्की जैन श्राविकाएं बन गईं। इसप्रकार आपका विक्रम सं० १९६१ का चातुर्मास मालेरकोटलामें निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

एकबार मा. शेरकोटलासे ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई हमारी चरित्रनायिका लुधियाना पधारीं। लुधियानाकी जनता तो उन्हें अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति भी समझती थी, अतः आगमनके साथ ही सारे नगरमें प्रसन्नता व्याप्त हो गई। प्रतिदिन आपके व्याख्यानोंमें अच्छी संख्यामें सभी वर्गके मनुष्य उपस्थित होते थे। आपके व्याख्यान हृदयग्राही, सामयिक, सरल तथा वैराग्य रससे ओतप्रोत होते थे। जनतापर उनका अच्छा असर पड़ता था। स्थानीय स्व. ला. कन्हैयामलजी की सुपुत्री शान्तिदेवी का विवाह निकट भविष्यमें ही होने वाला था। बारबार चरित्रनायिकाके उपदेशोंका गहरा प्रभाव पड़ा और वह संसारसे उदासीन हो गई। उसका जीवन वैराग्य-रससे ओतप्रोत हो गया। अब उसका आनन्द, राग, प्रमोदमें मन नहीं लगता था। [illegible] एक दिन वह आपसे एकान्तमें प्रार्थना करने लगी

"आप मुझे भागवती दीक्षा देनेकी अनुकम्पा करें।"

[illegible]

हमारी परिव्रनादिका भी बीकानगरसे विहार कर ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई जब नाभाणा पहुंची तब बीकानेरके कई श्रावक तथा श्राविकाएं आपको लेने यहां आये।

इधर पञ्जाबियोंको यह समाचार मिला कि साध्वियोंसे पञ्जाब खाली हो रहा है तो उन्होंने यहांपर हठपूर्वक धरना दे दिया कि हम पञ्जाबसे बाहर साध्वियोंको नहीं जाने देंगे। इधर बीकानेर वालोंका भी हठ पूरा था कि वे लोग इन्हें ले जाकर ही दम लेंगे। दोनों दलोंका हठ जोर पकड़ने लगा। तब अन्तमें हमारी परिव्रनादिकाने समझाते हुए अत्यन्त मृदु स्वरमें कहा—

"साधु साध्वियोंको सभी क्षेत्र सम्भालने होते हैं। गुरुदेव का आदेश और हमारे दिये वचनोंको पालन करनेके महत्वको कम न समझो। हमें बीकानेर जाना ही होगा।

हां! इतना विश्वास रखो कि गुरुदेवकी भांति हम जहां कहींपर भी क्यों न रहें, पञ्जाबका स्थान हमारे हृदयमें रहेगा।"

आपके द्वारा इसप्रकार सान्त्वना देनेपर पञ्जाबियोंने धैर्यकी ठण्डी सांस ली और बीकानेरवालोंने अपनी इस विजयपर दादा श्री आत्मारामजी महाराज, गुरुदेव श्रीविजयवल्लभ सूरीश्वरजी और आदर्श प्रवर्तिनी आर्या श्रीदेवश्रीजीकी जयसे वायुमण्डल गुंजारित कर दिया।

पञ्जाबसे बीकानेरका मार्ग अत्यन्त कठिन व कष्टपूर्ण है। ऊंचे २ रेतीले टीले, दूर २ तक फैली हुई बालू और उसमें मिले हुए भूट कांटे बड़ेसे बड़े साहसी मनुष्यको भी एकबार उस मार्गपर

चलनेमें हतोत्साह कर देते हैं। साधारण व्यक्ति तो चलनेका साहस ही नहीं कर सकता। पर जिनके हृदयमें जनकल्याणकी भावना लहरा रही है, उनके लिये तो कंटकपूर्ण और बालुकामय मार्ग भी शान्तिकी पगडंडियां हो जाते हैं और शूल भी फूल हो जाते हैं। आदर्श साध्वी देवश्रीजीने भी मार्गके इन कष्टोंकी परवाह न की और साधु-जीवनकी परीक्षा समझते हुए मार्गपर चलती रही। कभी उनके पांव घुटनों तक रेतीमें धंस जाते थे तो कभी कांटोंसे बिद्ध हो लहुलुहान हो जाते थे, तो कभी तवासी तपती हुई रेती पर जल उठते थे। पर उन्होंने तो इन दुखोंमें भी सुखका अनुभव किया। धन्य है उनकी धैर्यता और सहिष्णुता को।

मार्गमें जगह-जगह दो-दो चार-चार दिनकी स्थिरता करती हुई आप अपने धर्मोपदेशों द्वारा वहांके नर-नारियोंमें धार्मिक संस्कार जागृत करती हुई बीकानेर सकुशल पहुंची।

बीकानेरके लोग श्रद्धालु हैं और साधु-साध्वियोंके व्याख्यान आदि श्रवण करनेका पूरा लाभ उठाते रहते हैं।

बीकानेरमें भी देवश्रीजीने अध्ययन नहीं छोड़ा। पं० जयदयालजी शर्माके पास अध्ययन करने लगीं। अध्ययनमें आपको एक प्रकारका आनन्द अनुभव होता था अतः अब कभी कोई [illegible] समय [illegible] अध्ययन करती ही मिलती। [illegible] नहीं था

आचार्य श्री [illegible] महाराजके आदेशानुसार
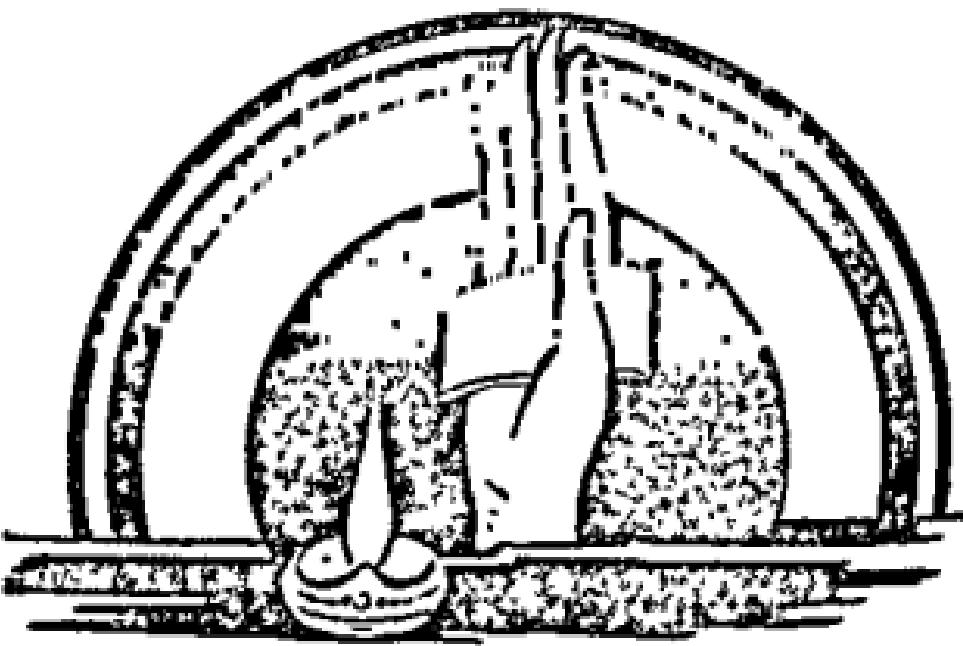
# अद्भुत चमत्कार

आपने जब पञ्जाब छोड़ा, तबसे मनमें यह संकल्प कर रखा था कि तीर्थाधिराज श्री शत्रुंजयतीर्थकी निनाणू यात्रा अवश्य करने जाना है। बीकानेरके चातुर्मास सम्पूर्ण होने पर तो आपकी भावना यात्राके लिए और भी प्रबल हो उठी।

बीकानेरसे विहार कर आप भीनासर पधारी। यहां पर दो दिनोंकी स्थिरता कर पार्श्वनाथ प्रभुकी भक्तिका लाभ लिया।

यहां पर बीकानेर श्रीसंघकी ओरसे दो दिन तक पूजाएं तथा प्रभावना और स्वधर्मीवात्सल्य होते रहे।

बीकानेरसे गंगाशहर, देशनोक, नोखामण्डी, मोगोलाव आदि स्थलों पर धार्मिक उपदेश देती हुई आप नागौर पधारीं।

कुछ दिन तक नागौरमें स्थिरता करने पर भी आप प्रतिदिन उपदेश फरमाती रहीं। आपके उपदेशसे पूजाओं, प्रभावनाओं, स्वधर्मीवात्सल्य तथा दान-प्रचार आदिमें लोगोंने अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग किया।

एक दिन आपने फलौदी पार्श्वनाथकी तीर्थयात्राके महत्वको समझाया जिससे प्रभावित हो नागौरके अनेक नर-नारी आपके साथ फलौदी पार्श्वनाथकी यात्रार्थ पधारे।

फलौदीसे ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई आप पाली पधारीं। यहां पर नवलखा पार्श्वनाथप्रभुके दर्शन कर अति प्रसन्न हुईं। यहांसे आप घाणेराव, वरकाणा, सादड़ी, राणकपुर आदि गोड़वाड़ पञ्चतीर्थीकी यात्रा करती हुई आबू पर्वत पर पधारीं।

आबू भारतके प्रसिद्ध पर्वतोंमेंसे एक है। यह भारतके अति मनोहर और भारतकी बहुत बड़ी सीमामें फैले हुए सुप्रसिद्ध 'अरवली' पहाड़ोंकी सबसे बड़ी श्रेणी है। आबूमें गुजरात और राजपूताना के परमार राजाओंका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। अतः ऐतिहासिक दृष्टिसे भी आबू उल्लेखनीय और प्रशंसनीय है। आबूकी 'जैन' प्रसिद्धिमें प्रधान कारण और ही हैं वे हैं आबू—देलवाड़ाके जैन मन्दिर

आबू पर्वतपर जो देश-विदेशके लोग जाते हैं बहुधा वे सबके सब आबू-देलवाड़ाके जैनमन्दिरोंको देखने ही के लिये जाते हैं। सुप्रसिद्ध चौलुक्य राजा भीमदेवके सेनापति विमलमन्त्री का बनाया हुआ 'विमल वसही' और महामन्त्री वस्तुपाल तेजपालका बनाया हुआ 'लूणवसही' ये दो ही मन्दिर आबू पहाड़ की विश्वविख्यातिके कारण हैं।

आबूके इन जैन-मन्दिरोंके पीछे जैन इतिहासका ही नहीं, बल्कि भारतवर्षके इतिहासका बहुत बड़ा हिस्सा समाया हुआ है। क्योंकि आबूके उपर्युक्त प्रसिद्ध जैन मन्दिरोंके निर्माता कोई सामान्य व्यक्ति नहीं थे। वे देशके प्रमुख राज्योंके सेनापति और मन्त्री थे। उन्होंने उन राज्योंके राज्य-शासनमें बहुत बड़ा हिस्सा लिया था।

केवल भारतवर्षमें ही नहीं, किन्तु यूरोप, अमेरिका आदि पाश्चात्य देशोंमें भी आबू पर्वतने अपनी रमणीयता एवं देलवाड़ा के सुन्दर शिल्पकलायुक्त जैन मन्दिरोंके द्वारा इतनी ख्याति प्राप्त कर ली है कि उसका विस्तारपूर्वक वर्णन करना इस स्थल पर अनावश्यक होगा।

आबू रोडसे १७॥ मील तथा आबू कैम्पसे १ मील दूर, देलवाड़ा गाँवके निकट ही एक ऊँची टेकरीपर विशाल घेरेमें श्री श्वेताम्बर जैनों के पाँच मन्दिर मौजूद हैं जिनमें महावीर स्वामी का मन्दिर, भीमाशाहका पित्तलहर मन्दिर, चौमुखजीका मन्दिर जिसको खरतर वसही कहते हैं दर्शनीय हैं परन्तु आबूकी

इतनी ख्यातिके प्रधान कारण तो विमल वसहि और लून वसहि ये दोनों मन्दिर ही हैं।

हमारी चरित्रनायिकाने भाव-भक्ति पूर्वक इन पांचों मन्दिरों के दर्शन किये और जब तक यहां पर रहीं तबतक अधिक समय इन मन्दिरों में प्रभुके सन्मुख ध्यान लगाने ही में व्यतीत किया करती थी।

देलवाड़ामें कई दिन स्थिरता कर अचलगढ़के मन्दिरोंका दर्शन करती हुई आप अणादरा, मंडारा आदि स्थानोंका परिभ्रमन करती हुई जीरावला पार्श्वनाथके दर्शन करने पधारीं। तत्पश्चात् भूतड़ी आदि ग्रामोंमें विचरण कर ज्योंही पालनपुर शहरके बाहर स्थानमें पहुंची त्योंही एक व्यक्तिने निवेदन करते हुए कहा :

"पूज्यनीया! शहरमें प्लेगका प्रकोप होनेकी वजहसे यहांके नवाब साहबने प्रत्येक व्यक्तिके शहर प्रवेशपर पाबन्दी लगा रक्खी है। अतएव कृपया आप आगे न बढ़ें।"

आप आगेसे विहार कर आई थीं, अतः वे विचार करने लगीं कि अब कौन-से स्थलपर स्थिरता करनी चाहिये। इतनेमें एक घोड़ागाड़ी सामनेसे आती दिखाई दी जो आपके समीप आकर खड़ी हुई। उसमेंसे एक व्यक्ति आपको हाथ जोड़े निकला। वह यहांके नवाब साहबका वजीर था।

उसने आपसे निवेदन किया कि अभी-अभी यहांके नवाब साहबको समाचार मिला है कि बाहरसे कई साध्वियांजी पधारी हैं। अतएव वे आपके दर्शनकी तीव्र अभिलाषा रखते हैं

हमारी चरित्रनायिका अपनी शिष्याओं सहित नवाब साहब को दर्शन देने ज्योंही आगे बढ़ी, त्योंही सामनेसे हाथ जोड़े हुए नवाब साहब ने आकर आप लोगोंको सविनय वन्दन करते हुए सुखशाता आदि प्रश्नोंके पश्चात् उनका परिचय जानना चाहा। आपने फरमाया—

"हम लोग स्वर्गस्थ आचार्य श्री आत्मारामजी महाराजके संघाड़ाकी साध्वियां हैं और गुरुदेव श्री विजयवल्लभसूरिजीकी आज्ञानुवर्त्ति हैं।"

दादा आत्मारामजी महाराज तथा गुरुदेव श्री विजयवल्लभ सूरिजी महाराजका नाम सुनते ही वे अति हर्षित होकर कहने लगे—

"दादा आत्मारामजी महाराज और गुरुदेव श्री विजयवल्लभ-सूरिजी महाराजके प्रति मुझे बहुत श्रद्धा है और मेरे अहोभाग्य हैं जो आपके जैसी देवांगना स्वरूप, विदुषी, धीर, गम्भीर आदर्श साध्वीजी पधारी हैं। आप बड़े हर्षके साथ शहरमें प्रवेश करें। मैं स्वयं आपकी हर प्रकारसे सेवा करनेको प्रस्तुत हूं। शायद आपके चरण विराजमान होने ही से प्लेग जैसी बीमारी चली जाय तो क्या आश्चर्य ?"

आपने फरमाया— देव गुरु धर्मके प्रतापसे [illegible]

[illegible]

[illegible]

लिये एक मकानकी व्यवस्था कर और वन्दना कर जाते-जाते कह गये कि वे कल प्रातः आपकी सेवामें उपस्थित होंगे।

शहरके बाहर पहुंच कर नवाब साहबने सर्व जैन श्रावकों को आपके पधारनेकी सूचना देते हुए एक फरमान घोषित किया कि जो व्यक्ति इन गुरुणीजी महाराजके दर्शन करने शहरमें जाना चाहे उसके लिये नगरप्रवेशकी पूर्ण स्वतन्त्रता है।

दूसरे दिन प्रातः नवाब साहब आर्याजी महाराजका दर्शन करने पधारे पर उस समय साध्वियांजी जिनमन्दिरके दर्शनार्थ चली गई थीं। अतः नवाब साहबको बिना दर्शन निराश लौटना पड़ा। इधर झोंपड़ियोंसे निकलकर श्रावक-श्राविकाओंका दल आपके दर्शनार्थ शहरमें उमड़ पड़ा और वहांके श्री संघने आपसे निवेदन किया कि प्लेगकी वजहसे आप शहरमें न विराजकर बाहर उद्यानमें विराजें। आपके लिये झोंपड़ियोंकी व्यवस्था कर दी जायगी परन्तु आपने फरमाया :

"जब तक शत्रुञ्जयकी यात्रा न कर लें वहां तक एक स्थानपर हम चैनसे नहीं बैठ सकती हैं। अलबत्ता हम लोग तो आगे विहार करते हैं परन्तु धर्म प्रतापसे सर्वत्र सुख-शांति होगी।"

पालनपुर से विहार कर आप ज्योंही मेहसाना पधारी त्योंही यह बात पवन वेगसे सब ओर फैल गई कि जबसे आपने पालनपुरमें प्रवेश किया तबसे वहां प्लेगकी बीमारीका चिह्न तक न रहा।

धन्य है ऐसी त्यागी, तपस्विनी साध्वीजीको, जिनके चरण

स्पर्श मात्रसे प्लेग जैसी महामारीका प्रकोप शान्त हो गया। पालनपुरकी जनता आज भी इस अद्भुत चमत्कारकी घटनाका वर्णन समय समयपर किया करती है। सच है, महापुरुषोंके पुण्य प्रभावसे महान् से महान् संकट भी दूर हो जाते हैं।

# निर्वाण-यात्रा

जैन समाजमें परम पावन तीर्थाधिराज सिद्धक्षेत्र तीर्थको
कौन नहीं जानता ? कौन ऐसा जैन कुलमें उत्पन्न व्यक्ति होगा,
जिसकी एकबार इस तीर्थकी यात्रा करनेकी इच्छा नहीं हुई होगी ?
और कौन ऐसा मनुष्य होगा, जिसने एकबार जाकर अपनेको
भाग्यशाली, पुण्यशील, और कृतार्थ न समझा हो ? इस पुण्यभूमि
पर प्रथम पांव रखते ही मनुष्यके हृदयमें शुभ भावनाओंका
सरोवर लहराने लगता है। वह अपनी समस्त सांसारिक व्यथाओं
को भूलकर आत्मानन्दमें लीन हो जाता है। अनन्त सिद्धोंकी
इस पुण्यभूमिमें पहुंचकर मानव राग-द्वेष विहीन हो, जहाँकि

मुखका अनुभव करने लगता है। युग २ से मानव इस तीर्थकी यात्रा करता आया है और करता रहेगा।

सौराष्ट्रके इस पुण्य प्रदेशमें स्थित इस पर्वतकी महिमाका वर्णन करनेकी लेखनीमें शक्ति नहीं है। अनेक महाकवियों और लेखकोंने इसका वर्णन कर अपनी लेखनीको कृतार्थ किया है। अनन्त सिद्धोंकी निर्वाण भूमिके साथ-साथ योगियों व साधकों के लिए तो यह माताकी गोदके सदृश है। पर्वतकी चोटियों पर बने हुए मनोहारी जिनालय स्वर्गकी शोभाको भी लज्जित करते हैं।

हमारी चरित्रनायिका मेहसाणासे खरालमाम, तारंगाजी, भोयणीजी, बड़ी कल्लोल, वीरमगांव, चूड़ा, रमणपुर, विजयपुर, वीसानगर, बड़नगर आदि कई ग्रामों-नगरोंके जिन-मन्दिरों व तीर्थोंके दर्शन करती हुई तथा भव्य आत्माओंको उपदेश देती हुई शत्रुंजय तीर्थ यात्रार्थ पधारी। एक दिन आपने अपनी सुशिष्या साध्वी श्री दानश्रीजी महाराजको सम्बोधन करते हुए कहा :

"दानश्री! इस तीर्थराज ऊपर अनन्त तीर्थंकरों, गणधरों, मनुष्यों और तिर्यंचोंने शिवगति और देवगति प्राप्त की है और प्राप्त करेंगे।

इस तीर्थाधिराजका महद् उद्धार देवों और मनुष्यों द्वारा प्रत्येक चौवीसीमें किया जाता है।

वर्तमान चौवीसीके आद्य तीर्थंकर श्री आदीश्वर भगवान्

आपने धर्मलाभके साथ फरमाया :

"बहिन ! पढ़ाईका तो पार नहीं है और हममें पढ़ाई क्या है जो गर्वकर तुम्हें बतावें। फिर भी संस्कृतमें पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध तक अभ्यास किया है। पञ्जावसे शत्रुंजय पर निनाणू यात्रा करने आई थी, वह सम्पन्न हो गई है। अब जगह-जगहकी यात्राका लाभ लेती हुई पुनः पहुँचने की भावना है। मार्गमें शिक्षणकी जोगवाई मिली तथा यह देह कायम रही तो शिक्षण प्राप्त करनेका भाव है।"

आपके सीधे-सादे, स्पष्ट विचारोंसे श्राविका बहुत ही प्रभावित हुई और निवेदन करने लगी :

"आदरणीय ! घी अंधकारमें भी छिपा नहीं रहता है। आपकी क्रियापात्रता, सरलता व स्पष्टवादिताने मुझे आपकी ओर आकर्षित करलिया है। धन्य है आपका त्याग! धन्य है आपका जगह-जगह विचरण !! धन्य है पञ्जाब और राजस्थानके कठिन परिषह सहन करनेकी शक्ति !!! आप आज्ञा फरमावें, जिससे मैं भी श्रुतप्रदान देनेका लाभ प्राप्त कर सकूं।"

आपने श्राविकाकी अटल भक्ति देखकर इतना ही कहा। "जब तुम इतना अनुरोध करती हो तो हमारे कर्म ग्रन्थकी चाह है, सो अवसर देखकर लाभ लेना।"

श्राविकाने नम्र शब्दोंमें अर्ज किया, "जैसी आपकी आज्ञा, मैं बम्बई पहुँचकर आप जहाँपर होंगी, वहींपर कर्मग्रन्थ भेज दूंगी।"

आपने थोड़े दिनोंके पश्चात् शत्रुंजयसे गिरनारकी ओर प्रस्थान किया।

# खाण्डे की धार

शत्रुंजयसे जगह जगह विचरण कर, धर्मोपदेश देती हुई हमारी चरित्रनायिका श्री देवश्रीजी महाराज अपनी शिष्याओं सहित जूनागढ़ पधारीं।

जूनागढ़के जिनमन्दिरोंका दर्शनकर गिरनार तीर्थकी तलहटी पधारीं। वहां श्री श्वे० जैन धर्मशाला तथा श्री दि० जैन धर्मशाला है। दिगम्बरी बंधु अपनी धर्मशालामें अधिक ठहरते हैं परन्तु श्वेताम्बर अपनी धर्मशालामें अधिक न ठहरकर प्रायः पहाड़पर ही ठहरा करते हैं।

वर्तमान चौवीसीके २२ वे तीर्थंकर श्रीनेमिनाथ प्रभु इसी गिरनार पर मुक्ति पधारे थे। ऐसे पवित्र तीर्थकी यात्रार्थ हमारी

चरित्रनायिका प्रतिदिन सवेरे उठकर पाँचवी टोंक तक दर्शन करने जाती थी और वहांसे लौटते समय सहसावन होती हुई संध्याको तलहटी पहुँचती थी। आप प्रातः भूखे पेट पहाड़ पर चढ़ती और संध्याको पांच बजे तक तलहटी लौटकर आती। अतः सबों को सदैव एकाशन करना पड़ता था। आप वहांपर बिना भेदभावके दिगम्बर और श्वेताम्बर गृहस्थों के यहां गोचरी लाने अपनी सुशिष्या श्री दानश्रीजीको भेजा करती थीं। यद्यपि तलहटीमें लड्डू और सेवका भत्ता मिला करता था, जिसे गुजराती साधु प्रायः वहर लिया करते थे। परन्तु आप भत्ता वहरने के लिये कभी उद्यत नहीं हुईं।

दिगम्बर बन्धु श्वेताम्बर साधुओंको आहार पानी भक्तिसे नहीं देते थे। कोई कोई तो अपमान भी करनेका प्रयत्न किया करता था। एकदिन एक दि० श्रावकने साध्वी श्री दानश्रीजीको डण्डा दिखाते हुए कहा "प्रायः इधर गोचरी लेने आ जाया करती हो, क्या यहां तुम्हारे श्वेताम्बरों के घर हैं?

श्रीदानश्रीजी महाराज तो डरकर बिना आहार-पानी लिए लौट आईं और सारा वृत्तान्त अपनी गुरुणीजी श्रीदेवश्रीजी महाराजके सम्मुख आकर सुनाया। आपने कहा—

"तुम्हें इस प्रकार भय नहीं करना चाहिए बल्कि ऐसे व्यक्तियों को शान्तिपूर्वक समझाकर सन्मार्ग पर लानेका प्रयत्न करना चाहिए। चारित्रपालन करना कोई साधारण बात नहीं है। इसमें तो पग-पग पर परिषह आते रहते हैं। इन कटु परिषहोंको समता

# लघुतासे प्रभुता मिले

जूनागढ़से वंथलीमें चौथे आरेकी जिन-प्रतिमाओंका दर्शन करती हुई आप दीक्षा लेनेके पश्चात् दुबारा पालीताणा पधारीं। यहांपर इसबार पुनः निनाणु यात्रा कर भावनगर पधारीं।

भावनगरमें उनदिनों श्वे० जैन कान्फ्रेन्सका अधिवेशन होने वाला था जिसमें भारतके लोकमान्य सुधारक श्रीगुलाबचंदजी ढड्ढा आये हुए थे। आपके आगमनसे अधिवेशन विशेष महत्व रहा

आपने वहांपर जैन मंदिरोंके दर्शनका लाभ प्राप्त करनेके

धन्य है ऐसी शास्त्रों के प्रति विनयी साध्वीजी को और ध
है ऐसी लघुताको, जिन्हें इतनी शिष्याओंके होते हुए कि
मात्र भी अहंकार नहीं!

आप यहांसे बड़ौदा छावनी पधारी और पूज्य श्रीकुंकुमश्री
महाराजको सविनय विधिपूर्वक वंदन किया और थोड़े दि
तक उनके साथ भक्ति, सेवा और लघुताका परिचय दिया। कुंकु
श्रीजीने वृद्ध होते हुए भी देवश्रीजीका पूरा समादर किया त
वे बराबर उनके गुणोंकी प्रशंसा करती रहीं। वास्तवमें कवि
यह उक्ति कितनी भावपूर्ण है।

लघुतासे प्रभुता मिले, प्रभुतासे प्रभुदूर।

गुजरातकी पावन गोदमें बसा हुआ बड़ौदा शहर भारतव
का प्रमुख नगर है। व्यापारके साथ २ यह अनेक कलाओं त
शिक्षाका मुख्य केन्द्र है। यहांके स्वर्गीय महाराजा सयाजीरा
गायकवाड़ने इस नगरकी उन्नतिमें पूर्ण योग दिया था। परिणाम
स्वरूप यहां प्राचीन साहित्य-शोधस्थान, म्युजियम, कलिज आ
स्थापित हुए जो आज भारतवर्षमें अपना विशिष्ठ स्था
रखते हैं।

यहांको जैन समाज समृद्ध तथा धर्मशील समझी जाती है
इस पुण्य भूमिपर अनेक नर रत्नो ने जन्म लेकर इसके गौरवको
बढ़ाया है।

स्थानीय जैन समाजमें गुजरातके कोहेनूर नामसे तीन र
पैदा हुए हैं।

एक श्रद्धेय प्रवर्तक श्री कान्तिविजयजी महाराज, जिन्होंने पाटणके ज्ञानभण्डारोंका पुनरुद्धार किया और आजीवन ज्ञानकी साधनामें अपना सर्व समय देकर जैनसाहित्यके अमूल्य खजाने को बचाया।

दूसरे शान्तमूर्ति श्री हंसविजयजी महाराज, जिन्हों ने बंगाल, कच्छ, मारवाड़ और गुजरात आदिके ग्राम-ग्राम विचरण कर जैनधर्मका सन्देश सुनाया।

तीसरे हमारे वर्तमान गुरुदेव विश्ववत्सल, अज्ञान तिमिर-तरणि, कलिकाल-कल्पतरु, मरुधरसम्राट, पञ्जाबकेशरी, युगवीर जैनाचार्य श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज, जिन्हों ने परम पूज्य दादा श्री आत्मारामजी महाराज द्वारा लगाये हुए धर्मके पौधोंका सिंचन किया और उनके छोड़े हुए अधूरे कार्यको पूरा करनेके लिए अपने जीवनकी बाजी लगा रक्खी है।

ऐसी पवित्र भूमि पर छावनीसे हमारी चरित्रनायिकाने पदार्पण किया।

आपके पधारनेसे कई उपवास, कई बेले, कई तेले और अट्ठाइयां आदि तपस्याओंका ठाठ लग गया। प्रायः पूजाएं, प्रभावनाएं; स्वधर्मी वात्सल्य आदि होते रहे।

आपका धर्मोपदेश सुननेको महिलाओंके झुंडके झुंड आते रहते थे। आपकी उस वाणीमें वह आकर्षण था जिसकी वजहसे हर समय वहांके लोग जीव-दया, दान, तथा ज्ञान प्रचारमें खर्च कर अपनी लक्ष्मीका सदुपयोग करते

चातुर्मास सम्पूर्ण होनेको था अतः बम्बईसे सुश्राविका हीराकुंवरबाईने आपको कर्मग्रन्थकी पुस्तक शीघ्र भेज दी परन्तु आपको तो चातुर्मास उतरते ही विहार करना था अतः आगे स्थानपर जहां कहीं पर स्थिरता होगी, वहीं पढ़नेका निश्चय किया।

इस प्रकार आपने विक्रम सं० १९६९ का यह चातुर्मास गायकवाड़की भूमि पर बड़ौदा शहरमें अनेकों धार्मिक प्रवृत्तियोंके साथ व्यतीत किया।

बड़ौदासे विहार कर आप डभोई पधारीं। यहां पर मन्दिर और धर्मपरायण श्रावकोंके अनेक घर हैं। आप लोढ़न पार्श्वनाथ प्रभुके नित्यप्रति दर्शन करने जाती और वहां पर ध्यान धरती थीं। वहां एक महिनेकी स्थिरता कर धर्मोपदेश देती रहीं।

वहांसे आप सूरत पधारीं। जहांके ७८ भव्य जिनालयोंके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त किया। आपने गोपीपुराके ओसवाल मुहल्लेमें अपना ठहरना किया। इस शहरमें कई विद्वान श्राविकाएं हैं जो साध्वियोंको समय-समय पर पढ़ाती रहती हैं।

आपके व्याख्यानके समय उपाश्रयका हाल महिलाओंसे समूचा भर जाता था। आप अपने व्याख्यानों में प्रायः प्रसंगवश साधुत्व और साधु जीवनकी निष्ठाके प्रति उपदेश दिया करती थीं। आप कहती थीं—साधुत्व क्या है? साधुओंको किसी स्थिरता कौनसे स्थल पर कौनसे समयमें करनी चाहिए। साधुओं को आहार-पानी कैसा ग्रहण करना चाहिए। साधुओंको वस्त्र या पात्रों पर कदा मूर्च्छा नहीं रखनी चाहिए, इत्यादि २।

उस समय अन्य उपाश्रयोंमें विराजित कई साध्वियां तो ईर्षा-वश कई श्राविकाओंको उलाहना देतीं कि आजकल आपलोग सर्वकी सब श्री देवश्रीजी महाराजके यहां पर एकत्रित होती रहती हैं और यहां पर नहीं आतीं, ऐसा क्यों ?

वे श्राविकाएं स्पष्ट कहतीं—"आप लोगोंको और हम लोगोंको तो सर्वदा यहीं पर रहना है। परन्तु ये पञ्जाबी साध्वियां तो सदैव यहां नहीं ठहरनेकी। वे तो आज यहां पर हैं और कल दूसरे गांव होंगी। अतएव इनसे जितना लाभ प्राप्त कर लिया जाय, उतना अपना है।"

आपने दो मास तक स्थिरता कर जब आगे विहार करना चाहा, उस समय वहांके नर-नारियोंने आपको बहुत रोकना चाहा। परन्तु आपने हंसते हुए कहा—

बहता पानी निर्मला, बन्धा न गन्दा होय।
साधु तो रमता भला, दाग न लागे कोय॥

इससे उपस्थित लोग बहुत प्रभावित हुए और उनके संयम व त्यागकी प्रशंसा करते हुए उन्हें न रोका। पश्चात् आपने अपनी शिष्याओंके साथ भरूंचकी ओर विहार किया।

सूरतसे भरूंचके विहारमें रास्तेमें कई साध्वियोंसे आपका मिलन हुआ, उनको जब यह मालूम हुआ कि आप भरूंच पधार रही हैं तो वे कहने लगीं—'भरूंचमें शेठ श्री अनूपचन्द जी साध्वियों की अक्सर भूलें निकालते रहते हैं। अतः सम्हलके

आप उनसे कहतीं—"यह तो हमारे परम सौभाग्यकी बात है। उनसे परिचय होनेपर यदि हमारेमें भूलें होंगी, तो वे सब निकल जायेंगी।"

आपने जिस उपाश्रयमें अपनी स्थिरता की, उसी मुहल्लेमें सेठ श्री अनूपचन्द भी रहते थे और आपने जिस समय उपाश्रय में प्रवेश किया उस समय उसी उपाश्रयमें सेठ सा० अन्य साध्वियोंको वाचना दे रहे थे। वे जब वाचना देकर उठे, उस समय उन्होंने आपसे जिज्ञासुकी दृष्टिसे पूछा- "आपका पधारना किस ओरसे हुआ है।"

*आपने फरमाया—*

"अभी तो हमलोग सूरतसे आ रहे हैं परन्तु वैसे पंजाबसे इधर पधारना हुआ है।"

पंजाबका नाम सुनते ही सेठ साहबके हर्षका पार नहीं रहा। क्योंकि आप पू० श्री आत्मारामजी महाराजके अनन्य भक्तोंमें मुख्य भक्त थे। उन्हें पंजाब जैसे प्रान्तमें अनेकों परिषह सहन कर विचरण करनेवाले साधु-साध्वियोंके चारित्रके प्रति गर्व था।

सेठ साहबने निवेदन किया कि मेरे योग्य सेवा फरमावें।

आपने अति नम्र शब्दोंमें फरमाते हुए कहा "आप विद्वान हैं। हम तो आपसे कल्पसूत्रका अभ्यास करना चाहती हैं। परन्तु गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजकी आज्ञा बिना अधिक दिन तक स्थिरता करना अशक्य है। आप [illegible]

आपकी भावनाको लक्ष्यमें रखकर सेठ साहबने गुरुदेवको आपकी कर्मग्रन्थ-अध्ययन करनेकी अभिलाषाके विषयमें पत्र दिया। जिसके प्रत्युत्तरमें गुरुदेवने निम्नलिखित तार भेजा।

"साध्वियाँ बड़ौदा न जाकर भरूंच ही स्थिरता करें और सेठ साहबके पास कर्मग्रन्थका अभ्यास करनेका सुअवसर हाथ से न जाने दें।

आपकी भावना सेठ साहबके पास कर्मग्रन्थ अध्ययन करने की थी और अन्तमें वह सफल हुई। आपने दस मास तक स्थिरता कर सेठ साहबसे कर्मग्रन्थके अध्ययन करनेके अतिरिक्त कई उपयोगी विषयोंका अध्ययन और मनन किया।

विक्रम सं० १९९९ का यह चातुर्मास आपने भरूंचमें अध्ययन और मनन करनेमें निर्विघ्न समाप्त किया।

आपने पंजाबसे जब बीकानेरकी ओर विहार किया था उस समय आपने एक नियम कर लिया था कि जबतक गुरुदेव विजयवल्लभसूरिजी महाराजका दर्शन न हो, वहांतक दूध नहीं पीना। आप जब भरूंचसे बड़ौदा पधारे, तब आपको समाचार मिला कि गुरुदेव भी यहीं पधार रहे हैं तो आपके हर्षका पार नहीं रहा।

गुरुदेवका नगर-प्रवेश बड़ी धूमधामके साथ कराया गया। श्रीयुत सेठ खेमचन्द भाई द्वारा कराये गये उत्सवमें हजारों नर-नारियोंने योग दिया तथा गुरुदेवके दर्शन पाकर आपका दूधका लिया नियम भी पूरा हो गया।

पंजाबसे हजारों नर-नारी गुरुदेव तथा साध्वियोंजीके दर्शनार्थ उमड़ पड़े। कहावत भी है—'जहां राम वहां अयोध्या।' इसी प्रकार जहांपर पुण्यात्मा जीव विचरण करते हैं वहांपर उनकी पुण्याई भी उनके पीछे-पीछे फिरती रहती है।

आपने यहांपर गुरुदेवकी छत्रछायामें आचारांगसूत्र और उत्तराध्ययन सूत्रका योगवहन किया। इनके योगविधान अति कठिन होते हैं। करीब-करीब चार महीनामें उनकी विधि पूरी होती है।

आपके साथ-साथ आपकी तीन शिष्याओंने भी योगवहन किया।

विक्रम सं॰ १९६७ का यह चातुर्मास आपका गुरुदेवकी छत्रछायामें अनेकों धार्मिक कृत्योंके साथ सम्पन्न हुआ।

# छ'री पालता संघ

सेठ श्रीसैनचन्द भाई तथा सेठ श्रीचुन्नीलाल भाई आपसमें नाना-भानेज होते हैं। इनके द्वारा गंधारका छ'री पालता संघ गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजकी शुभनिश्रामें चातुर्मास सम्पूर्ण होते ही निकाला गया।

इस संघमें आपको भी अपनी शिष्याओं-सहित निमंत्रित किया गया।

संघमें गुरुदेव सोलह साधुओं सहित और आप सात साध्वियों सहित थी। साथमें अनेक श्रावक-श्राविकाओंने भी संघमें सम्मिलित होनेका सौभाग्य प्राप्त किया।

इस प्रकार चतुर्विध संघ छ'री पालता हुआ गंधारसे [illegible] रास्तेमें जगह-जगह पूजा, प्रभावना, धर्मोपदेश आदि [illegible] होते रहे। [illegible] सैनचन्द भाई और [illegible] [illegible]

एक वैद्य और डॉक्टर भी आकस्मिक बिमारियोंके लिए साथ थे जो प्रत्येक शिविरमें लोगोंकी सार-सम्हाल किया करते थे।

मार्गमें गावोंके लोग संघके दर्शन करने आते और गांवोंके लोगोंकी महिलाएं प्रभुके समवसरणके सामने गरबा व कीर्तन कर अपनी भक्तिका परिचय देती थी।

धन्य है, उनका जीवन जिनके उपदेशों द्वारा उन्नत कार्य होते हैं! धन्य है, वे जो अपनी लक्ष्मीका सदुपयोग इस प्रकारके उत्तम कार्योंमें करते हैं।

मार्गमें जितने जिन-मंदिर, स्कूलें, धर्म-शालाएं, और कमजोर स्थितिके स्वधर्मी आते थे उन सबको अच्छी रकम भेंट कर संघपति अपने धर्म-प्रेमका परिचय देते थे।

गंधार पहुंच कर प्रभुके दर्शन करनेके पश्चात् संघपतिको माला पहनाई गई और सबने सास-बहूके बनवाये हुए दो भव्य जिनालयों के दर्शन का अपूर्व लाभ उठाया।

देव-गुरु-धर्मके प्रसादसे छ'री पालता संघकी यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न हुई।

गंधारसे विहार कर हमारी चरित्रनायिका जगह-जगह पैदल भ्रमण करती हुई मीयागांव पधारी। तत्पश्चात् गुरुदेव भी विचरण करते हुए मीयागांव पधार गये।

अतएव गुरुदेवकी छत्रछायामें इसबार भी विक्रम सं० १९९८ का चातुर्मास मीयागांवमें अनेक धार्मिक कृत्योंके साथ निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

# प्रभावक की प्रभावकता

मीयागांवसे आप जगह-जगह विचरण करती हुईं फिर बड़ौदा पधारीं। यहां पर पूज्य श्री आत्मारामजी महाराजके संघाड़ेके साधुओंका मुनि-सम्मेलन होनेवाला था।

थोड़े दिन पश्चात् गुरुदेव आदि साठ-सत्तर मुनिराज भी मुनि सम्मेलनको सफल बनाने आ पहुंचे।

यहां पर गुरुदेवके [illegible] एक श्राविकाको भागवती दीक्षा दी गई जिनका नाम श्री [illegible] रक्खा गया था।

प्रशिष्या बनी, अर्थात् आपकी सुशिष्या श्रीदानश्रीजीकी शिष्या घोषित हुई।

श्री आत्मानन्द जयन्ती महोत्सव पर कपड़वंजके श्रीसंघका तार गुरुदेवके नामपर बड़ौदाके श्रीसंघपर आया इसमें पूज्य साध्वी श्रीदेवश्रीजी महाराजको भेजनेकी विनति की गई थी।

गुरुदेवने तार पाते ही तत्क्षण आपको आदेश फरमाया। "आपलोगोंको कपड़वंज चातुर्मास करना चाहिए।"

गुरुदेवकी आज्ञा पाकर आपने कपड़वंजकी ओर विहार कर दिया। आपकी अगवानी करने श्री महाकुंअरबाई आदि बड़ौदा ही पधार गई थी। जो कपड़वंज तकके विहारमें आपके साथ रहीं।

कपड़वंजके पास एक नाला पड़ता था। वह एकदम ऊपर तक भरगया था। आषाढ़का महीना था और चातुर्मासमें तो रास्ता ही रुक जाया करता था। इन दिनों वहांपर वर्षा हो गई थी। नालेमें पानी भरजानेके कारण वहांके श्रावक और श्राविकाओंका मन उदास हो गया। वे आपसे निवेदन करने लगे कि अब क्या होगा। आपने उनकी उदासी मिटानेके लिए कहा—

"व्यर्थकी चिन्ता क्यों करते हो ? ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो गुरुदेवकी कृपासे नालेका पानी मार्ग छोड़ देगा। तब हम सर्व निर्विघ्न कपड़वंज पहुंच जावेंगे।"

सत्य है महात्माओंके वचन खाली नहीं जाते। हुआ भी यही।

दूसरे दिन प्रातः सबोंने देखा तो यही नजर आया। नालेके पानीने मार्ग छोड़ दिया था। समय पर आपने फरूदकोटमें प्रवेश किया और वहांके श्रीसंघके हर्षका पार नहीं रहा।

यह है प्रभावककी प्रभावकता। अन्यथा नालेका पानी वर्षाके इन भरे दिनोंमें कैसे मार्ग छोड़ देता ?

इस चातुर्मासमें वहांकी कई श्राविकाओं ने आपके पास कर्म-ग्रन्थका तथा कईने प्रतिक्रमणका अभ्यास किया।

प्रायः नित्य प्रति बड़ी पूजाएं, प्रभावनाएं होती रहती थीं। आपके दर्शनार्थ हजारोंकी संख्यामें पञ्जाबके भाई-बहन आते रहे। इन सबके उतरने, ठहरने, खाने-पीने, तथा स्टेशनसे लाने और वापिस पहुंचानेकी व्यवस्था बहुत भाव-भक्ति-पूर्वक वहांके संघ द्वारा हुआ करती थी।

यह सब आपके प्रवचनों का असर था। क्योंकि आप अपने व्याख्यानमें स्वधर्मी बन्धुकी भक्तिका शास्त्रोक्त उपदेश फरमाया करते थे।

इस चातुर्मासमें एक सरल हृदय भूरीबहन नामकी श्राविकाने आपके पास कई प्रकारके उत्कृष्ट प्रत्याख्यान किये।

विक्रम सं॰ १६६६ का यह चातुर्मास अनेक धार्मिक कृत्योंके साथ फरूदकोटमें निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

# आदर्श

कपड़वंजसे विहार कर आप अन्तरोली आदि स्थलों पर विचरण करती हुई अहमदाबाद पधारीं। यहाँपर दो महिलाएं हर समय आप हीके पास रहने लगीं और केवल भोजन करनेके समय अपने घर पर आया करती थीं। इन महिलाओंके नाम क्रमशः श्रीमाणिक बहिन तथा श्रीअम्बु बहिन था।

अहमदाबाद शहर राजनगरके नामसे सुप्रसिद्ध था। यहाँपर वर्तमान समयमें कपड़ेकी अनेक मिलें हैं। और कपड़ेका व्यापार बहुतायत जैनियोंके हाथमें है।

आप शहरमें सेठजीके आश्रयमें ठहरी हुई थीं। यहाँपर उपरोक्त दोनों महिलाएं आपसे प्रतिदिन विनति करती रहती थी

"कृपालु! आप हमें दीक्षित करनेकी अनुकम्पा करें।" परन्तु आप को यह मालूम हो गया था कि इन दोनों श्राविकाओंको साध्वी श्री कुंकुमश्रीजीने प्रतिबोध दिया है। अतएव आपने स्पष्ट कहा—

"मैं अपने संघाड़ेमें कुसंप पैदा करना नहीं चाहती हूं। क्योंकि तुमलोगोंको पूज्य साध्वी श्री कुंकुमश्रीजी महाराजने प्रतिबोध दिया है। अतएव तुम्हें उन्हींके पास दीक्षा ग्रहण करनी चाहिये अन्यथा उनकी आज्ञा बिना मेरे पास तुमलोगोंकी दीक्षा नहीं हो सकेगी।

आपके बहुत समझाने पर अन्तमें श्री माणिक बहनने तो साध्वी श्री कुंकुमश्रीजीके पास दीक्षा ग्रहण की और श्री जम्बू बहन ने आपका पीछा नहीं छोड़ा और वह श्रीकुंकुम श्री महाराजसे आज्ञा लेनेके प्रयत्नमें लगी रही।

यह है धर्मके प्रति ममता, यह है शासनके प्रति वफादारी जिससे संघाड़ेमें कुसंप न होने पावे। यही हमारी चरित्रनायिका का आदर्श था।

आपके दर्शनार्थ श्रीमती हीराकुंअर बहन आदि बहनें प्रतिदिन उपस्थित होती थीं और सबप्रकारसे आपके प्रति भक्ति प्रदर्शित करती थी।

अहमदाबादसे आप तारंगाजी, पाटन आदि स्थलोंपर पैदल भ्रमण करती हुई और मार्गमें जिन दर्शनोंका लाभ लेती हुई राधनपुर पधारे।

राधनपुरमें जिनमन्दिरोंका दर्शनकर आपने संखेश्वर ना?

नाथके दर्शनका लाभ लिया। तत्पश्चात् आपने अपनी शिष्याओं सहित सिद्धक्षेत्रकी ओर विहार किया। तीर्थंकरों की निर्वाण-भूमि होनेके कारण इस स्थानका नाम ही सिद्धक्षेत्र पड़ा।

इस शाश्वत परम पवित्र सिद्धक्षेत्रके शत्रुंजय, सिद्धाचल, विमलाचल आदि २१ नाम उत्तम हैं तथा उत्कृष्ट १०८ नाम हैं। इसपर अनन्त जीवों ने मोक्ष प्राप्त किया और करेंगे।

ऐसे परम पवित्र तीर्थाधिराजकी यात्रा आप गृहस्थावस्थामें एकबार और दीक्षित होनेके बाद दो बार कर चुके थे। फिर भी सर्वेश्वर पार्श्वनाथके दर्शनकर आप सिद्धक्षेत्र पधारी।

इसी समय उपाध्याय पूज्यश्री सोहनविजयजी महाराज श्री सिद्धक्षेत्रकी यात्रार्थ आए हुए थे। इधर जम्बू बहन भी अपनी रकम वगैरह समेटकर सुकृत्यों में उसका उपयोग करती हुई सिद्ध-क्षेत्र आई।

जब कुंकुमश्रीजी महाराजको ज्ञात हुआ कि मेरे द्वारा प्रतिबोध दी हुई महिलाको श्रीदेवश्रीजी महाराजने अपने आदर्श की रक्षाके लिए दीक्षा नहीं दी तो उससे वे अत्यन्त प्रभावित हुई और उन्होंने जम्बू बहनको आपके पास दीक्षा ले लेनेकी अनुमति दे दी। जम्बू बहनकी दीक्षाके साथ-साथ एक पुरुषकी भी दीक्षा हुई। जिसका समस्त खर्च जम्बू बहनकी ओरसे हुआ।

जम्बू बहनका नाम साध्वीश्री विवेकश्रीजी रक्खा गया। और वे हमारी आदर्श साध्वीश्रीदेवश्रीजी महाराजकी शिष्या बनीं। उक्त भाईकी दीक्षाका नाम मुनि श्रीसागर विजयजी रक्खा

गया। यह उपाध्याय मुनि श्रीसोहनविजयजी महाराजके शिष्य बने। अर्थात् गुरुदेव श्रीविजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज के प्रशिष्य घोषित किये गये।

इन दोनोंकी दीक्षाका कार्य गुरुदेवकी आज्ञासे श्री नेमसूरिजी महाराजके कर-कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ।

चैत्र-वैशाखमें सर्वत्र गर्मी पड़ा करती है। काठियावाड़में तो अधिक गर्मी पड़ा करती है। इस वर्ष भी काठियावाड़में आधे जेठ तक बहुत गर्मी पड़ी। पर अचानक जेठ सुदी सप्तमी और अष्टमी को मूसलाधार वर्षा हुई।

वर्षा अधिक होनेकी वजहसे यहांपर अत्यधिक नुकसान हुआ। प्रायः साधु-साध्वियोंने पालीताना-सिद्धक्षेत्रसे अन्यत्र विहार कर दिया।

इस भयंकर वर्षासे यहांपर मात्र माळियोंके घरोंका नुकसान न हुआ जो दादाके दरबारमें पुष्प चढ़ाने लेजाया करते थे और जिस धर्मशालामें आप विराजमान थे उसमें किंचित् मात्र भी नुकसान नहीं हुआ।

बम्बईसे गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज का पत्र सेठ मूलचन्द भाईकी मारफत आया। उसमें उन्होंने निम्न समाचार लिखे थे।

' हमने यहांपर सुना है कि वर्षा अधिक होनेसे पालीतानामें अत्यधिक नुकसान हुआ है। इसलिए बहुतसे साधु-साध्वियोंने विहार कर दिया है. सो तुम्हें भी विहार कर देना चाहिए ''

गुरुदेवके पत्रको पढ़ते ही देवश्रीजी महाराज चिन्तामग्न हो गई। आपको इसप्रकार चिन्तामसित देखकर मूलचन्द भाईने आपसे निवेदन किया कि आप इतनी उदास क्यों हैं ?

आपने कहा "भाई ! हमारे पञ्जाब लौटनेके पश्चात् सिद्धक्षेत्र याने शत्रुंजय तीर्थाधिराजकी यात्रा भाग्यमें लिखी या नहीं, यह कौन जानता है ? जब गुजरात, काठियावाड़की ओर आये हैं तो रह रहकर यहांकी यात्रा करनेका मन हुआ है। गुरुदेवकी आज्ञा बिना कहीं पर भी हम अपनी इच्छासे स्थिरता नहीं कर सकतीं हैं। यही उदासीका कारण है।"

आपके हृदयमें सिद्धक्षेत्रकी छत्र-छायामें चातुर्मास करनेकी तीव्र उत्कण्ठा देखकर शेठजीने निवेदन किया—

"कृपालु ! इतनी सी बात पर चिंताकी क्या आवश्यकता है ? मैं अभी गुरुदेवकी आज्ञा मंगवा देता हूं। उन्होंने तो शायद यही समझा होगा कि अत्यधिक वर्षासे हुए नुकशानके कारण सब यात्री लोग ही चले गये होंगे, तो आहार-पानीकी कठिनाई अवश्य पड़ती होगी। इसीलिए विहार कराना उचित समझा होगा।" प्रत्युत्तरमें आपने कहा—

"हमलोग प्रारम्भ ही से गोचरी गांवमें आकर गृहस्थोंके घरों से लाते हैं। क्योंकि हमलोग यहांके चालू रसोड़ोंसे आहार-पानी नहीं ग्रहण करते हैं। यदि गुरुदेवकी आज्ञा हो जावें तो सिद्धक्षेत्र पर दादाकी यात्रा करनेके भाव अवश्य हैं।"

शेठ श्री मूलचन्दजीके पत्रोत्तरमें बम्बईसे गुरुदेवने लिखा—

"साध्वी श्री देवश्रीजीको अनुकूलता होवे तो वहीं चातुर्मास कर लें।"

गुरुदेवकी आज्ञा पाने पर हमारी चरित्रनायिकाके हर्षका पार नहीं रहा। वहां पर विराजित साध्वीश्री हितश्रीजीको जब यह समाचार मिला कि आदर्श साध्वी श्री देवश्रीजीने यहीं चातुर्मास करना दिया, तब उनके साथ-साथ उन्होंने भी चातुर्मास वहीं करनेका निश्चय किया।

महाराष्ट्र प्रांतके अन्तर्गत बराड़ निवासी धर्मपरायण, देवगुरु भक्तिकारक सुश्राविका श्रीमती टट्टूबाई तथा चांदाबाई आदिने भी चरित्रनायिकाकी सेवामें व श्री सिद्धक्षेत्रकी छत्रछायामें चातुर्मास तक ठहरनेका निश्चय किया और गुरुणीजी महाराजकी सेवा करनेका लाभ उठाया।

औदारिक शरीरका स्वभाव ही सड़न व गलन है। अतः व्याधियोंका आना कोई आश्चर्यकी बात नहीं। व्याधि यह नहीं देखती है कि वह किसके शरीरमें प्रविष्ट हो रही है। वह तो राजा से लेकर रंक तक सबको अपनी चपेटमें कभी न कभी ले ही लेती है।

हमारी चरित्रनायिका भी इससे न बच सकीं। उनको पन्द्रह दिन तक अति जोरसे ज्वर आता रहा। उन दिनों किसी भी प्रकारकी दवाई हजम नहीं होती थी और मुंहसे हर समय थूक आता रहता था। शरीर अत्यन्त कृश हो गया था और हजम पचन क्रिया भी क्षीण हो गई थी।

शरीरकी यह स्थिति देखकर आप चिन्तित रहतीं। क्योंकि कार्तिक पूर्णिमाकी यात्राकी भावनासे ही आपने यहां चातुर्मास किया था और वह दिन निकट आ गया था। शारीरिक अशक्ति किसी भी अवस्थामें यात्रा करनेकी आज्ञा नहीं देती थी।

आपको चिन्तित देखकर सान्त्वनाके लिये आपकी सुशिष्याएं तथा श्रावकों श्राविकाएं हर समय यही कहा करती थीं "महाराज! हम, इतनी कमजोरी होते हुए भी आपको तलहट्टी तक की यात्रा पूर्णिमाको अवश्य करा देंगी।"

आप प्रायः मुस्कराते हुए यही उत्तर देते "यह देह क्षणभंगुर है। आत्मा अमर है। पुद्गलका स्वभाव ही ऐसा होता है। ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो गुरुदेवकी कृपासे सिद्ध-क्षेत्र तीर्थ पर दादाकी यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न होगी।"

धन्य है आपकी धर्मके प्रति दृढ़ताको, धन्य है उस पञ्जाब भूमिको जिसने ऐसी आदर्श साध्वीको जन्म दिया, जो अपने दादागुरु परम पूज्य श्री आत्मारामजी महाराज तथा गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजके नामको रोशन करती हैं।

कार्तिक पूर्णिमाके दिन अपनी सुशिष्याओं तथा सुश्राविकाओं के साथ शान्तिपूर्वक आपने यात्रा की और ज्योंही आपने सर्व लोगोंको पर्वत पर चढ़ते देखा त्यों ही आपने भी पर्वत पर चढ़ना प्रारम्भ कर दिया। श्रावकों श्राविकाओं ने बहुत कहा "महाराज! आप बिमारीका वजहसे बहुत कमजोर हो गई हैं। इसलिए पर्वत

# मर्यादा

सिद्धक्षेत्रसे तलाजा, महुआ, दाठा, घोघा, भावनगर, गिरनार वंथली, पाटण, मांगरोल आदि शहरोंमें विचरण कर, वहांके जिन मंदिरोंके दर्शनोंका लाभ लेती हुई और जगह-जगह धर्मोपदेश देती हुई आप जामनगर पधारीं।

विक्रम सं० १९७७ की चैत्र शुक्ला पूर्णिमाको आपने नगरमें प्रवेश किया। आर्यिकाके स्वागतका महोत्सव वहां बड़े उमंग

के साथ हुआ करता है। आस-पासके ग्रामोंके लोग इस प्रसंग पर योग देने पहुंचा करते हैं।

इस वर्ष भी आपश्रीजीकी स्वागत महोत्सव धूमधामसे हुआ था। जब आपने शहरमें प्रवेश किया, उस समय वहांपर स्थित सभी श्रावक-श्राविकाएं शहरके बाहर अगवानी करने पहुंचीं।

आपके देदीप्यमान उज्ज्वल मुख और निर्मल चारित्रके प्रभाव से प्रभावित होकर नगरकी जनता, नगर प्रवेशके समय ही आपके दर्शनार्थ उमड़ पड़ी। परम पूज्य दादा श्री आत्मारामजी महाराज और गुरुदेव श्रीविजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजकी जय घोषके साथ-साथ आपके प्रति भक्ति-भावनासे ओतप्रोत गहुंलियां गा-गा कर श्राविकाएं हर्षित हो रही थीं।

नगरके नर-नारी आपसमें वार्तालाप करते हुए जबान पर हर समय यही शब्द उच्चारण कर रहे थे—

"साध्वीजी महाराजकी मुख-मुद्रा कितनी शांत है। ब्रह्मचर्यके तेजसे भाल चम-चम करता रहता है। यह तो कोई चौथे आरेकी पुण्यात्मा जीव ही नजर आती हैं। धन्य हैं इनको, जो मारवाड़ जैसे प्रान्तोंके कठिन विहारोंके परिषह सहन करती हुई हमारे आंगनमें पधारकर हमें कृतार्थ कर रही हैं।

आपने सपरिवार श्रीसंघ सहित जिन-मंदिरके दर्शन किये। मंदिर इतने विशाल थे कि साठ-साठ रुपयेके दूरीपर पत्थ-वंदन करनेपर भी अनुमोदित होकर दर्शन स्पष्ट होता था। 'जिन-मन्दिर'

के दर्शनकर लेनेके पश्चात् आपका उतारा ओसवालों के उपाश्रयमें किया गया। जहां पर आपने सर्वप्रथम देशना फरमाते हुए कहा—

"आपलोगों ने जो हमारा सम्मानकर गुरुभक्तिका परिचय दिया है, यह केवल हमारा ही सम्मान नहीं हुआ है, यह तो जिन-शासनकी प्रभावना बढ़ानेका कार्य किया है। जो इतिहासके पृष्ठों पर अमर रहेगा।

हमलोग जो नंगे पैर ग्रामानुग्राम विचरण करते हैं। उसका लक्ष्य एकमात्र यही है कि अपने चारित्र-पालनकी मर्यादाओं के साथ-साथ जिन-मंदिरों के दर्शन करते हुए भव्य जीवों को उपदेश देकर सन्मार्ग पर लावें। जबतक हमलोग यहांपर स्थिरता करें वहां तक आपलोग धर्मोपदेश सुनें।

आपकी देशनाका इतना सुप्रभाव पड़ा कि वहांके लोग आपके धर्मोपदेशों का लाभ उठाकर आत्मोन्नतिके कार्यों में संलग्न रहने लगे।

कुछ दिनों की स्थिरताके पश्चात् आपने अन्यत्र विहार करने का विचार किया। जब वहांके संघको पता चला कि आप विहार करनेवाली हैं तो कुछ अग्रगण्य व्यक्ति विनम्र शब्दों में विनति करने लगे "महाराजजी! यह एक चातुर्मास तो कमसे कम आपको यहां ही करना पड़ेगा। क्यों कि आज तो आप यहां हैं। कल विहारके पश्चात् हम लोगों को आपका चातुर्मास कराने का लाभ कहां मिल सकेगा?"

आपने प्रेमपूर्वक समझाते हुए कहा:—

"एक जगह पर निरन्तर स्थिरता करनेसे गांव या शहरके श्रावक-श्राविकाओं पर मूर्च्छा उत्पन्न होनेकी शंका रहती है। इसलिए शास्त्रकार फरमाते हैं कि हमें एक स्थान पर कारण-विशेष बिना अधिक स्थिरता नहीं करनी चाहिए।"

इतनेमें एक श्राविकाने कहा "महाराज! आप फिर पञ्जाब प्रांतमें इतनी अधिक स्थिरता क्यों करते हैं और पञ्जाब लौटने की प्रबल भावना अन्य स्थानोंकी अपेक्षा अधिक क्यों रखते हैं?"

आपने उस श्राविकाको शांतिसे समझाते हुए कहा—

"बहिन! केवल पञ्जाबमें न तो परम पूज्य दादा श्रीआत्मारामजी ही ने विचरण किया है और न गुरुदेव श्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज ही ने और न हमलोगोंने ही, वरना मारवाड़ गुजरात, काठियावाड़के इतने विहार हमीने न किये होंगे। हमलोगोंको तो प्रत्येक जगहकी सार-सम्भाल रखनी पड़ती है। पञ्जाबकी ओर अन्य साधु-साध्वियोंका विहार नहीं होता है। परम पूज्य दादा साहबने अन्तिम समय शब्दोंमें कहा कि मेरे बाद पञ्जाबकी रक्षा "वल्लभ" करेगा। इसलिए गुरुदेव विजय वल्लभसूरीश्वरजी महाराजके आज्ञानुवर्ति साधुओंको अन्य साधुओंके विचरणके अभाववश बाध्य होकर बारम्बार पञ्जाब की ओर विहार करना पड़ता है।"

आपके सचोट जवाबसे उस श्राविकाके दिल में शान्ति होने

बना। तब केवल इतना ही उन्होंने कहा—पूज्यनीय! आप जैसे भी बने, वैसे यहां चातुर्मास करनेका प्रयत्न करें।

आपने फरमाया—"हमें यहांपर स्थिरता करनेमें किंचित मात्र भी उज्र न होगा, यदि गुरुदेवकी आज्ञा आपलोग मंगवालेवें। चातुर्मासके साथ-साथ हमें अपने अध्ययनकी ओर भी सोचना पड़ता है। जहांपर योग्य पंडितकी योगवाई हो, वहीं पर चातुर्मास में अध्ययनका अवसर मिल सकता है।"

पाठक स्वयं समझ सकते हैं कि उपरोक्त उद्गारोंसे हमारी चरित्र-नायिकाकी धर्मके प्रति कितनी लागणी, शास्त्रोंके प्रति कितना दृढ़ विश्वास और गुरुदेव पर कितनी अटल भक्ति और साथ-साथ अध्ययन करते रहनेकी कितनी दृढ़ निष्ठा थी।

यह है धर्मके प्रति सच्चा राग, यह है शास्त्रोंके प्रति दृढ़ विश्वास, यह है गुरुके प्रति अटूट भक्ति और यह है अध्ययन करनेकी तीव्र अभिलाषा।

वहांके संघने गुरुदेवकी सेवामें बम्बई आग्रहभरी विनति पत्र लिखा जिसमें यह भी लिख भेजा कि पंडित पोपटलाल भाई जैसे विद्वान द्वारा साध्वीजी महाराजकी पढ़ाईकी व्यवस्था भी उत्तम रहेगी। अतएव कृपया साध्वियोंजीको चातुर्मासकी आज्ञा यहीं जामनगरके लिए अवश्य फरमावें।"

श्रीसंघका पत्र पाते ही गुरुदेवने शीघ्र प्रत्युत्तरमें लिखा कि जब संघकी इतनी प्रबल इच्छा है और अध्ययनके लिए पंडितजीकी योगवाई मिलती है तो इस वर्षका चातुर्मास यहीं करना चाहिए।

गुरुआज्ञा पानेपर आपने जामनगर चातुर्मासकी स्वकृति दे दी।

आपने चातुर्मास प्रारम्भ होते ही पंडित श्रीनेमचंदभाईके पास स्याद्वादमञ्जरीका अध्ययन शुरु कर दिया।

इस वर्ष चातुर्मासमें वहां आपके सदुपदेशों से तपस्याओं का तांता लग गया। पूजाओं तथा प्रभावनाओं का प्रायः ठाठ लगा रहता था। आपके उपदेशका ऐसा असर पड़ा कि अनेकों ने अभक्ष्य वस्तुओं के उपयोगका त्याग कर दिया। अनेकों स्वधर्मी-वात्सल्य हुए। सामायिक, प्रतिक्रमण, तथा धार्मिक क्रियाएं करनेके लिए महिलाओं का समुदाय अधिकाधिक संख्यामें आपके पास आता रहा।

आपके दर्शनार्थ पञ्जाबके अनेकों नर-नारी आये। उन सबों के ठहरने, खाने, पीने, स्टेशनसे लाने और लेजाने आदि की सर्व व्यवस्थाका खर्च सेठ लालचन्द भाईकी ओरसे होता था। इस प्रकार उन्होंने सर्व प्रकारसे अति उत्तम व्यवस्था रखकर स्वधर्मी-भक्तिका लाभ लिया।

इसप्रकार विक्रम सं० १९७१ का आपका यह चातुर्मास अनेक धार्मिक कृत्यों के साथ निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

चातुर्मासके सम्पूर्ण होते ही आपने पंडित श्रीनेमचंद भाईसे कहा—

"आपके पास स्याद्वादमंजरीका अध्ययन चातुर्मासमें निर्विघ्न चलता रहा परन्तु अब ग्रन्थ पूरा किये बिना ही हमें विहार करना

चाहिए। क्योंकि हमलोग साधु-मर्यादाओं से बन्धे हुए हैं।"

जब वहांके संघको यह मालूम हुआ कि ग्रन्थ पूरा किए बिना ही मर्यादाके कारण साध्वियांजी विहार कर रही हैं तो उन्होंने आपको इस शर्त पर रोका कि यदि गुरुदेवकी आज्ञा आ गई तो आपको अवश्य रुकना पड़ेगा।

वहांके श्रावकों द्वारा उपरोक्त विषयपर पत्र लिखा गया तब गुरुदेवने प्रत्युत्तरमें यही लिख भेजा :—

"यदि वहांके श्रावक और श्राविकाओंका अति-आग्रह है तो ग्रन्थ पूरा न हो, वहां तक वहीं स्थिरता करें।"

उपरोक्त समाचार पाकर भला वहांका संघ इन्हें कैसे विहार करने देता ? अतः आपको ग्रन्थका अध्ययन पूरा करने तक वहीं स्थिरता करनी पड़ी।

आप अध्ययन करनेके समयके अतिरिक्त समयमें धर्मोपदेश दिया करतीं। जिससे वहांके लोगोंमें धर्मके प्रति रुचि अधिक होने लगी।

धन्य है ऐसी साध्वियोंको जो हर समय मर्यादाका ध्यान रखती हुई देश-काल-भावके अनुसार अपना चारित्रपालन कुशलताके साथ करती हैं।

परन्तु आपने उन्हें फरमाया—"यह तो पुद्गलोंका स्वभाव है। जब भोगावलीकर्मका उदय समाप्त हो जायगा उस समय सूजन हट जायगी और दर्द भी चला जायगा। हमें तो आगे ही विहार करना उचित है।"

आप विहार कर जब थंबली पधारी, उस समय तैल आदिका मर्दन करनेसे गोडेका सूजन बहुत कम हो गया।

आपके विहारके समय जामनगरसे संतोष बहन और केशर बहन नामकी दो श्राविकाओंने मार्गमें आपकी वैयावच्च कर गुरु-भक्तिका लाभ उपार्जन किया। वे कई ग्रामों तक आपके साथ-साथ रहीं। मार्गमें देवविजयजी आदि कई मुनिराजोंका मिलन हुआ। एकदिन उन्होंने आश्चर्य व्यक्त करते हुए दोनों श्राविकाओंसे कहा—कहां ये पंजाबी साध्वियां और कहां तुम काठियावाड़की महिलाएं, जो कभी घरसे बाहर अकेली पैर तक नहीं रखती। आज तुम विहारमें इन साध्वियोंके साथ ! सचमुच यह आश्चर्यका विषय है।

प्रत्युत्तरमें श्राविकाओंने निवेदन किया :

"धार्मिक स्नेहमें प्रांतीयता या जातीयताके बंधनको स्थान नहीं मिलता है। ये पूर्ण क्रियापात्र आदर्श साध्वीजी अपनी सुशिष्याओंके साथ जामनगरमें स्थिरता कर पधारी हैं। इन्होंने हमारे शहर पर जो उपकार किया है, वह हम नहीं भूल सकती हैं। इनके निर्मल चारित्रके प्रभावसे ही हम दोनो विहारमें कई दिनोंतक साथ रहनेका निश्चय कर आई हैं। इनसे जितना लाभ उठाया जाय

इतना ही अपना है।"

गुरुदेव श्री विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजके सूरत चातुर्मास होनेकी सम्भावना सुनकर आप इन गर्मीके दिनोंमें भी दश-बारह मीलका विहार कर ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई अहमदाबाद पधारी।

अत्यधिक गर्मी पड़नेके कारण अहमदाबाद पहुंचते-पहुंचते आपके बदनमें अनेक फोड़े हो गये और उनसे उनके सारे बदन में वेदनाका प्रकोप बढ़ गया।

अहमदाबादके श्रावक तथा श्राविकाओंने आपको वहीं स्थिरता करनेकी बारम्बार विनति की परन्तु आपने फरमाया—

"यहांपर साधु-साध्वियोंका अभाव नहीं है। हमें कारण विशेष याद देकर अन्यत्र विहार करना ही चाहिए।"

आपने गुरुदेवके दर्शनार्थ सूरत जानेके लिए अहमदाबादसे बड़ौदा की ओर विहार किया।

बड़ौदा पहुंचनेके साथ-साथ आपके बदनमें फोड़ोंका दर्द अधिक हो गया और आपकी सुशिष्या श्री हेमश्रीजी महाराज के भी बहुत फोड़े हो गये।

आपलोगोंकी यह दशा देखकर वहांके संघके अग्रगण्योंने गुरुदेवको समाचार भेजे कि साध्वियोंके फोड़ोंकी वेदना बढ़रही है अतएव इनको यहीं चातुर्मास करनेकी आज्ञा फरमावें।

गुरुदेवने साध्वियोंकी तबियत अस्वस्थ सुनकर सूचित किया कि श्रीदेवश्रीजी आदि सबका विचार यहींका है तो चातुर्मास करें।

आपकी गुरुदेवके दर्शनोंकी तीव्र अभिलाषा मनकी मन ही में रह गई। काया-कष्टकी वजहसे बाध्य होकर विक्रम सं १९७२ का यह चातुर्मास बड़ौदा ही में करना पड़ा।

इस चातुर्मासमें आपने एक प्रतिज्ञा की कि जबतक वे गुरुदेव का दर्शन न करलेंगी तबतक दूध ग्रहण न करेंगी।

धन्य है इनके जीवनको, जिन्होंने गुरुदेवके दर्शनोंकी तीव्र अभिलाषासे दूध जैसी आवश्यक वस्तुका भी त्याग कर दिया।

# जंगम तीर्थ और स्थावर तीर्थ

बड़ौदा से विहार कर आप ग्रामानुग्राम विचरण करती स्तम्भन तीर्थ पधारी।

वहाँ पर गुरुदेव के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ जिससे आपकी हृदयकी ली हुई आशा पूर्ण हुई।

गुरुदेवकी गुरुदासवस्वामी आगमजी की संगत करनेको आपके पास दीक्षा ग्रहण करने तीव्र अभिलाषा हुई।

आपने सुअवसर देखकर श्री पंचमहाव्रतकी दीक्षा ग्रहण करने की अभिलाषाका वर्णन गुरुदेवके सन्मुख किया।

अत गुरुदेवने विक्रम सं० १९७२ की माघ कृष्णा ६ को शुभ

मुहूर्तमें दीक्षित किया, और उसका नाम साध्वी श्री चंद्रश्रीजी रक्खा गया यह हमारी चरित्रनायिका की शिष्या बनी।"

इस अवसरपर वहांके लोगोंने पूजा-प्रभावना आदि महोत्सव धूमधामसे किये।

स्थम्भन तीर्थसे आप विचरण करती हुई धोलेरा पधारीं। यहां उपाध्याय मुनि श्री सोहनविजय जी महाराजके कर-कमलों द्वारा साध्वीश्री चंद्रश्रीजी महाराजको बड़ी दीक्षा प्रदान की गई।

वहांसे जगह-जगह भ्रमण करती हुई मार्गमें धर्मोपदेश देती हुई आप जूनागढ़ पधारीं।

यहांपर गुरुदेवकी छत्र-छायामें विक्रम सं० १९७३ का चतुर्मास व्यतीत किया।

आपने जब विक्रम संवत् १९७१ में जामनगर चातुर्मास किया था उस समय वहांके लोगों पर आपके धर्मोपदेशका अच्छा प्रभाव पड़ा, जिसका वर्णन हम पूर्व कर चुके हैं। वहांसे दो श्राविकाएँ आपके दर्शनार्थ पधारी। जिनका नाम क्रमशः नरबीबाई और धौलाबाई था। इन्होंने प्रार्थना की :

"आदरणीय। आपका चतुर्मास जबसे जामनगरमें हुआ था तबसे हमारा विचार आप ही के पास दीक्षा ग्रहण करनेका है। परन्तु सुअवसरकी प्रतीक्षा थी। हमारे सौभाग्यसे अब आपका फिर काठियावाड पधारना हो गया है। अतएव आप जामनगर पधारनेकी अनुकम्पा करें जिससे हमारा दीक्षामहोत्सव वहांपर सानन्द सम्पन्न हो।"

आपको जंगमतीर्थ गुरुदेव श्री विजयवल्लभसूरीश्वर और स्थावर तीर्थ श्रीगिरनारजी दोनोंके दर्शनोंका एक साथ सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इस लाभको थोड़े दिनोंके लिए छोड़कर जानेका मन न हुआ। परन्तु दो भव्य आत्माओंको दीक्षित कर उनकी आत्माओंके उद्धार करनेका काम भी कम महत्वका न था। अतएव आपने सारी कथा गुरुदेवके सन्मुख अर्ज की।

गुरुदेवने फरमाया—"मेरा आना तो अभी जामनगर न हो सकेगा पर तुम लोग चातुर्मास उतरते ही जामनगर विहार कर दो। वहांपर मुनिश्री जयविजयजी तथा मुनिश्री प्रतापविजयजी मौजूद हैं। उन्हें सूचित कर देता हूं, वे इन दोनों महिलाओंको दीक्षा दे देंगे।

आपने चातुर्मास सम्पूर्ण होते ही श्री जंगमतीर्थ और श्री स्थावर तीर्थ दोनोंको वंदना कर जामनगरकी ओर विहार किया।

आपके जामनगर पहुंचनेपर वहांकी जनताके हर्षका पार नहीं रहा। निश्चित समयपर शुभ मुहूर्तमें विक्रम सं० १९७३ के मिगसर मासमें दोनों महिलाओंको दीक्षित किया गया। इन दोनोंके दीक्षाका नाम क्रमशः साध्वी श्री [illegible] और साध्वी श्री [illegible] रक्खा। ये दोनों आपकी शिष्याएं बनीं।

इस दीक्षा महोत्सवपर बड़ा ही महोत्सव हुआ। पूजा प्रभावनाओंका ठाठ लग रहा था।

[illegible]
[illegible]

स्थित महावीर विद्यालयको १००) रुपैयाकी सहायता भेजी। वहां के लोग हर समय यही प्रशंसा करते रहे कि ये खुद हर समय कुछ न कुछ अध्ययन करती रहती हैं और विद्यादानके महत्वको कितने अच्छे ढंगसे प्रतिपादित करती रहती हैं। यही तो इनके साधुत्वकी सार्थकता है।

थोड़े दिनों पश्चात् आपने अहमदाबादकी ओर विहार किया। जामनगरसे अहमदाबादके मार्गमें स्थित ग्राम नगरोंमें धर्म-प्रचार करती हुई हमारी चरित्रनायिका अहमदाबाद पहुंची। वहां पहुंचकर सर्वप्रथम आपने सर्व जिनमंदिरोंके दर्शन कर सेठजीके उपाश्रयमें स्थिरता की। वहां कुछ दिन स्थिरताके पश्चात् एक दिन आपने अपनी शिष्याओंको सम्बोधित करते हुए कहा— "अब मारवाड़, मेवाड़की यात्रा करते हुए पंजाबकी ओर विहार करना चाहिये।"

यह बात जब वहांके लोगों को मालूम हुई कि पंजाबकी साध्वियां विहार कर रही हैं, तो उन लोगोंने अनुनय-विनय कर आपको रोकनेका प्रयत्न किया। आपने फरमाया "यहां पर साधु-साध्वियोंकी कमी नहीं है। अतएव जहांपर साधु-साध्वियोंका अभाव हो, वहीं पर हमें चातुर्मास करना चाहिये। परन्तु कम्मपयड़ीका अध्ययन इस चातुर्मासमें अवश्य करना है। अतः जहांपर जोगवाई होगी वहीं पर स्थिरता करेंगे।

आपका कम्मपयड़ीके अध्ययनका विचार सुनकर वहांके लोगोंने आपसे निवेदन किया "महाराज जी! आप यहांपर पूज्य

आचार्य सिद्धिसूरिजीसे कम्मपयडीका अध्ययन कर सकेंगी। हम चातुर्मास किये बिना विहार नहीं करने देंगे।"

यहां के लोगोंको अति आग्रह देखकर आपने गुरुदेवसे आज्ञा मंगवाई और गुरुदेवने प्रत्युत्तर में लिखा--

"यहां पर आचार्य श्री सिद्धिसूरिजीके पास कम्मपयडी का अध्ययन का लाभ मिल सके तो एक चातुर्मास अहमदाबादमें अवश्य कर लो।"

आपने गुरुदेव की आज्ञा पाकर आचार्य श्री सिद्धिसूरिजी महाराजसे कम्मपयडीके अध्ययन करने की अभिलाषा व्यक्त की इन्होंने फरमाया—"अन्य साधु-साध्वियां कोई अध्ययन करनेवाली होंगी तो तुम्हें भी सूचित कर दूंगा."

थोड़े दिनों बाद कई साधुओं और श्रावक तथा श्राविकाओं की भावना देखकर श्री सिद्धिसूरिजी महाराजने कम्मपयडी की वाचना देनी प्रारम्भ कर दी और आपको भी सूचित कर दिया।

कम्मपयडीकी वाचना लेनेके लिये साधके बाद कई साधु और श्रावक-श्राविकायें—सेठ मोहनलाल भाई, हीरा बहन, श्री [illegible] बहन आदि आने लगीं।

कम्मपयडीका विषय बहुत कठिन था। परन्तु कर्म-ग्रन्थोंके भी अधिक इसमें रस आता था, क्योंकि समस्त कर्म-प्रकृतिका वर्णन इसमें अच्छी तरहसे [illegible] [illegible] [illegible] सिर्फ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible]

एक एक दिन में पाँच पाँच सौ व्यक्ति प्लेगके रोगी होने लगे। यहाँ तक कि जिस जगह वांचना होती थी वहाँ पर भी दो नौकरों को प्लेग हो गया। ऐसी परिस्थितिमें श्री सिद्धिसूरिजी महाराज ने वांचना देनी बंद कर दी। क्योंकि शेठजीने उनसे निवेदन किया कि जबतक वांचना चलती रहेगी तबतक सबोंका आना जाना बना रहेगा। इसलिए आप वांचना बंदकर सर्व साध्वियों को विहार करने का हुक्म दे दीजिए। क्योंकि प्लेगका प्रकोप दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। ऐसी परिस्थितिमें चातुर्मासमें भी विहार कर देना शास्त्र-सम्मत है।

आचार्य श्री सिद्धिसूरिजी महाराजने अपनी आज्ञानुवर्तिनी साध्वियोंको विहार करनेका आदेश दे दिया और आपसे भी विहार कर देने के लिये कहा। तब आपने निवेदन किया :

"पूज्यवर! अभी तो चातुर्मासके दो महिने भी सम्पूर्ण नहीं हुए हैं। जो ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा, वही बनेगा। अतएव हमारा भाव तो मध्य चातुर्मासमें विहार करने का नहीं है।"

पूज्य श्री सिद्धिसूरिजी महाराजने फरमाया "एक पत्र तुम भी मुनि श्री वल्लभविजयजी को लिख दो, वे भी तुम्हें विहार करने की आज्ञा फरमा देंगे। मैं भी उन्हें पत्र लिख भेजता हूं।"

आप उदास होकर उपाश्रय की ओर चलीं। चलते २ मार्गमें विचार करने लगीं कि चातुर्मासमें विहार कैसे किया जाय? इतनेमें यह समाचार मिला कि साध्वी श्री गुलाबश्रीजी की एक शिष्या को प्लेग हो गया है और प्लेग ग्रसित साध्वीजी एकही दिनमें पर-लोक भी सिधार गई उनको मृत देहका अग्निसंस्कार भी कोई

करने नहीं आता है। तब आपने कई श्रावकोंको उपदेश फरमाया—

"श्रावकके कर्तव्यको भूल जाना, मानो अपनी आत्माको भूल जाना है। गुरुभक्ति उत्कृष्ट धर्म है। एक जैन साध्वीके मृतदेहकी बुरी दशा होगी तो आप कहीं भी मुंह दिखाने लायक न रह सकेंगे।"

आपके गम्भीर विचार और जोशीले वाक्योंसे उन श्रावकों का हृदय पसीज गया और वे उसी समय गाजे-बाजेके साथ उन साध्वीजीके मृतदेहका अग्निसंस्कार करने चले गये।

दूसरे दिन श्री सिद्धिसूरिजी महाराजने कुछ व्यंगके साथ कहा "देखा, वस मृत साध्वीका हाल। इसीलिए मैं कहता था कि तुमलोग सब विहार करदो। यदि साधु हो तो हमलोग भी सम्भाल लें, परन्तु यहां रहा साध्वियोंका काम, अतः तुमलोग अपने पात्र और पुस्तकें आदि बांध कर, जल्दी विहार कर दो।"

श्री सिद्धिसूरिजी की बात सुनकर आप उपाश्रयमें आकर अपनी शिष्याओंसे बात करने लगी। इतनेमें उपाश्रयमें उन्हें कोलाहल सुनाई दिया। बात यह थी कि उपाश्रयके आसपास जिन श्रावकोंके घर थे उनको यह मालूम हुआ कि सर्व साध्वियां विहार कर रही हैं तो वे सब मिलकर उपाश्रयमें आये। उस समय उपाश्रयमें समस्त सत्रह साध्वियां थी, उनमें श्री प्रेमश्रीजी महाराज सबसे वृद्ध थीं। वृद्धावस्था होनेके कारण वे नीचेके हाल ही में विराज रही थीं अतएव वे सब उनके समीप जाकर कहने लगे :

"हम श्रावक-श्राविकाएँतो यहीं पड़े हैं और घर द्वारके त्यागी
धु-साध्वियां प्लेगके भयसे विहार कर रही हैं, यह बड़े शर्म
ी बात है।"

साध्वीश्री प्रेमश्रीजीने उत्तरमें इतना ही फरमाया हमें आचार्य
सिद्धिसूरिजी महाराजकी आज्ञा प्राप्त हो गई है। अतएव
की आज्ञाके विपरीत नहीं कर सकती हैं। हां! ऊपर
ाबी साध्वियां हिम्मतवर हैं। उनकी क्या राय है, यह तुम्हें
वश्य मालूम करना चाहिए। इतना कह, प्रेमश्रीजीने हमारी
रित्र-नायिकाको पुकारा। उनकी आवाज सुनकर वे ऊपरसे
चेके हॉलमें पधारीं।

आपको देखकर उन श्रावकोंने क्रोधके आवेशमें कहना प्रारम्भ
या—"आपलोग विहार कर रहे हैं तो हमलोग भी नगर छोड़
अन्यत्र चले जाते हैं। ये जिन-मंदिर विना पूजाके यों ही
जायेंगे और उसका पाप आपलोगोंको लगेगा।"

आपने उनके क्रोधको शांत करते हुए गम्भीरताके साथ
माया :

"भाई! प्लेगकी बिमारीके भयसे विहार करनेका हमारा कभी
व ही न हुआ है, परन्तु जबसे उन साध्वीजीका देहान्त हुआ
तबसे तुमलोगोंने आना एकदम बन्द कर दिया। अगर उस
साध्वीकी तरह अन्य साध्वी पर भी प्लेगका प्रकोप हो जाय
र तुमलोगोंका मुंह तक दिखाई न पड़े तो हम पंजाबी साध्वियां
करेंगी?"

आपकी स्पष्ट बात सुनकर उन सर्व श्रावकों का क्रोध शांत हो गया और उसी समय सबने प्रतिज्ञाकी कि जब तक आप यहां पर स्थिरता करेंगी, वहां तक हमलोग प्रतिदिन आपके दर्शन करने आते रहेंगे और हमारी महिलाएं भी हर समय आपकी सेवामें उपस्थित रहेंगी।

उन श्रावकों की दृढ़ प्रतिज्ञा पर आपने फरमाया "हम आर्यायें मर्यादाओं में बन्धी हुई हैं। जिस शहरमें जो आचार्य विराजते हों। उनकी आज्ञाका पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। क्योंकि गुरुदेव तो बम्बईमें हैं। अतएव आचार्य श्रीसिद्धिसूरीजीकी आज्ञा अवश्य प्राप्त करायें।"

भक्तों की भक्तिके समक्ष श्री सिद्धिसूरीजी महाराजको भी अपना विचार बदलना पड़ा। इस तरह विषम परिस्थिति उपस्थित हो जाने पर भी आपने विक्रम सं १९७४ यह चातुर्मास अहमदाबाद ही में निर्विघ्न सम्पन्न किया।

# अर्बुदगिरि पर

आबू पर्वत यदि सर्व पर्वतोंमें श्रेष्ठ एवं परमतीर्थ स्वरूप माना जाय तो इसमें कोई विशेष आश्चर्यकी बात नहीं है। आबू प्राचीन तथा पवित्र तीर्थ है। पूर्वमें यहाँपर अनेक ऋषि-महर्षि लोग आत्मकल्याण तथा आत्म-शक्तियोंके विकासके लिए नाना-प्रकार की तपस्याएं किया करते थे।

आबू पर्वत पर सं० १०८८ में विमलशाहने जिन मंदिर निर्माण कराया। यद्यपि इस पर्वत पर उस समय कोई अन्य जन मंदिर विद्यमान नहीं था, परन्तु प्राचीन अनेक ग्रन्थोंसे

श्रीचम्पक श्रीजी आदि सात साध्वियोंका समुदाय था।

गुरुदेवकी सांसारिक अवस्थाकी भानजी श्रीहाई बहन म बड़ौदासे तारंगाजी यात्रार्थ आई हुई थी। उन्होंने आपके पा दीक्षा ग्रहण करनेके भाव व्यक्त किये परन्तु आपने कहा।

"तुम्हारे घरवालोंकी आज्ञा विना मेरे पास तुम्हारी दीक्षा हो सकेगी।"

वह भी यात्रार्थ आपके साथ साथ पैदल भ्रमण करती चल आई।

आपने पर्वत पर बसे हुए देलवाड़गांवके टीले पर स्थित पांच मंदिरों के दर्शन भाव-भक्ति पूर्वक किये तत्पश्चात् ज्यों ही आप स के साथ धर्मशालामें पधारी उस समय साध्वी श्रीहेमश्रीजीने विम शाह द्वारा बनाये गये मंदिर और वस्तुपाल तेजपाल द्वारा बना गये मंदिरकी कोरनी की कारीगरीकी प्रशंसा करते हुए कहा।

वे लोग कितने भाग्यशाली थे, जिन्होंने अपनी लक्ष्मीका यहां सदुपयोग किया है। ये मन्दिर आज तीर्थरूप बन गये हैं।

आपने फरमाया :

"हेमश्री! आबूके जैन मंदिर एक तीर्थरूप होकर मुक्तिको प्रा करानेमें साधनभूत तो हैं ही, परन्तु साथ ही साथ पुरातत्त्व जिज्ञासुओं के लिये भूतकालका इतिहास, रीतिरिवाज, व्यावहारि ज्ञान शिल्पशास्त्र एवं नाट्यशास्त्र आदि अनेक बातें प्रस्तु करते हैं।

आप तीन चार दिनकी स्थिरताकर प्रभु-मूर्तिके आगे ध्यान

लगाया करती थी। तत्पश्चात् आपने देलवाड़ेसे अचलगढ़की ओर विहार किया।

देलवाड़ेसे उत्तर-पूर्व (ईशान कोन) में लगभग ४॥ मीलपर और ओरियासे दक्षिणकी ओर करीब १॥ मीलकी दूरी पर अचलगढ़ नामक गांव है। देलवाड़ासे अचलगढ़ तक पक्की सड़क है। अचलगढ़ एक ऊंची टेकरी पर बसा है। यहां पहिले बस्ती विशेष थी। इस समय अल्प बस्ती है। इस पर्वतके उपरिभाग में अचलगढ़ नामका किला बना है। इसी कारण यह गांव भी अचलगढ़ कहा जाता है।

अचलगढ़में चार जैन मंदिर, दो जैन धर्मशालाएं, कार्यालयका मकान व एक बगीचा वगैरह जैन श्वेताम्बर कार्यालयके स्वाधीन है। यहां श्रावकका केवल एक ही घर है। कार्यालयका नाम शाह अचलसी अमरसी है। जैन यात्रियोंके लिए यहां सर्वप्रकार की व्यवस्था है। यात्री चाहें तो यहां ज्यादा दिन भी रह सकते हैं।

आपने दो दिनों तक अचलगढ़ पर स्थिरता करके प्रथम श्री चौमुखजीके मुख्य मंदिर और फिर श्री आदीश्वर, श्री कुंथुनाथ श्री शान्तिनाथ भगवानके मंदिरमें विराजती सर्व जिन प्रतिमाओं का दर्शन-वंदन कर अपनी अर्बुदगिरिकी यात्राको सफल बनाते हुए केसरियाजीकी यात्रार्थ उदयपुर मेवाड़की ओर प्रस्थान किया।

याजी, करेड़ाजी, दयालशाहका किला, अचलेश्वर, देलवाड़ा, अदबुदजी, चित्तौड़, कुम्भलगढ़ और आयड़ आदि अनेक तीर्थ मौजूद हैं, जहां लाखों या करोड़ोंकी लागतके आलीशान मन्दिर बने हुए हैं। राज्यके साथके जैनोंके सम्बंध का यह परिणाम है कि आधाटमें श्री जगचन्द्रसूरि महाराजको उनकी घोर तपस्या देखकर, 'महातपा' का विरुद दिया गया था जो आज तपागच्छ के नामसे प्रसिद्धी पा रहा है।

आज उदयपुर संघमें जैसा चाहिये वैसा संगठन नहीं दीख पड़ता है। उदयपुर संघके पास अनेक मंदिर, उपाश्रय, नोहरे, धर्मशाला आदि लाखों रुपैयोंकी सम्पत्ति मौजूद है। किन्तु जैसी चाहिये वैसी संगठन शक्तिके अभावके कारण, इन सम्पत्तियोंकी बड़ी क्षति हो रही हैं।

हमारी चरित्रनायिकाने उदयपुर की हाथीपोलवाली धर्मशालामें स्थिरता की और श्री शीतलनाथजी का मन्दिर, श्री वासु पूज्यजीका मन्दिर, चौगानका मन्दिर, वाड़ीका मन्दिर आदि ३५ या ३६ मन्दिरोंकी जिन प्रतिमाओंके दर्शनका तीन चार दिन तक लाभ उठाया। तत्पश्चात् आपने केशरियाजी तीर्थकी ओर विहार किया।

उदयपुरसे लगभग ४० मील की दूरी पर दक्षिण दिशामें स्थित केशरीयाजी का तीर्थ विश्वविदित है। केशरीयाजीका मंदिर अत्यन्त भव्य बना हुआ है। मूर्ति मनोहर तथा चमत्कारिक है। मूर्ति की चमत्कारिता का ही यह परिणाम है कि यहां

श्वेताम्बर तथा दिगम्बर, ब्राह्मन एवं क्षत्रिय, बल्कि अन्य वर्णके लोग भी दर्शन-पूजन आदिके लिए आते हैं। केशरीयाजीकी मूर्तिका आकार श्वेताम्बर मान्यताके अनुसार है। सदैवसे श्वेताम्बरोंकी ओरसे ध्वजादण्ड चढ़ाया जाता है। श्वेताम्बरों की मान्यतानुसार केशरीयाजी पर केशर चढ़ाई जाती है।

प्लेगका प्रकोप तो इधर भी सर्वत्र था परन्तु हमारी चरित्र नायिका अपनी शिष्याओं आदिके साथ ज्यों त्यों विहार करती हुई केशरीयाजी पहुंच गई। प्लेगके कारण आप गोचरी सर्वदा गांवकी झोंपड़ोयोंसे लानेके लिए साध्वी श्री वसंतश्रीजी और साध्वी श्री चम्पकश्रीजी को भेजा करती थीं।

केशरीयानाथजीकी प्रतिमा वर्तमान चौबीसीके प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव भगवान् की है परन्तु केशर अधिक चढ़नेकी वजह से केशरीयाजीके नामसे अधिक प्रसिद्धी है।

आपने यहां पर ग्यारह दिनकी स्थिरता कर दिनमें तीन २ बार प्रभुके दर्शन-वंदनका लाभ प्राप्त करती रही।

याजी, करेडाजी, दयालशाहका किला, अचलेश्वर, देलवाड़ा, अदबुदजी, चित्तौड़, कुम्भलगढ़ और आयड़ आदि अनेक तीर्थ मौजूद हैं, जहां लाखों या करोड़ों की लागतके आलीशान मन्दिर बने हुए हैं। राज्यके साथके जैनों के सम्बंध का यह परिणाम है कि आघाटमें श्री जगचन्द्रसूरि महाराजको उनकी घोर तपस्या देखकर, 'महातपा' का विरुद दिया गया था जो आज तपागच्छ के नामसे प्रसिद्धी पा रहा है।

आज उदयपुर संघमें जैसा चाहिये वैसा संगठन नहीं दीख पड़ता है। उदयपुर संघके पास अनेक मंदिर, उपाश्रय, मोहरे, धर्मशाला आदि लाखों रुपैयों की सम्पत्ति मौजूद है। किन्तु जैसी चाहिये वैसी संगठन शक्तिके अभावके कारण, उन सम्पत्तियों की बड़ी क्षति हो रही है।

हमारी चरित्रनायिकाने उदयपुर की हाथीपोलवाली धर्मशालामें स्थिरता की और श्री शीतलनाथजी का मन्दिर, श्री वासुपूज्यजीका मन्दिर, चौगानका मन्दिर, वाड़ीका मन्दिर आदि ३५ या ३६ मन्दिरों की जिन प्रतिमाओं के दर्शनका तीन चार दिन तक लाभ उठाया। तत्पश्चात् आपने केशरियाजी तीर्थकी ओर विहार किया।

उदयपुरसे लगभग ४० मील की दूरी पर दक्षिण दिशामें स्थित केशरीयाजी का तीर्थ विश्वविदित है। केशरीयाजीका मंदिर अत्यन्त भव्य बना हुआ है। मूर्ति मनोहर तथा चमत्कारिक है। मूर्ति की चमत्कारिता का ही यह परिणाम है कि यह

श्वेताम्बर तथा दिगम्बर, ब्राह्मण एवं क्षत्रिय, बल्कि अन्य धर्मके लोग भी दर्शन-पूजन आदिके लिए आते हैं। केसरियाजीकी मूर्तिका आकार श्वेताम्बर मान्यताके अनुसार है। यहींपर श्वेताम्बरोंकी ओरसे ध्वजादण्ड चढ़ाया जाता है। श्वेताम्बरों की मान्यतानुसार केसरियाजी पर केसर चढ़ाई जाती है।

प्लेगका प्रकोप तो इधर भी सर्वत्र था परन्तु हमारी चरित्र नायिका अपनी शिष्याओं आदिके साथ ज्यों त्यों विहार करती हुई केसरियाजी पहुँच गई। प्लेगके कारण आप गोचरी सर्वदा गाँवकी झोंपड़ियोंसे लानेके लिए साध्वी श्री चन्दनश्रीजी और साध्वी श्री पन्नश्रीजी को भेजा करती थी।

केसरियानाथजीकी प्रतिमा वर्तमान चौबीसीके प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव भगवान् की है परन्तु केसर अधिक चढ़नेकी वजह से केसरियाजीके नामसे अधिक प्रसिद्ध है।

आपने यहां पर ग्यारह दिनकी स्थिरता कर दिनमें तीन २ बार प्रभुके दर्शन-वंदनका लाभ प्राप्त करती रही।

# धार्मिक प्रभावना

आपने केशरीयाजी याने ऋषभदेव प्रभुका जन्म कल्याणक महोत्सव, जो चैत्र वदी ६ को था, उसका लाभ लेकर चार पाँच दिन बाद पंजाब जाने की भावनासे मारवाड़के लिये विहार कर दिया।

चैत्र-वैशाखके महिनों में सर्वत्र गर्मी पड़ा करती है। जिसमें मुख्यतः मेवाड़के पहाड़ी प्रदेशके पत्थर व कंकड़ सूर्यकी प्रखर किरणों से अधिक गर्म हो जाते हैं।

उस गर्मीमें विहार करनेके कारण सब साध्वियों के पैरों में छाले पड़ने लगे और मार्गमें जहां भी कहीं गर्म जलकी जोगवाई मिलती तो उसी पर निर्भर रहकर विहार करते थे। कहीं २ पर मक्कीकी राबड़ी पाकर संतोष करते थे और कहीं २ कुछ भी न

से आदर्श आर्या (साध्वी) श्रीदेवश्रीजी महाराजकी अगवानी करने चली आईं।

आपने उन दोनोंको वंदना करते हुए कहा "आप मेरी पूज्य हैं, आपको सामने इतनी दूर तक आनेका कष्ट नहीं करना चाहिए था। मेरी इच्छा आपको वंदन करने आनेकी थी। इसीको पूरा करने तथा धर्मकी प्रभावनाके हेतु ही इस ओर होकर पञ्जाब जानेका निश्चय किया है अन्यथा अजमेर, जयपुर होती हुई देहलीके मार्गसे पञ्जाब प्रवेश कर सकती थी।"

इन दोनों गुरु बहनों ने कहा।

आर्याजी! आप दीक्षामें भले हमसे छोटी हों परन्तु योग्यता में बहुत बड़ी हैं। यह तो आपकी नम्रता है जो दीक्षामें बड़ी होनेकी वजहसे हमें बड़ी मानती हैं। परन्तु हमारे दृष्टिमें अपने संघाडेमें आप ही प्रवर्तिनी पदके योग्य हैं और हम तो आपको प्रवर्तिनी सम ही समझते हैं।

धन्य है ऐसी गुरु-बहनोंको जो आपसमें एक दूसरेके पद और योग्यताको ध्यानमें रखकर शिष्टाचारमें एक दूसरेसे आगे कदम रखती हैं। यही तो सच्चा आदर्श है।

बड़रामसरमें स्वधर्मी वात्सल्य हुआ। अब यहाँसे बीकानेर के अनेक श्रावक और श्राविकाएं आपकी अगवानीके निमित्त दर्शनार्थ आ पहुँची।

आपने बड़रामसरसे विहार कर भीनासर पार्श्वनाथके दर्शन का लाभ लेती हुई गंगा दरवाजेसे अनेक नर नारियों सदा

समस्त साध्वियोंके साथ बीकानेरमें प्रवेश किया।

आपके पधारनेकी खुशीमें अट्ठाई महोत्सव रचाया गया। प्रतिदिन पूजा, प्रभावना, रात्रिभजन, आदि हर्षोल्लासके साथ होने लगे।

सौभाग्यवती सुश्राविका श्रीधन्नाबाई, सेठ भैरुंदानजी सेठिया की धर्मपत्नीने जो जबतक आप रहे तबतक प्रत्येक धार्मिक कार्य में तन-मन-धन खर्चकर अपनी भक्तिका परिचय दिया।

साध्वियोंको पढ़ानेके लिये पं॰ जयदयालजी शर्माको भी श्रीधन्नाबाईकी ओरसे नियुक्त किया गया था।

आपने सर्वप्रथम नन्दीसूत्रकी वाचना प्रारम्भ की। इसमें जैन-दृष्टिसे ज्ञानके स्वरूप और भेदोंका सुन्दर ढंगसे विश्लेषण किया जाता था।

आपने एक दिन ज्ञानदानके विषयमें धार्मिक उपदेश दिया जिससे प्रभावित हो श्रीधन्नाबाईने ६००) रुपैया श्रीमहावीर—विद्यालय बम्बईको भिजवाये।

आपके सदुपदेशसे बीकानेरियोंने बड़ोदा तथा पालीताणाके जीवदया तथा आयंबिल खातोंमें अत्याधिक रकम भेजी।

चातुर्मासमें मासक्षमण और पन्द्रह-पन्द्रह उपवास कई महिलाओंने किए और एक सौ अट्ठाइयां हुईं तथा बेला-तेला करने वालोंकी संख्या तो अनगिनित थी।

आपका विक्रम सं॰ १९८५ का यह चातुर्मास बड़े आनन्द महोत्सवके साथ अनेक धार्मिक प्रभावनाओंके साथ निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

# सौभाग्यशाली बीकानेर

बीकानेरका चातुर्मास निर्विघ्न सम्पन्न होनेके पश्चात् आप शहर के बाहर स्थित आजु-बाजुके स्थलोंमें पधारे, जैसे भीनासर शिवबाडी और नाल। आपके पधारनेसे यहांके जिन-मंदिरोंमें बड़ी पूजाएं तथा प्रभावनाएं और धर्मशालाओंमें स्वधर्मीवात्सल्य धूम-धामसे होते रहे।

गुरुदेव श्रीविजयवल्लभसूरीजीका चातुर्मास बीकानेर कराने लिए बीकानेरसे शेठ सुमेरमलजी सुराना आदि कई श्रावक उनसे विनति करने गये हुए थे।

आपने भी गुरुदेवके बीकानेर पधारनेकी सम्भावनासे वापस बीकानेर कई दिनोंकी स्थिरता की परन्तु सादडीके लोगोंने

गुरुदेवको विहार करने नहीं दिया। चातुर्मासके दिन समीप आ गये थे। अतएव आपने पञ्जाबकी ओर विहार करनेका निश्चय किया। बीकानेरके लोगोंने इसकी बात कही कि अब गुरुदेव इस चातुर्मासमें न पधार सके तो साधु या साध्वियोंके बिना हम भी अपना क्षेत्र सूना नहीं रहने देंगे। आखिर इनलोगोंने गुरुदेवकी निम्न आज्ञा प्राप्त करली जो आपकी प्रवर्तनी आर्या (साध्वी) देवश्रीजीको भेजी गई थी।

"यहां संघका आग्रह देखकर हमने यहां चातुर्मास करनेका निश्चय कर लिया है। तुमलोगोंका भी पञ्जाब पहुंचना आवश्यक है। परन्तु बीकानेर धर्मकी प्रभावनाके लिए क्षेत्र अच्छा है और पञ्जाब प्रवेश करनेके पश्चात् दस बीस वर्षमें इधर आना कठिन होगा। चातुर्मासके दिन भी नजदीक आ गये हैं। विहार का मार्ग कठिन है। अतएव तुम्हारा यह दूसरा चातुर्मास बीकानेर ही में कर लेना उत्तम रहेगा।"

गुरुदेवके गम्भीर विचारोंका लोगों पर प्रभाव पड़ा और आपने विक्रम सं० १९५१ का यह चातुर्मास भी बीकानेर ही में करनेकी स्वीकृति वहांके श्रावक-श्राविकाओंको देदी। आपके सदुपदेशसे आप जिस उपाश्रयमें ठहरे थे उसी उपाश्रयमें श्रीशान्तिनाथ भगवानका एक जड़ाऊ गुम्बज वहांके श्राविकाओंने बनवाया।

इस चातुर्मासमें पंजाबके नर-नारी आपके दर्शनार्थ आते रहे और प्रत्येक संघ अपने अपने शहर पधारनेकी विनति

पंजाबसे अनेकों विनति पत्र आये। उसमें अम्बालाके लाला जगतमलजीके पत्रोंकी तो भरमार लगी रही। अंतमें आपने लालाजीको यह लिख भेजा।

"पंजाब पहुंचनेकी तीव्र अभिलाषा है। तुम्हारी भावना बनी रही और ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो गुरुदेवकी कृपासे फाल्गुण बदी १ को पंजाब की ओर विहार अवश्य हो जायगा।"

एक दिन एक कॉलेजमें पढ़नेवाले छात्रने आपको वंदना की तो आपने उसको धर्मलाभका आशीष दिया। उस छात्रने प्रश्न किया—"आर्याजी महाराज। आप जो यह "धर्मलाभ" कह कर आशीर्वाद देती हैं, इसका क्या कारण है? अन्य धर्मावलम्बी तो इस प्रकारके शब्द आशीर्वादके समय उच्चारण तक नहीं करते?

आपने स्नेहयुक्त वाणीमें फरमाया.

"भाई! धर्म ही सब प्रकारके सुखोंका साधन है। धर्म ही से सब वस्तुएं प्राप्त होती है। इसीलिए हम जैन साधु-साध्वी धर्मलाभ ही का आशीर्वाद देते हैं। यदि हम यह कहें कि दीर्घायु हो तो नारकीके जीवोंका आयुष बहुत ही अधिक होता है। यदि हम कहें कि—धनवान हो तो म्लेच्छोंके पास धन कहां कम है? सन्तान होवे कह दें तो कुत्तोंके क्या कम सन्तानें होती हैं अतएव सर्व सुख देनेवाला धर्मलाभ तुम्हारे कल्याणके लिए कहा जाता है। इसमें कितनी ऊंची भावना है। इसका तुम स्वयं अनुमान लगा सकते हो।"

आपके उत्तरपर वह आपका अनन्य भक्त बन गया।

इस चातुर्मासमें भी तपस्या, पूजा, प्रभावना, स्वधर्मीवात्सल्य का ठाठ लगा रहा। इसप्रकार विक्रम सं० १६७६ का यह चातुर्मास अनेक धार्मिक कृत्यों के साथ निर्विघ्न बीकानेर ही में सानन्द पूर्ण किया।

# पंजाबकी भूमि पर

अम्बाला निवासी लाला जगनूमलजी और लुधियाना निवासी हुकमीचन्दजी आदि आठ दस व्यक्ति और एक मिश्राणी मिती माघ सुदी १३ को बीकानेर आ पहुंचे और वंदना करते हुए निवेदन किया कि आपको पहुंचा ले जानेके लिए आये हैं।

आपने अपने निश्चित समयके अनुसार मिती फाल्गुन वदी १ को विहार कर दिया।

आपके सहवासमें आनेपर सुश्राविका श्रीचम्पाबाई (श्रीछगर सिंहजी कोचरकी बहिन) ने वैराग्यभावन से दीक्षा ग्रहण करनेके हेतु आपश्रीके साथ पंजाबकी ओर जाना तय कर लिया। उनके कुटुम्बियोंने प्रसन्नतासे दीक्षा ग्रहण करनेकी अनुमति दे दी थी।

मुश्राविका धन्नाबाई चाहती थी कि उसके पुत्रकी शादी जो दो-चार मास पश्चात् होनेवाली थी तबतक चम्पाबाई यहीं रहे, उसके पश्चात पञ्जाब जावे। क्योंकि वे उनकी बहन भी होती थीं। इसलिए चम्पाबाईको रोकनेके कई प्रयत्न किये। परन्तु वह किसी भी प्रकार रुकना नहीं चाहती थी। उन्होंने स्पष्ट जवाब दिया

"बहिनजी! कौन किसीकी बहिन और किसकी मौसी। दीक्षा ही ग्रहण करनेका निश्चय कर चुकी हूं तब एक मीनिट भी सांसारिक कार्योंमें रत रहना रुचिकर प्रतीत नहीं होता। अब मेरा स्थान और मेरे नाते-रिश्ते तो देवश्रीजी महाराज और उनकी शिष्याओं, प्रशिष्याओंसे ही रह गये हैं।"

अतः उन्होंने आपके साथ-साथ पैदल प्रस्थान कर दिया। साथमें पञ्जाब पहुंचने तक मार्गमें आपकी भक्तिके लिए श्रीजेठीबाई और श्रीजीवाबाईने भी योग दिया।

बीकानेरसे आपका यह पहला मुकाम उदासरमें हुआ। यहां पर बीकानेरसे चारों उपाश्रयकी श्राविकाएं आईं और उनकी ओर पूजा पढ़ानेके लिए कई श्रावक भी आये। जिन्होंने परम पूज्य दादा श्रीआत्मारामजी रचित सत्रह भेदी पूजा मधुर राग-रागिणियोंके साथ भक्ति-पूर्वक पढ़ाई।

उन श्राविकाओंकी ओरसे स्वधर्मीवात्सल्य भी हुआ।

उदासरसे पञ्जाबकी ओर जानेपर मार्गमें बालूके बड़े-बड़े टीले पड़ते हैं यहीं-कहीं कई कंकड़ और भूटके कांटे भी अधिक मात्रामें बिखरे पड़े रहते हैं जैन साधु-साध्वियोंकी मर्यादा चलके

पांव पैदल भ्रमण करनेकी होती है। अतएव विहारमें इन टीलों को पार करते हुए, उतार और चढ़ावके समय पैर बालूमें धँस जाते थे और धूपके समय बालू तप जाती थी जिससे पैर झुलस जाते थे। जब समतल भूमि आती तब भूटके कांटे और कंकड़ रह रहकर पैरोंके तलवोंमें चुभते थे। परन्तु आप इन परिषहोंकी परवाह किये बिना पञ्जाबकी ओर बढ़ती ही चली।

लाला जगतूमलजी और लाला हुक्मचन्दजीको ऊंट पर सवारी करनेका कभी अवसर नहीं आया था। इन बालूके टीलों पर घोड़ागाड़ी नहीं जा सकती थी। अतएव बाध्य होकर इनको ऊंटपर सवारी करनी पड़ी।

आपलोगोंका दल लूणकरणसर पहुंचने ही वाला था कि मार्गमें लाला जगतूमलजी तथा हुक्मचन्दजी दोनों ही ऊंट परसे गिर पड़े। लाला जगतूमलजीको बहुत चोट लगी जिससे वे बेहोश हो गये। उनकी आंखोंपर जीयाबाईने पानी छांटकर तथा नवकारमन्त्रका पाठ सुनाकर सावधान किया। लाला हुक्मचन्दजीका तो हाथ ही उतर गया था जिसे दूसरे हाथसे सम्भाले हुए लूणकरणसर तक पहुंचे।

प्रवर्तिनीजी महाराजने जब लूणकरणसर पहुंच विश्रांति ली और देखा कि अभीतक दोनों लालाजी, ऊंटवाला, मिश्राणी, जीयाबाई आदि न पहुंचे, तब अपनी शिष्याओंको कहा कि मार्गमें कहीं दुर्घटना तो नहीं हो गई है ?

इतनेमें जीयाबाईने आते ही कहा—महाराज सा ! बाबाजी

१५० आदर्श प्रवर्तिनी साध्वी श्री देवश्रीजी महाराजके चातुर्मासस्थल

तथा भाईजी तो ऊंट परसे गिर गये हैं और इनलोगोंको चोट भी आई है।

तबतक लालाजीने निवेदन किया—महन जीयायाई द्वारा सेवा शुश्रूसा होने और आपकी कृपासे मैं उठ खड़ा हुआ हूं वरना मुझे तो होश भी नहीं था।

आपने फरमाया—"जीयामाईने जो किया है वह एक स्वधर्मीको अपने स्वधर्मी बन्धुके प्रति जिसप्रकार भक्ति करनी चाहिए, उसी प्रकारकी है। इसका सुपरिणाम इन्हें निश्चित मिलेगा। यदि ज्ञानीने ज्ञानमें देखा तो देव, गुरु, धर्मके प्रसादसे आपलोगों की तबियत भी सुधर जायगी।"

लालाजीने अर्ज किया—पूज्य श्री आर्याजी! मैं भी प्रतिज्ञा करता हूं कि ससुराल घर पहुंच जाऊंगा तब नव हजार रुपैया किसी भी शुभ कार्यमें अवश्य लगाऊंगा।

आपने उन दोनों पंजाबी भाइयोंको समझाते हुए कहा :

"हमलोग तो घरबार छोड़कर मुंडित हुई हैं और साधु-धर्मकी और मर्यादानुसार जगह-जगह नंगे पांव पैदल भ्रमण करती फिरती हैं। मार्गमें कितने ही परिषह क्यों न सहन करने पड़ें उन सबको समता पूर्वक सहन करने ही में हमारा कल्याण है। परन्तु आप दोनों गृहस्थ हैं जब आपलोगोंके देहके चोट [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

की एक वैरागण तथा दो श्राविकाएं हैं। और आपके साथ आई हुई मिश्राणी भी हैं। सूरतगढ़के पश्चात् मार्गमें एक गांवसे दूसरे गांवकी हद तक उधरके श्रावक-श्राविका भी साथ होते रहेंगे।"

आपके उपरोक्त वचन सुनकर लाला जगतमलजीने निवेदन किया—आप जो फरमा रही हैं वह आपका उत्तम आदेश है। परन्तु जब तक मेरी यह देह कायम रहेगी तब तक आपको पञ्जाबकी भूमिपर प्रवेश कराये बिना घर नहीं लौटूंगा, यही प्रतिज्ञाकर घरसे निकला हूं। हां! लाला हुक्मचन्दजीको समझा कर अवश्य भेज देता हूं।"

इतना कह, लाला हुक्मचन्दजीको समझाकर लुधियाना विदा कर दिया।

धन्य है इनके माता-पिताको, जो इतनी चोट लगनेपर भी गुरु-भक्तिवश अपनी प्रतिज्ञापर अटल रहते हैं।

लालाजीने एक बैलगाड़ीको भाड़ेपर किया। जिसमें लाला जी तथा जीयाबाई और जेठीबाई तीनों सवार हुए। मिश्राणी और धन्नाबाईने आदर्श प्रवर्तिनी आर्या (साध्वी) श्रीदेवश्रीजी के तथा अन्य साध्वियाजीके साथ पैदल ही भ्रमण चलू रक्खा। लूणकरणसरसे आपलोग सूरतगढ़ पहुंचे। सूरतगढ़के वैद्य श्रीमूल राज आदिकी विनतिको मान देकर आपने यहां पांच दिनोंकी स्थिरता की

सूरतगढ़से विहार कर आपलोग पुलगांव पहुंचे मार्गमें लाला

जी वगैरह सर्व बैलगाड़ीसे गिरपड़े और लालाजीको दुबारा सारे बदनमें दर्द अधिक हो गया।

आपने लालाजीको इसबार फिर समझाया "आपके दुबारा चोट आ गई है। अतएव आप अब अवश्य अवसर देखलें।"

लालाजी तो पूर्व निश्चयपर दृढ़ रहे। यह थी उनकी गुरु-भक्तिकी दृढ़ता।

पुऊगांवमें दो तीन दिनकी स्थिरताकर पोलीबंगा, हनुमानगढ़ होते हुए आपने विक्रम सं० १६७६ की फाल्गुण सुदी १४ को पञ्जाबकी भूमिपर, भठिण्डा, शहरमें अपने दल-सहित प्रवेश किया।

# पंजाबमें धर्म प्रचार

भठिण्डा शहर व्यापारका एक छोटासा केन्द्र है। यहां पर गुजरात, राजस्थान, पंजाब आदि सर्व जगहके लोग आकर बसे हैं। मालेरकोटला (पंजाब) के कई अग्रवाल व्यापारी जो मंदिर आम्नायके हैं, यहां अधिक मात्रामें आ बसे हैं। बाकी स्थानकवासी जैन हैं।

यहां दोनों सम्प्रदायके लोगोंने आपको स्थिरता करनेके लिये अत्यधिक विनंति की परन्तु आपने चार दिनसे अधिक ठहरना मंजूर नहीं किया

आपने एक दिन उपदेश फरमाया जिसका विषय था— धर्म क्या है ?

"जिसके समागमसे अन्तःकरण की शुद्धि हो उसीका नाम धर्म है। किसी भी धर्मके मुनि या आर्यके सम्पर्कमें आनेसे आत्म-सन्तुष्टि होती हो, पवित्रता बढ़ती हो, लाभ मिलता हो तो समझो कि वही धर्म है। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि चार कषायोंकी निवृत्ति जिससे होतीहो वही धर्म है। जैनधर्ममें तो धर्मकी व्याख्या ही इस प्रकार बताई है "वस्तुका स्वभावही धर्म है।" जैसे अग्निका धर्म उष्णता है, पानीका धर्म शीतलता है। उसी प्रकार जैनधर्ममें ज्ञान, दर्शन, चारित्र आत्माका धर्म है। जिस प्रकार उष्णता अग्निसे अलग नहीं रह सकती और शीतलता पानीसे अलग नहीं रह सकती उसी प्रकार ज्ञान-दर्शन-चारित्र आत्मासे अलग नहीं रह सकते। यही सत्य है और धर्म है।

एक दिन आपने लाला जगन्नाथजीको फरमाया "लालाजी! अब तो आपकी प्रतिज्ञा पूरी हो गई है। क्योंकि हमलोगोंने पंजाबकी भूमि पर पैर रख दिया है। आपका स्वास्थ्य भी काफी गिर गया है। अब पंजाबके लोग आ जा रहे हैं। अतः हठ न करके आपको अवसर देख लेना चाहिए।"

लालाजीने अंतमें अम्बाला जानेका निश्चय कर निवेदन किया—"आपका यह हमेशा का चातुर्मास अम्बालाहीमें हो।"

आपने स्पष्ट फरमाया—

[illegible] मुनि

विजयजी महाराजको वंदन करने जाना है। तत्पश्चात् जहांकी स्पर्शना प्रबल होगी वहीं चातुर्मास होगा।"

लालाजी तो इतना कह कर चलेगयेकि हम आपकी उपस्थिति में भी स्वामीजी महाराज की सेवामें उपस्थित होंगे परन्तु आपका चातुर्मास अन्यत्र नहीं होने देंगे।

आपने भठिण्डासे बरनाला की ओर विहार किया।

आप भठिण्डासे तपामण्डी आदि होते हुए मिति चैत्र बदी सप्तमीको बरनाले पहुंचे। यहां पर स्थानकवासी जैनियोंके कई घर थे परन्तु शीतला सप्तमी को वजहसे सबजनोंको प्रथम दिन का पकाया हुआ भोजन ठण्डा याने बासी भोजन करना था। अन्य लोगोंनेभी शीतला सप्तमी मना था। यह सब आचरण जैनधर्मके आचरणोंके प्रतिकूल थे। क्योंकि बासी पक्वान्नमें जीवोंकी उत्पत्ति होती है। अतएव उन्होंने अपनी शिष्याओं और प्रशिष्याओंको आदेश दिया "आहार पानी शुद्ध न मिलने के कारण ऐसे अवसर पर साधु-साध्वियोंको अपनी पूंजीपर ही निर्भर रहना चाहिये। और साधुओंकी वह अपनी पूंजी, उपवास है। अतएव सम भावके साथ हम सबको उपवास कर लेना चाहिये।"

वह दिन सब आर्याओं (साध्वियों) ने अपनी पूंजी—उपवास पर ही संतोषवृत्तिके साथ धार्मिक क्रियाओंको करनेमें व्यतीत किया।

दूसरे दिन लुधियाना से लाला हुक्मचंदजी अग्रवाल आदि

आपके दर्शनार्थ आ पहुंचे और आपने यहांपर तीन चार दिन की स्थिरता कर धर्मोपदेश दिया, जिससे कई लोगोंने बासी भोजन न करनेका नियम ले लिया।

सच है जहां त्यागी, तपस्वी पधारते वहां निर्मल आत्माके जीवोंका कल्याण होता ही रहता है।

आप दरनालेसे महलागांव पधारे यहांपर आपके दर्शनार्थ लुधियानासे पचीस-तीस श्रावक-श्राविकायें और गुजरांवालासेभी कई श्रावक-श्राविकायें आ पहुंची।

महलागांव एक छोटासा गांव है परन्तु यहांपर बाहरके यात्री आपके दर्शनार्थ आये थे अतः आपका धर्मोपदेश भी होता रहा। इसलिये वहां जंगलमें मंगल नजर आता था।

आपका विचार दूसरे दिनही रायकोटकी ओर विहार करने का था परन्तु अचानक आपके पैरमें चोट आ गई जिससे पैरमें मोच आगई और व्याधि अधिक बढ़ गई। अतएव विहार करनेमें असमर्थ रहनेके कारण चार-पांच दिन की स्थिरता कर आपने रायकोटकी ओर विहार किया।

आपके दर्शनार्थ दूर-दूरसे श्रावक और श्राविकाओंके दल राय-कोट आने लगे। और आप तीन-चार दिनकी स्थिरता कर धर्मोपदेश फरमाते रहे. आपने सम्यग्दर्शनके विषयमें फरमाते हुए कहा

"आचारांगमें स्पष्ट उल्लेख है कि जो अरिहंत भूतकालमें हुए, अब जो हो रहे हैं अथवा भविष्यमें होंगे उन सबका यही उपदेश है

कि किसी भी जीवको सताया न जाय, उसका वध न किया जाय, उसे गाली न दी जाय, पराधीन न बनाया जाय, इस भावनामें दृढ़ विश्वास रखना सम्यग्दर्शन है।"

आपके व्याख्यानोंके चलतेही भाषणों द्वारा प्रभावना होती थी। आपके व्याख्यानोंका असर श्रोताओं पर अधिक पड़ता था। यहांके कई क्षत्रियोंने तो जीववध न करने का नियम भी ले लिया।

मूर्च्छा करनेकी आवश्यकता नहीं है। जहांकी स्पर्शना प्रबल होती है, वहीं चातुर्मास होकर रहता है।"

आपके इसप्रकार स्पष्ट बोलने पर लालाजी निराश होकर अम्बाला लौट गये और लुधियानावालोंने चम्पाबाईकी दीक्षाका महोत्सव मनाना प्रारम्भ कर दिया।

चम्पाबाईके धर्म-पिता लाला मिलखीरामजी बने और उनकी सहधर्मिणीने धर्म-माताका स्थान ग्रहण किया। दीक्षा महोत्सव का समस्त खर्च लाला मिलखीरामजीकी ओरसे किया गया।

प्रतिदिन पूजा, प्रभावना, रात्रिजागरण होते रहे और भक्ति की धूम मची रही।

देश-देशांतर कुंकुमपत्रियां भेजी गईं। अनेक नगरके लोग इस दीक्षा महोत्सवमें अपना योग देने आये।

गुरुदेव श्रीविजयवल्लभसूरिजी महाराजा द्वारा भेजे गये शुभ मुहूर्तमें विक्रम सं० १९७५ की आषाढ़ शुक्ला तीजको चम्पाबाई की दीक्षाका विधिविधान स्वामीजी श्रीसुमतिविजयजी महाराज साहबके कर-कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। चम्पाबाई की दीक्षाका नाम साध्वीश्री चम्पाश्रीजी हुआ और आप साध्वीश्री हेमश्रीजी महाराजकी शिष्या बनी याने हमारी चरित्रनायिका आदर्श प्रवर्तिनी आ.र्या श्रीदेवश्रीजी महाराजकी प्रशिष्या हुई।

समय-समय पर पूजा, प्रभावना, रात्रिजागरण, तपस्या, आदि होते रहे। यहांके श्रावक तथा श्राविकाओंने प्रत्येक धार्मिक कार्यमें पूरा पूरा योग दिया

आपकी वाणीका चमत्कार प्रशंसनीय था। एक दिनकी बात है कि आपने श्राविकाओंको उपदेश देना प्रारम्भ किया कि श्री पार्श्वनाथ प्रभुकी प्रतिमाके लिये एक सोनेका मुकुट बनना चाहिये। उसी समय सर्व प्रथम लाला प्रभुमलजीकी सहधर्मिणी श्रीमती राधाबाई तत्पश्चात् पारोबाई, बसन्तीबाई, किरपोबाई आदि कई श्राविकाओंने अपनी अपनी अभिलाषाके अनुसार रुपैया निकालना शुरू किया। अतः करीब करीब ढ़ाई या तीन हजारकी रकम तक एकत्रित होगई। मुकुट बनानेका भार लाला प्रभुमलजीको दिया गया जो नाकोदरके अच्छे सोनार कारीगरसे ४२ तोलेका सोनेका मुकुट और चांदीको अंगी और सोनेकी झालके कुण्डल तैयार करा कर लाये।

लुधियानाके समस्त श्रावक-श्राविकायें मंगलगानके साथ नगर भ्रमणकर बाजे-गाजे सहित मुकुट, आंगी व कुण्डल ले गईं। वहाँ पर घृतकी बोली बोली गई जो लाला प्रभुमलजीके नाम आई। उन्होंने संघ सहित स्नात्र पूजा पढ़ाकर अपनी सहधर्मिणी राधाबाई ( जिसे भदौड़ीबाईभी कहते हैं ) के साथ प्रभुको मुकुट, कुण्डल तथा अंगी चढ़ाकर प्रभु-भक्तिका लाभ लिया।

यह सर्व हमारी चरित्रनायिका आदर्श प्रवर्तनी आर्या श्री देवश्रीजी महाराजकी वाणीके चमत्कार ही का प्रभाव था।

इस प्रकार अनेक धार्मिक कृत्यों के साथ आपका यह विक्रम संवत १९७७का चातुर्मास लुधियानामें निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

अनेक धार्मिक कृत्यों के साथ निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

जालंधरसे लुधियाना, मालेरकोटला आदि स्थलों पर भ्रमण करती हुई आप अपनी शिष्या-प्रशिष्याओं के साथ नाकोदर पधारीं। दो महिनाकी स्थिरतामें आपके प्रतिदिन व्याख्यान होते थे। एक समय आपने रात्रिभोजन-निषेध पर शास्त्रों के प्रमाणों सहित लोगों को उपदेश देते हुए कहा—

"रसनेन्द्रियके लोभी मनुष्य सर्वज्ञीन वचनोंको आगेकर रात्रि-भोजन करनेमें भय नहीं करते हैं। इतना ही नहीं बल्कि भोले जीवों को रात्रि भोजन करनेके लिए प्रेरणा भी देते हैं। ऐसे लोगों को मालूम होना चाहिए कि रात्रिभोजनके समय भोजनमें कितने प्रकारके जीव आकर पड़ते हैं और इन जीवों के भोजनमें जानेके पश्चात् कितने प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं, यह किसी भी चिकित्सकसे पूछा जा सकता है।"

आपके उपदेशों का इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि अनेकों ने रात्रि-भोजनका त्याग कर दिया।

नाकोदरसे आप पुनः लुधियाना पधारीं। यहांपर आपकी सेवामें अम्बालाकी सुश्राविका कौड़ीबाई आदि कई आगेवान महिलाएं आपको अपने यहां चातुर्मास फरमानेकी विनति करने आईं। परन्तु लुधियाना निवासी आपको विहार करने देना नहीं चाहते थे। अन्तमें अम्बालावालोंने गुरुदेव विजयवल्लभसूरीश्वर जीकी पुनीत सेवामें हमारी चरित्र-नायिकाको चातुर्मास करनेकी आज्ञा देनेके लिये लिखा।

तो नाम तक नहीं लिख सकतीं, यह है, हमारी जैन समाजकी दशा।

जिस समाजमें स्त्री शिक्षाकी इतनी शोचनीय दशा हो, वह समाज कभी भी उन्नत नहीं हो सकता है ?

कतिपय लोग अपनी मूर्खतावश स्त्रियोंको पढ़ाना पसंद नहीं करते हैं। इससे जहाँ वे स्त्री जातिका नुकसान करते हैं वहाँपर वे अपने आपका भी नुकसान कर बैठते हैं।

कौन चाहता है कि अपनी संतान अशिक्षित और मूर्ख हो ? पुरुषोंको तो बाहरी कार्योंसे ही समय अधिक नहीं मिलता है। बच्चे अधिक माता ही के पास रहते हैं। माता जैसी शिक्षा बच्चोंको देगी, वैसे ही संस्कार बच्चोंपर पड़ेंगे। अतएव स्त्री-शिक्षाकी परम आवश्यकता है।

कतिपय स्थानों पर बालाओंको पढ़ानेके लिये पाठशालाएं हैं परन्तु वहाँपर धर्मकी पढ़ाई नहीं होती है। परन्तु व्यावहारिक ज्ञानके साथ साथ धार्मिक ज्ञानकी परम आवश्यकता है और उसकी पूर्तिका एकमात्र साधन अपनी जैन कन्याशालाओंकी अलग स्थापना है।

आपलोगोंको चाहियेकि इस शहरमें जैन कन्याशाला की स्थापना करें। सभी आपकी सन्तानोंका भविष्य उज्ज्वल बन सकता है।"

आपके इस प्रभावोत्पादक भाषणका वहाँकी जनतापर इतना गहरा प्रभाव पड़ाकि वहाँके लोगोंने एक खासी अच्छी रकम

एकत्रित करके जैन कन्याशालाकी स्थापना कर अपना मुख उज्ज्वल किया।

धन्य है ऐसी आदर्श प्रवर्तिनी ( साध्वी ) आर्याको जिनका प्रतिपल समाजोन्नति, धर्मोन्नतिके कार्योंमें लगा रहता है।

इस कालमें तपस्या, पूजा, प्रभावना आदि समय-समय पर अधिकाधिक संख्यामें होते रहे।

एकदिन आपने प्रभुकी सवारीके लिये रथकी आवश्यकता पर उपदेश दिया। उसी समय एक श्राविकाने जो अपने पिअरमें आई हुई थी आपके उपदेशसे प्रभावित होकर तेरहसौ रुपैया देकर सुन्दर रथ बनवा दिया। यह था आपके चारित्रबलका प्रभाव, जो प्रत्येक व्यक्ति पर जादूसा असर करता था।

# पुण्यभूमि लाहोर

विक्रम सं० १९८१ को मिगसर सुदि पंचमीको लाहोरमें गुरुदेव श्रीमद्विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजके कर-कमलों द्वारा जिन-मंदिरकी प्रतिष्ठाका शुभ मुहूर्त निकला था। उक्त अवसर पर आपको भी सम्मिलित होनेके लिये यहांके आगेवान श्रावक-श्राविकायें निवेदन करने आईं। अतएव विक्रम सं०

समयके परिपक्व हुए बिना कोई कार्य नहीं होता। अब समयका परिपक्व आया। लाहोरके जिन मंदिरकी प्रतिष्ठाके शुभ प्रसंग पर सभी प्रांतोंके अग्रगण्य उस अवसर पर उपस्थित थे। सबोंने यह तय किया कि प्रतिष्ठाके मुहूर्तके पूर्व एक शुभ मुहूर्त और आता है। उस मुहूर्तमें गुरुदेवको परम पूज्य आत्मारामजी महाराजके पद पर प्रतिष्ठित कर दिया जाय और हुआ भी ऐसा। क्योंकि इस समय एक क्रान्तिकारी व प्रबन्धक आचार्यकी आवश्यकता थी। कई वृद्ध साधु भी इस बातका अनुमत कर रहे थे। गुरुदेव तो पद ग्रहण करनेसे एकदम इन्कार करते रहे। सभामें बीकानेर निवासी बाबू सुमेरमलजी सुराणाने खड़े होकर कहा "गुरुदेवतो हर समय इन्कार करते आये हैं परन्तु यदि हम इनको इस पदके योग्य समझते हैं तो, फिर ये भले ही इन्कार करते रहें, हम सब इन्हें इस प्रकार पद प्रतिष्ठित कर दें जिस प्रकार पूज्यश्री आत्मारामजी महाराजके इन्कार करने पर भी पालीतानामें एकत्रित श्रीसंघने उनको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर दिया था।

इतनेमें जैनाचार्य श्रीमद् विजयानंदसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराजके पट्टधर श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज की प्रथमसे आशा पल्लवित हुई और विक्रम सं. १९८१ की मग्घर सुदि पंचमीके शुभ दिन लाहोरमें कलकत्ता, बम्बई, गुजरात, काठियावाड़, पंजाब आदिके प्रमुख श्रावकोंकी उपस्थितिमें चतुर्विध संघने गुरुदेवको बड़े धाम धूमसे आचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर महान

सुखका अनुभव किया।

हमारी चरित्रनायिका भी जंडियालासे विहार कर उक्त शुभ अवसर पर लाहोर उपस्थित हो गई थी। आपके तो हर्षका पार नहीं रहा। आपने बीकानेर निवासी स्वर्गस्थ सेठ हीरालालजी वैद की धर्मपत्नी सुश्राविका लाड़बाईको जिनका प्रसिद्ध नाम डागीबाई था, सम्बोधन करते हुए कहा—

"डागीबाई! तुमतो स्वर्गस्थ आचार्य भगवान् श्रीमद् विजयानंदसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराजके संघाड़ेके समस्त साधु-साध्वीयोंसे परिचित हो ही और यहभी जानती हो कि गुरुदेवसे जितनेभी दीक्षा पर्यायमें बड़े साधु हैं, वे प्रायः आपको आचार्य पद न होते हुएभी आचार्य जैसाही मान देते हैं। परन्तु आज इनको अपने मूल स्वरूप पर श्रीसंघने प्रतिष्ठित कर दिया है। अतएव इससे अधिक हमारे परम सौभाग्यकी क्या बात होगी।"

आपके उत्तरमें डागीबाईने कहा—

"आदरणीया! गुरुदेव तो ज्ञानी हैं। पूर्ण क्रियापात्र होते हुए, देश, काल, भावके जानकार हैं। पूज्य आत्मारामजी महाराज का उत्तरदायित्व संघ पर था, वह तो आज पूरा हुआ है।"

इस प्रकार लाहोरमें गुरुदेवको आचार्य पद और मुनि सोहनविजयजी महाराजको उपाध्याय पदके समारोहमें भक्ति-पूर्वक योग देकर जिन-मंदिरकी प्रतिष्ठाके पश्चात् आपने गुजरांवाला की ओर विहार किया।

थोड़े दिन बाद गुरुदेव भी गुजरांवाला पधार गये और वहां

पर तपस्या, पूजा, प्रभावना, स्वधर्मी वात्सल्य आदिका ठाठ लगा रहा। इसप्रकार विक्रम सं० १९८२ का यह चातुर्मास गुरुदेवकी छत्र-छायामें गुजरांवालामें निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

गुजरांवालासे ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई आप अपनी शिष्याओंके साथ नारोवाल पधारी वहांपर आपका प्रवचन चलता रहा। एकदिन आपने फरमाया—

"मनुष्य जीवन विशिष्ट जीवन है। इस जीवनको प्राप्तकर जो विषय-वासनामें लीन रहता है। वह अपने अमूल्य जीवन-रत्नको धूलमें मिलाता है। ऐसी अवस्थामें मनुष्य और पशुके जीवन में कोई अन्तर नहीं होता। मनुष्यके वे ही इन्द्रियां हैं जो पशुके होती है। पशु और मनुष्यमें अन्तर एकमात्र धर्मका है। अन्यथा मनुष्य भी पूछ रहित पशु है। अतः हमें धर्मको न भूलकर उसे जीवनमें उतारना चाहिये। पर हम उतारें भी कैसे ? जब कि भावी समाजके नायक बच्चोंमें धार्मिक संस्कार भी नहीं डाले जाते हैं। क्योंकि आजकल सरकारी पाठशालाओंमें लोग अपने बालकोंको पढ़ने भेजते है। वहांपर धर्मका शिक्षण नहीं मिलता है। तभी तो लोग पथच्युत होते जा रहे हैं। यदि केवल धर्मका ही शिक्षण देनेकी व्यवस्थाकी जाय तो ऐसी शिक्षण-संस्थाओंमें अध्ययन करनेवालोंकी संख्या नहीं होती है। अतएव व्यावहारिक ज्ञानके लोभके साथ धार्मिक शिक्षण देनेकी व्यवस्था हो तो, लोग उससे पूरा लाभ उठावेंगे। इसी बातको लक्ष्यमें रखकर गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजने निम्न अभिग्रह धारण

किया है।

"परम पूज्य स्वर्गस्थ आचार्य श्रीमद् आत्मारामजी महाराज की अंतिम अभिलाषा सरस्वती मंदिर स्थापना करनेकी थी। उसे पूर्ण करनेके लिये गुजरांवालामें उन्हींके नामपर गुरुकुल स्थापन करनेके लिए एक लाख रुपैयोंकी आवश्यकता है। इसकी पूर्ति जबतक न होगी तबतक मैं मीठा ग्रहण नहीं करूंगा।"

अतएव आपलोगोंको लाभके लिए इस कार्यमें यथा-शक्ति सहयोग देकर अपने धर्म-प्रेम विद्या-प्रेम और गुरु-भक्तिका परिचय देना चाहिए।

आपके उपदेशका प्रभाव श्रोताओं पर अच्छा पड़ा और उसी समय पक्खीमारीके पांच हजार रुपैया एकत्रित कर श्रीआत्मानंद जैन गुरुकुल गुजरांवालाको भेजनेका निश्चय किया।

आपके सदुपदेशसे यहांपर व्रत-पच्चक्खाण पूजा-प्रभावना आदि अनेक धार्मिक कार्य होते रहे और इसप्रकार विक्रम सं० १९८३ का चातुर्मास नारोवालमें निर्विघ्न सम्पन्न किया।

# उपदेश धारा

नारोवालसे ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई आप जीरासद पधारीं। आपमें गुरु-भक्ति, धर्मके प्रचारका उन्माद और विद्याके प्रति लगनी अपूर्व थी। आपने संकल्प कर लिया था कि गुरुदेव द्वारा उठाये गये प्रत्येक कार्यमें सहयोग देने ही में अपने जीवन को लगा देना।

आप जगह-जगहसे गुरुकुल, विद्यालय आदिको सहायता दिलाती रही। आप अपना अध्ययन करनेके साथ अपनी शिष्याओंको भी अध्ययन कराती और साथ साथ भव्य जीवों के कल्याणार्थ प्रवचन भी देती।

गहरी भक्ति दशेरर भी आपके प्रवचनका अच्छा असर

पड़ा और गुरु-कुलको पक्खीवारीके पांच हजार रुपयों की सहायता दिलाई।

पक्खीवारीका तात्पर्य यह था कि जबतक गुरुकुल चलता रहे वहांतक एक वर्षमें अमुक एक दिन रुपये देनेवालेकी ओरसे विद्यार्थियोंको भोजन देना।

यहांपर पूजा, प्रभावना, तपस्या आदि अधिकाधिक संख्यामें हुए। लोगोंकी धर्मके प्रति अधिक रुचि रहने लगी। महिलाओंमें धर्मके प्रति दिन पर दिन श्रद्धा बढ़ने लगी। इसप्रकार विक्रम सं० १९८४ का चातुर्मास शीरशहरमें निर्विघ्न सम्पन्न कर आपने गुजरांवालाकी ओर विहार किया।

यहांपर भी आपके उपदेशोंसे गुरुकुलके लिए लोगोंने पूर्णरूप से आर्थिक सहयोग दिया। यहांपर आपके प्रवचनमें अधिकतर ज्ञान-प्रचार, स्वधर्मीवात्सल्य, स्त्री-शिक्षा, आत्म-धन, विवेक आदि आदि विषय आते थे। एक दिन आपने फरमाया:—

"दु:खसे सर्वथा छुटकारा पाने तथा सम्पूर्ण सुखको प्राप्त करने का एकमात्र साधन धर्म है। धर्मके विपरीत प्रवृत्तियां त्यागकर आत्माके ऊपर आये हुए कर्मोंके आवरणोंको दूर किया जाय तभी आत्मा विशुद्ध होगी। ज्यों-ज्यों विशुद्ध भावसे आत्मा धर्म करता जायगा त्यों-त्यों मुक्ति नजदीक आती जायगी।

आपके प्रवचनसे लोगोंने धर्मके प्रति अपनी अधिक रुचि दिखलाई तथा पूजा, प्रभावनाओंका दिन पर दिन जोर रहा। अनेकोंने [illegible] भोजन [illegible] किया

लगी। आंखका इलाज भी कराना था। इसलिए आप लुधियानाके आस पास विहार करती हुई चातुर्मासके दिनोंमें लुधियाना आ जाया करती जिससे उनका इलाज व्यवस्थित ढंगसे चलता रहे। इस प्रकार आपने विक्रम सं १९८८ तकके लगातार तीन चातुर्मास अस्वास्थ्य की वजहसे लुधियानामें व्यतीत किये परन्तु चातुर्मासके समयके अलावा समयमें अन्यत्र विचरण करती रहीं। इसप्रकार आपकी दूसरी आंखका मोतीया बिन्दुका भी आप्रेशन भी हुआ और दोनों आंखें बिल्कुल ठीक हो गई हैं। तदनन्तर लुधियानासे विहार कर ग्रामानुग्राम विचरण करती आप जीरा-शहर पधारीं। यहां आपकी सुशिष्या श्रीहेमश्रीजी महाराजके वर्षी-तपका पारणा विक्रम सं० १९८९ की वैशाख सुदी ३ याने अक्षय तृतीयाको हुआ। इस अवसर पर लोगोंने पूजा, प्रभावना व उत्सव, कर अपने भाग्य को सराहा। वर्षीतपके महात्म्यका मुख्य कारण यह है कि वर्तमान चौबीसीके आदि तीर्थंकर श्रीऋषभदेव स्वामीने वर्षीतप किया था और इसी अक्षय तृतीयाके दिन श्रेयांसकुमारने अपनी शुभ भावना भाते हुए १०८ घड़े इक्षुरसके उनको वहरा कर सुपात्रदान देनेका लाभ प्राप्त किया था तभीसे इसका महात्म्य चला आ रहा है।

यहांके लोगोंकी विनतिको मान देकर आपने विक्रम सं० १९८९ का चातुर्मास जीराशहर ही में अनेक धार्मिक कृत्योंके साथ व्यतीत किया आपके प्रवचन यहांपर प्रायः आचार पद, सम्यक्त्व, गृहस्थधर्म आदि विषयोंपर हुआ करते थे।

जो महाराजके सरस्वती मंदिररूपी स्वप्नोंको पूर्ण करनेके लिये ही गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजने इस गुरुकुलकी स्थापनाकी है। अतएव आप सर्वलोगोंको तन, मन, धनसे इस कार्यमें सहयोग देकर अपने कर्त्तव्यका पालन करना चाहिये।"

आपके उपरोक्त प्रवचनके प्रभावसे यहांके लोगोंने एक हजार रुपयोंकी नकद रकम तथा कई प्रकारका अन्य सामान भेजकर तथा गुरुकुलवाला समाधि मन्दिरमें दो कमरे बनवा देनेका वचन देकर अपने कर्त्तव्यका कई अंशोंमें पालन किया।

इस प्रकार विक्रम सं० १९९० का चातुर्मास कई धार्मिक कार्यों के साथ औरंगाबादमें निर्विघ्न सम्पन्न किया।

औरंगाबादसे विहार कर ग्रामानुग्राम धर्मोपदेश देती हुई तथा गुरुकुलकी सहायता दिलाती हुई आप [illegible] पधारी। वहां दिन एक युवकने आपसे प्रश्न किया कि महाराज आप जिस प्रकार पादविहार कर धार्मिक उपदेश देती हैं उसी प्रकार यदि रेलविहार कर उपदेश देवें तो पादविहारसे कई गुणाधिक कार्य थोड़े ही समयमें रेलविहार द्वारा हो सकता है। आपने गंभीरता के साथ मधुर शब्दोंमें उत्तर दिया

"रेलविहार करनेवाला व्यक्ति ग्रामानुग्राम विचरण नहीं कर सकता है क्योंकि उसका कार्यक्षेत्र [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

ही रखता है परन्तु रेलमें सामान अधिक रखकर साथ ले जानेकी मुश्किल होनेके कारण सामान अधिक लाने व ले जाने की लोभ-वृत्ति बन जाती है। यह लोभवृत्ति धीरे-धीरे पांच रुपैयेसे सौ रुपैयों तक रखनेमें प्रवृत करती है। साधु या साध्वी तो निर्लोभी तथा निस्पृही हो, उन्हें कोई प्रलोभन देने आवे तो भी उसे इन्कार कर दे। आशा और लोभमें पड़ा साधु या साध्वी किसीका कल्याण नहीं कर सकते हैं। जिसको खाने, पीने, दिखाने, गाड़ी, आदिकी परवाह नहीं हो, वही त्यागी साधु है।

सगवड़ीया धर्मके कारण आज जैन यतिवर्गकी क्या दशा हुई है, यह किसीसे छिपी नहीं है। लाखों यात्राओंकी [illegible] से कोई अनभिज्ञ नहीं। अतएव हम जैन साधु-साध्वी पैदल भ्रमन कर अपने चारित्रकी रक्षा करते हुए जितना [illegible] कर सकते हैं, वह परिग्रहधारी बनने पर कभी नहीं।

आपका इस प्रकार सचोट उत्तर पाकर वह [illegible] हो गया और आपके प्रति भक्ति व श्रद्धा [illegible] लगा। धन्य है आपका जीवन और [illegible] पूर्णतया ज्ञान हुआ।

[illegible]

अवलोकन ही में लगी रहती थी। आपके उपदेशसे यहांके लोगों ने जीवदया, ज्ञानप्रचार, पूजा, प्रभावना, स्वधर्मीवात्सल्य आदि में अच्छी रकमका खर्चकर अपनी लक्ष्मीका सदुपयोग किया।

नाकोदरसे विहार कर ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई आप लुधियाना पधारीं। इन वर्षोंमें आपकी तबियत अस्वस्थ रहा करती थी फिरभी आपने जगह-जगह विहार करना बन्द नहीं किया।

जैठका मास था। गर्मी बहुत पड़ती थी। स्व० पू० श्रीआत्मारामजी महाराजकी जयन्तीका दिवस नजदीक आ गया। लोगों ने आपको अन्यत्र विहार करने नहीं दिया। पू० आत्मारामजी महाराज की जयन्तीके उपलक्ष्में आपने कहा—

"दादा साहबकी अंतिम अभिलाषा "सरस्वती मंदिरकी" थी और उसको पूर्ण करनेके लिये गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजने अभिग्रह धारण कर रक्खा है। हमें उनके उठाये गये कार्योंमें पूर्णतया सहयोग देना चाहिये।

हमारी प्राचीन शिक्षा-प्रणालीमें ब्रह्मचर्यको मुख्य स्थान दिया गया था। इसके परिणामस्वरूप जब छात्र गुरुकुलोंसे निकल कर आते थे, तो मानसिक विकासके साथ साथ उनका शरीर हृष्ट-पुष्ट रहता था। चरित्रबलके कारण वे पूर्ण उत्साह और उमङ्गके साथ कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण होते थे।

आजके इस दूषित वातावरणमें ब्रह्मचर्यकी तो बात ही करना बेकार है हमारे नवयुवकोंके चारित्रको बिगाड़नेके इतने नये नये साधन बन गये हैं कि उनसे बच निकलना असम्भवसा होगया

है। बुरी वासनाओं के प्रोत्साहन देनेमें आज कलके सिनेमाओं का मुख्य स्थान है। मनोरञ्जनके लोभसे छात्रों में इनके देखने की आदत पड़ जाती है और वे इस व्यसनमें पड़कर अपने चरित्र बलसे हाथ धो बैठते हैं।

चरित्रगठनके बाद शिक्षामें दूसरा स्थान शरीर-गठनका है। वैसे तो इसकी आवश्यकता सदासे ही रहती आई है। क्योंकि स्वस्थ शरीरमें ही स्वस्थ मन रह सकता है। जिनमें शारीरिक शक्तिका विकास नहीं होता, उनकी मानसिक शक्तियां पंगु रहती हैं। ऐसी अवस्थामें मानसिक शिक्षाके साथ साथ शारीरिक गठन परभी ध्यान देनेकी परम आवश्यकता है।

देशको इस समय इस बातकी आवश्यकता है कि उसके नवयुवक सदाचारी, बलवान और पूर्णरूपसे शिक्षित बनें, जिससे समय आनेपर वे देशके शासनकी बागडोर अपने हाथमें ले सकें।

सुयोग्य छात्रही विमलशाह और तेजपाल वस्तुपालकी भांति शासनकी बागडोर अपने हाथमें लेकर धर्मध्वज जगतमें लहरा सकते हैं। अतएव आप श्री आत्मानन्द जैन गुरुकुल गुजरांवालामें आर्थिक सहायता देकर अपनी संतानोंका भविष्य उज्ज्वल करें; जहांपर सदाचार व ब्रह्मचर्य पालनके साथ साथ धार्मिक मार्गके पर चिन्हों पर चलनेवाले देशके सच्चे नागरिक तैयार होंगे।"

[illegible]

# जन-मन क्रान्ति

चातुर्मासके दिन समीप होने और शरीरकी अस्वस्थताके कारण यहांके लोगोंके आग्रहको मानदेकर विक्रम सं०१९९२ का चातुर्मास लुधियानामे निर्विघ्न सम्पन्न किया। इस चातुर्मासमें पूजा, प्रभावना, आदि का ठाठ लगा रहता था।

हम आगे लिख चुके हैं कि आपका स्वास्थ्य अस्वस्थ रहा करता था परन्तु चातुर्मासके पश्चात् आप एक स्थान पर बैठना पसंद ही नहीं करती थीं। अतएव आप लुधियानाके अगल बगलके गांवों में विहार करती रही और चातुर्मासके समीप आते ही पुनः इलाज करानेके हेतु लुधियाना पधारीं। यहांपर आपका इलाज बराबर सुयोग्य डाक्टरों द्वारा होता रहा। विक्रम सं० १९९३ का चातुर्मासभी पुन लुधियानामे व्यतीत किया। इस चातुर्मासमे तपस्याओंका ताता लगा र... ...र आपके सदु-

पदेशसे लोगोंने अपने गाढ़े पसीनेकी कमाईको धार्मिक कार्योंमें खर्च कर उसका सदुपयोग किया।

एक दिन एक दिगम्बर जैन बालक आपको प्रश्न करने लगा कि हमारे यहाँ तो स्त्रीको मुक्ति नहीं बतलाते हैं और आपने मुक्तिके लिये चारित्र अंगीकार कर रक्खा है यह क्या बात है?

आपने गम्भीरता पूर्वक कहा—

"स्त्री, पुरुष या नपुंसक कोईभी आत्मा अनन्त ज्ञानीकी आज्ञानुसार आराधना करनेमें लीन हो जाय और चढ़ते चढ़ते गुणस्थान चढ़ कर अखण्डित ऐसी क्षपकश्रेणीको पाने योग्य हो जाय तो, वह निश्चित केवल ज्ञान पा सकता है।"

उसने पुनः प्रश्न किया। आप गुणस्थानका अर्थ क्या लगाते हैं?

आपने फरमाया:

"आत्मामें प्रगट हुए अमुक अमुक प्रकारके गुणोंके कारण स्वरूप-दर्शन करानेकी अपेक्षासे नियत किये हुए स्थान विशेषको गुणस्थान कहते हैं। आत्माकी योग्यताके साथ ही उसका सम्बंध है। अमुक आत्मा अमुक गुण स्थान तक पहुँचा है। ऐसा कहनेसे वह आत्मा उस समय कितने गुणस्थान तक पहुँचा यह स्थिति आंकी जा सकती है। गुणस्थान गुणावलम्बी मर्यादाको बतानेवाला है। इससे उसको आत्माकी एक दशा—दशा विशेष सम्बोधन किया जा सकता है।"

[illegible] उत्तम दशाको प्राप्त कर ले, वह [illegible]

क्षपक-श्रेणी योग्य बननेपर केवलज्ञान-प्राप्तकर अनन्त मुक्तिको भी पा सकता है।

सती सीताका ही उदाहरण ले लीजिये। शीलपालन करने की दृढ़ता—सामर्थ्य, स्त्रियोंमें जितनी होती है उतनी शील पालनकी दृढ़ता कितनेक पुरुषोंमें भी नहीं होती। इससे सिद्ध होता है कि सामर्थ्यशाली स्त्री या सामर्थ्यशाली पुरुष दोनों हो, जो विवेक-शील हो तो वे उच्च परिणामको पा सकते हैं।"

आपके द्वारा इस प्रकार तर्कयुक्त समझानेपर वह चतुर बालक आपका अनन्य भक्त बनगया और अपनी भक्ति आपके प्रति प्रदर्शित करने लगा।

इस प्रकार आपकी समझानेकी शैलीसे कई जीवोंने अपनी मिथ्या मान्यताओंका त्यागकर सन्मार्ग अपनाया।

लुधियानासे गुरुदेवके दर्शनार्थ आप अम्बाला पधारी। गुरुदेव शहरके बाहर एक बंगलेमें विराजमान थे। पंजाब प्रान्तकी समस्त प्रजा आपके स्वागतको उपस्थित थी।

पंजाबी लोगोंने गुजरात और सौराष्ट्रके मेहमानोंको हाथीकी सवारी पर बैठाकर उन्हें आदर सहित गुरुदेवके दर्शनार्थ पहुंचाया आचार्यश्रीके नगर प्रवेश पर जगह जगहकी भजन मण्डलियां भक्तिरससे ओत प्रोत भजन गाया करती थी और जगह जगह बैण्ड-बाजे अपने मधुर संगीतरसका संचार कर रहे थे। नर-नारी गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजकी जयनाद कर रहे-गाते चल रहे थे।

अम्बाला आ जाती थी और इसके अलावा समयमें अम्बालाके अगल बगलके गांवोंमें विचरण किया करती थी।

गुरुदेवके सानिध्यमें बड़ौतवालोंने प्रतिष्ठा महोत्सव धूम-धाम से किया। आपको भी उक्त अवसर पर पधारनेकी विनति की गई परन्तु आपकी अस्वस्थताके कारण आपने अपनी सुशिष्या साध्वी श्रीचित्तश्रीजी आदिको भेज दिया।

आपने फाल्गुन चौमासा अम्बाला ही में किया था और गुरुदेव श्री मद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज भी बड़ौतसे बिनोली, खीवाई, सरधना, मेरठ, हस्तिनापुर, मुजफ्फरनगर, देवबंध नागल, सहारनपुर सरसावा आदि होकर पुनः अम्बाला पधारे।

विक्रम सं० १६६५ की चैत्र सुदी १ को गुरुदेवकी छत्र-छायामें पूज्य योगीराज श्री बुटेरायजी महाराजकी स्वर्ग तिथि और दादा साहब श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराजकी जन्म-तिथि उत्सव मनाया गया।

मिती बैसाख बदी एकादशीको आपकी सुशिष्या साध्वी श्री जिनेन्द्रश्रीजी तथा आपकी प्रशिष्या याने साध्वी श्रीपद्मश्रीजी महाराजकी शिष्या श्री महेन्द्रश्रीजीकी बड़ी दीक्षाका कार्य गुरुदेव के कर-कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ।

गुरुदेवने तो रायकोटकी ओर विहार किया परन्तु आप अस्वस्थता वश यहीं रहीं। एक दिन एक ब्राह्मणके पुत्रने आपसे प्रश्न किया—हमारे वैष्णव धर्ममें जो तत्वज्ञानकी विवेचना की गई है वही जैन धर्ममें है। आपके धर्ममें विशेषता क्या है? केवल

भिन्न मानका पट्टा लगा रक्खा है। आपने उस पुत्रको शांति पूर्वक समझाते हुए कहा।

"आत्म तत्वसे लेकर अजीव तत्व तक जैन दर्शनमें बताया गया परन्तु अन्य दर्शनोंमें जीव तत्वके विषयमें जैनदर्शन जैसी विशिष्टता नहीं बताई है।"

आपका उक्त उत्तर पाकर वह आपका गाढ़ा भक्त बन गया और आपके प्रतिदिन दर्शन कर धार्मिक विषयोंमें आपसे चर्चा कर लाभ उठाता था।

आपको तबियत अस्वस्थ रहनेके कारण विक्रम सं० १९९५ और १९९६ का चातुर्मास अम्बाला ही में व्यतीत किया।

आपके उपदेशोंसे यहांके लोगोंने तीन हजार रुपये अम्बाला स्कूलमें और चार हजार श्रीआत्मानन्द जैन गुरुकुल गुजरांवाला में सहायतार्थ भेजे और छः हजार रुपयोंके हार तथा गुलबन्द की माला भगवानको चढ़ाई।

आपके उपदेश बहुधा हर जगह शिक्षणसंस्थाओं और मूर्ति-पूजाके प्रति हुआ करते थे।

आपने जब यह सुना कि गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वर जी महाराज गुजरांवाला पधारने वाले हैं तो उनके दर्शनार्थ आप गुजरांवाला उनके आनेके पूर्व ही पहुंच गईं। गुरुदेवका नगर प्रवेश बड़े समारोहपूर्वक हुआ था। गुरुदेवके नगर प्रवेश होनेके समय [illegible] ने हवाई जहाजसे [illegible] पुष्पवृष्टिके साथ [illegible] की वर्षा की

श्रीआत्मारामजी महाराजकी जयन्ती विक्रम सं० १९९७ की जेठ सुदी अष्टमीको तथा जगद्गुरु श्री हीरविजय सूरीजीकी जयन्ती भाद्र सुदी ११ को बड़े समारोह पूर्वक मनाई गई।

पर्युषण पर्वका आराधन, तपस्या, पूजा प्रभावना आदिके साथ बड़े समारोहपूर्वक हुआ।

गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजकी ६१ वी वर्षगांठ धूमधामसे मनाई गई।

विक्रम सं० १९९७ का चातुर्मास गुजरांवालामें आपने गुरुदेव की छत्र-छायामें निर्विघ्न सम्पन्न किया।

गुरुदेवके जन्मदिवस मिती कार्तिक शुक्ला २ को उन्हें दिये गये अभिनन्दनोंके जवाबमें गुरुदेवने जो प्रवचन दिया उसमें हमारी चरित्रनायिकाके विषयमें भी निम्न शब्द कहे।

"साध्वी श्री देवश्रीजीको धन्य है, जिन्होंने पंजाब भरमें गुरुकुलको प्रचुर दान दिलाकर अपने विद्याप्रेमका पूरा परिचय दिया है"

पाठक स्वयं समझ सकते हैं कि गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज जैसे परम प्रभावक जैनाचार्यको हमारी चरित्रनायिकाके विद्याप्रेमकी प्रशंसा करनी पड़ी। अतः स्वयं अनुमान लगा सकते हैं कि आपको विद्याके प्रति कितना प्रेम था। हमारी चरित्र नायिकाके सदुपदेशसे इस वर्ष भी १०१) रुपया गुजरांवाला श्राविका संघने गुरुकुलको भेट किया।

गुजरांवालासे ग्रामानुग्राम विचरण करती हुई आप लाहौर

पधारीं। हम आगे लिख आये हैं कि आपकी तबियत हर समय अस्वस्थ रहती थी फिर भी आपने अपना विहार बंद नहीं किया था।

लाहौरमें एकदिन एक औरतको अति महीन कपड़े पहने हुए देखकर आपने उससे कहा :

"आज कल लोग दिन प्रति दिन शौक-शौकीनी की ओर बढ़ रहे हैं। इससे यदि सावधान न रहे तो एक न एक दिन लोगों को पश्चात्ताप करना पड़ेगा। परन्तु समय हाथसे निकल जानेके बाद किये गये पश्चात्तापका कोई अर्थ न निकलेगा। सुन्दर-सुन्दर वस्त्र और सुन्दर सुन्दर शृङ्गारसे शोभा नहीं है। इसके आचार, शील और जीवन पवित्र रखनेमें रहता है। अतएव धर्मपर आचरण करनेवाला हर समय सादा भोजन करेगा, सादा वेश पहनेगा और शृङ्गार आडम्बर छोड़कर सादगीसे रहेगा।

आपके उपदेशका उस औरत पर तो असर पड़ा परन्तु अन्य औरतोंने भी सादगीसे रहनेका नियम धारण कर लिया।

विक्रम सं० १९९८ का चातुर्मास आपने लाहौरमें निर्विघ्न सम्पन्न किया। इस चातुर्मासमें पूजा, प्रभावना, तपस्या आदि अनेक धार्मिक काम बड़े समारोह पूर्वक हुए।

लाहौरसे कसूर, गंडासिंगवाला व फिरोजपुर छावनी पधारीं। यहां दिगम्बर जैनोंके अधिक घर थे परन्तु उन सबने आपका सम्मान किया। यहांसे होशियारपुरके लिये विहार कर [illegible], मोगा, रायकोट, जगरावां, लुधियाना, [illegible], फिल्लौर, करतारपुर, नकोदर होती हुई [illegible] पधारीं

आपके सदुपदेशसे यहांके लोगोंने पन्द्रहसौ रुपैया गुजरां-वाला गुरुकुलको और दो हजार रुपैया मालेरकोटलाके हाई स्कूलको भेजा।

यहांके संघकी आग्रहभरी विनतिको मानदेकर आपने विक्रम सं० १९९६ का चातुर्मास गुरुदेवकी छत्रछायामें यहींमें व्यतीत किया। आपके दर्शनार्थ आने वाले यात्रियोंकी सेवा भक्ति करनेका लाभ यहांके संघने अच्छा लिया। पूजा, प्रभावना, तपस्या आदि बड़े महोत्सवके साथ हुए। पर्यूषण पर्वकी आराधना धूमधाम पूर्वक हुई। जनताकी भावनाओंमें परिवर्तन हुआ। इस तरह जन-मन क्रान्तिके साथ आपका यह चातुर्मास पूर्ण हुआ।

# बीकानेरकी ओर

पट्टीसे विहार कर आप कसूरशहर पधारे। यहां पर विक्रम सं० १९९९ की पौष सुदी पूर्णिमाको गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराजके करकमलों द्वारा नये मंदिरमें आदीश्वर प्रभुकी प्रतिष्ठा तथा नये जिन बिम्बोंकी अंजनशलाका कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। उक्त प्रतिष्ठा महोत्सव पर स्वयं लेखकको गुरुदेव श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज आदि समस्त मुनि-मण्डलका तथा आदर्श प्रवर्तिनी आर्या (साध्वी) श्री देवश्रीजी महाराज आदि साध्वियोंके दर्शन करनेका अपने जीवनमें प्रथम ही सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

मैंने (लेखकने) दस हजार व्यक्तियोंके उपस्थित जन समूहमें बीकानेर संघकी ओरसे विनति करते हुए कहा :

सीतापुरमें गिरे बमोंकी आवाजसे घबराई कलकत्ता-स्थित बीकानेरकी जनता अपनी मातृभूमिकी शरणमें शान्ति पानेके हेतु आई है। उसके पास लक्ष्मी है, भौतिक साधन भी हैं परन्तु फिर भी उसे शांति प्राप्त नहीं हुई। यहांपर आपके जैसे दीर्घ तपस्वी प्रभावक आचार्यके सदुपदेशोंकी आवश्यकता है और आवश्यकता है महिलाओंमें धर्म-प्रचार हेतु प्रवर्तिनीजी श्रीदेवश्रीजी जैसी आदर्श साध्वियों की।

गुरुदेवने उसी समय फरमाया—

"मैं वृद्ध हूं और माघ महिना लग चुका है, चैत्र-वैशाखकी इस गर्मीमें इतना लम्बा विहार अशक्य है फिर भी मैं प्रवर्तिनीजी को अभी आदेश देता हूं कि वे अपनी शिष्याओं-प्रशिष्याओंके साथ धीरे-धीरे बीकानेरकी ओर विहार कर दें, जिससे ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो एक चातुर्मास छोड़कर दूसरा चातुर्मास बीकानेर ही में होगा और मैं भी समय पर पहुंचनेका प्रयत्न करूंगा"

आपने गुरुदेवकी आज्ञा पाते ही बीकानेर पहुंचनेकी भावनासे उस ओर विहार किया। मार्ग दूर था। तबियत अस्वस्थ रहती थी फिर भी धीरे-धीरे विहार करना प्रारम्भ रखा।

चातुर्मासके दिन नजदीक आगये थे इन ठाणोंको इन गर्मीके दिनोंमें पैदल इस मांदगीकी अवस्थामें आपका बीकानेर पहुंच सकना असम्भव था और इधर भटिण्डाके गुजराती, मारवाड़ी, पंजाबी श्रावक श्राविकाओंने आपका यहीं चातुर्मास करनेका

रही हैं। इस कार्यमें सफलता थोड़ी-बहुत तभी मिल सकती है, जब व्यवस्थित और संगठित रूपसे होकर काम उठाया जायगा।"

एक श्राविकाने विनय-पूर्वक निवेदन किया—पूज्यनीया! गुजरात, काठियावाड़तो साधु-साध्वियोंसे भरा पड़ा है परन्तु हम मारवाड़ियोंका जोर तो विश्व-वत्सल आचार्य भगवान् श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज हो के संघाड़के साधु-साध्वियों परचलता है क्योंकि हमारे पर जो कुछ उपकार है यह सर्व इस ही संघाड़का है।

आपने फरमाया :

"हम साधु-साध्वियोंको क्या गुजरात, क्या काठियावाड़ और क्या मारवाड़? हमें तो सब जगह पर विचरण करना है। जहाँ कहीं पर धर्मलाभ नजर आये वहीं पहुँच जाना अपना कर्तव्य समझते हैं

संयमकी रक्षा हो सके, वहां तक दूसरोंका हित करना हमारा काम है। चरम तीर्थंकर श्रमण भगवान श्रीमहावीर प्रभु और इनके अनुयायी साधु-साध्वियोंने जगह-जगह विचरण किया है और भयंकर कष्ट सहन किये हैं।

आजके भक्त श्रद्धापूर्वक इतना प्रयत्न करते हैं कि व अपने गुरुको किंचित् मात्र भी कष्ट पड़ने नहीं देते हैं। साधु-साध्वियों को फिर अन्य [illegible] क्या [illegible] है ? [illegible] [illegible] एक पात्र [illegible] अन्न और [illegible] [illegible] मात्र, वस्त्रके [illegible]

जाता हो तो एक साधु या साध्वीके लिये अन्य वस्तुकी क्या आवश्यकता है ?"

आपके इन हार्दिक उद्गारोंको सुनकर तथा आत्मोत्थानके प्रति अभिलाषा देखकर उपस्थित जन समुदाय चकित रह गया। उसे यह अनुभव होने लगा कि जैसे वे किसी दिव्य विभूतिके समक्ष खड़े हैं।

आपने चातुर्मास उतरते ही देव-गुरु-धर्मका स्मरण कर अपनी शिष्याओं, प्रशिष्याओं तथा अन्य महिलाओं सहित बीकानेरकी ओर विहार किया।

दीक्षाके दिन दीक्षार्थिनियोंकी सवारी नवरात्रके समान उत्साहके गाजे-बाजे सहित रांगड़ीके चौकमेंसे होकर कोट दरवाजेके मार्गसे होकर श्री पार्श्वचन्द्रगच्छकी दादावाड़ी गई।

दीक्षार्थिनीने स्थानीय सेठ मूलचन्दजी डागाकी सुपुत्री यानी सेवक श्री पत्नि श्रीमनोहरबाई जो स्वर्गस्थ सेठ छोटमलजी नन्हालोकी धर्मपत्नी थी, तब हजारों व्यक्तियोंके समूहके बीच आचार्य भगवान् आदि मुनिमण्डल तथा आदर्श प्रवर्तिनीजी आदि सर्व आर्याओंको वंदनाकर चारित्र अंगीकार करने प्रस्तुत हुई। इस समय इनके मन पर इतनी अधिक प्रसन्नता और तेज दिखाई देता था कि जिसे देखकर उपस्थित जनता चमत्कृत रह गई। दीक्षार्थिनीकी दीक्षाका नाम गुरुदेवने साध्वी मनोगुप्तिश्रीजी रक्खा जो हमारी चरित्रनायिकाकी प्रशिष्या साध्वी श्री महेन्द्रश्रीजी की शिष्या बनी।

हमारी चरित्रनायिकाकी प्रशिष्या साध्वी श्री वसन्तश्रीजीकी प्रेरणासे स्थानीय श्रावकोंने तथा उनकी सुपुत्रियों द्वारा दी गई सहायतासे श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ दादावाड़ी बनकर तैयार हुई, जिसकी प्रतिष्ठाका कार्य विक्रम सं० २००१ की वैशाख सुदी ६ को आचार्य भगवान् श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराजके कर कमलों द्वारा बड़े समारोह पूर्वक सम्पन्न [illegible] जेठ [illegible] 'वरकाणे' अनुपम [illegible] [illegible] [illegible]

के त्याग, तप, ज्ञान, सेवा, आदि पर अच्छा प्रकाश डाला जाता रहा।

गुरुदेवके जन्म दिवस तिथी कार्तिक सुदी २ को बीकाने शहरमें बेदों के चौकमें स्थित प्रभुश्री महावीर स्वामीके मन्दिरसे प्रभुकी सवारी निकाली गई जो सिपाणी, पाठिया, रामपुरीया रांगेसा, गोलछाके चौकमें से होकर कोट दरवाजेके मार्गसे श्री पारसचन्द्र गच्छकी दादावाड़ी गई और वापिस गोगा दरवाजेसे शहरमें प्रवेश करती हुई बागड़ी, कोचर, डागा, सेठिया, ओसवाल कोठारियोंके मोहल्लोंमें होती हुई रांगड़ीके चौक, खरतर गच्छीय श्रीपूज्यजीके बड़े उपाश्रयके आगेसे होकर चिन्तामणिजीके मंदिरके मार्गसे सराफा बाजार होती हुई समस्त नगरमें सब राज्य तथा जनके गाजे-बाजे सहित बड़े समारोहपूर्वक श्री महावीर प्रभुके मन्दिर पुन पधारी। प्रभुकी सवारीमें श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज अपने शिष्य-प्रशिष्यों सहित सम्मिलित हुए।

इस वर्ष जब मैं लेखक इन्दौरसे आया तब हमारी चरित्र नायिकाने फरमाया :—

"भाग्यशाली! तुम भाग्यशाली हो, जो प्रत्येक धार्मिक प्रसंग पर देश-देशान्तरसे आ उपस्थित होते हो।" मैंने कहा "पूज्यनीया आचार्य भगवन्तने तो मुझे इन्दौर आते समय कहा था— "गुरुदेवके जन्मदिन [illegible] कार्तिक सुदी २ को प्रभुकी सवारी अवश्य निकाली [illegible]"

मैंने कहा "गुरुदेव! इस कार्यमें यतियों की ओरसे बाधायें उपस्थित की जायगी। उस समय उन्होंने फरमाया—'ज्ञानीने ज्ञानमें देखा होगा तो गुरु महाराजकी कृपासे दुनियाकी कोई भी शक्ति कार्तिक सुदी २ को प्रभुकी सवारी नहीं रोक सकती। प्रभुकी सवारी निकलेगी, निकलेगी और निकल कर रहेगी।"

आपने फरमाया—"गुरुदेव प्रभावक आचार्य हैं। प्रसंगों पर इनके मुखसे निकले हुए वचन आज तक खाली नहीं गये और यह तो तुम्हारे सामने प्रत्यक्ष प्रमाण है। बीकानेरका संघ भाग्यशाली है जो इस नगरमें ऐसे प्रभावक आचार्यका पदार्पण हुआ है। तुम लोगोंने हीरक महोत्सवका आयोजन कर भक्तिका परिचय दिया है। मुख्यतः शांतमूर्ति गुरुभक्त पन्यास श्रीसमुद्र विजयजी महाराजकी प्रेरणाओंका यह सुफल है, जो हीरक महोत्सव की धूमधाम हो रही है। अभी भी यति लोग ईर्षावश होकर प्रभुकी सवारी रोकनेके प्रयत्नमें हैं परन्तु गुरुदेवने जो तुम्हें वचन कहे थे। वह ठीकही कहे। "श्रीपूज्यजी अभी भोले हैं, सोचने समझनेकी आवश्यकता है। यदि ये बीकानेर महाराजाके पास चले गये तो कहीं इनके पुराने पट्टे-परवाने न छिन जाएं।"

तत्पश्चात् वही हुआ। हमारी परिज्ञानदिशा का अनुभव सत्य निकला और गुरुदेवके वचन सिद्ध प्रमाणित हुए। बीकानेरके दरबारने रांगड़ीस्थित बड़े उपाश्रयके श्रीपूज्यजीके पट्टे परवाने खारिज कर दिये और प्रभुकी सवारी सब मोहल्लोंमें आचार्य भगवान श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज आदि

समस्त मुनिमण्डल तथा हजारों नर-नारियोंके साथ अति समारोह पूर्वक निकली। उस दिन हमारी चरित्रनायिकाके आनन्दका पार नहीं रहा। उनके रोम रोममें गुरुभक्ति रम रही थी। बाहरसे आनेवाले हजारों यात्रियोंको लाने, लेजाने तथा स्थानकी सुव्यवस्था बीकानेर श्रीसंघकी ओरसे होती थी। समाजके स्वयं-सेवकोंने स्वधर्मीभक्तिका सुन्दर परिचय दिया। मुख्यतः सेठ श्री लक्ष्मीचंदजी, श्रीप्रसन्नचन्दजी, श्रीरामरतनजी कोचरकी सेवायें विशेष उल्लेखनीय रहीं।

प्रभुकी सवारी जो कई वर्षोंसे ओसवालोंके सत्ताईस मोहल्लों में निकलनी बन्द थी वह बीकानेरके समस्त मोहल्लोंमें गाजे-बाजे सहित घूमीं। उसका समस्त श्रेय आचार्य श्री विजयवल्लभ-सूरीश्वरजीकी प्रभावकताको था परन्तु व्यवहारिक तौर पर सेठ श्री जावन्तमलजी व श्रीभंवरलालजी रामपुरियाके प्रयत्न भी प्रशंसनीय रहे।

जिस समय समस्त देशमें संगठनका पवन बह रहा हो, एकता द्वारा प्रत्येक समाज अपनी उन्नति करनेकी प्रयत्नमें लगा हो, उस समय तीर्थंकर भगवन्तोंकी सवारीके लिये मिथ्या झगड़ा शोभा नहीं देता। आश्चर्यकी बात तो यह थी कि १४, ग्वाड़की ओरसे प्रभुकी सवारी निकालने पर रांगड़ी चौक स्थित बड़े उपाश्रयके श्रीपूज्यजी श्रीजिन विजयेन्द्रसूरिजी को अपने तत्त्वकी भेंट चाहिये। प्रभुकी सवारी जैसे महान धार्मिक प्रसंगपर तथा अन्य धार्मिक प्रसंगोंपर समय-समय अनेक बाधाए उपस्थित

करते रहना उनका एक मिथ्या अभिमान था और ऐसी घटनाओं को कहाँ तक न्याय संगत कहा जा सकता है? पाठक स्वयं निर्णय करें।

विक्रम सम्वत् २००१ के इस चतुर्मासमें सेठ धनसुखदासजी लूणिया, श्री पूनमचन्दजी कोठारी, श्री भैरूदानजी कोठारी, श्रीरतन-मलजी नाहटा, श्रीमंगलचन्दजी मालू आदिने आचार्य भगवान के प्रति भक्ति प्रदर्शितकर अपना जीवन सफल बनाया। इस प्रकार विक्रम सं० २००१ का चातुर्मास आचार्य भगवानके सानिध्यमें इनकी परिचर्यादिका का अनेक मंगलकार्योंके साथ सम्पन्न हुआ। परन्तु बीकानेर संघके लिए एक गौरवकी बात तो यह हुई कि इसने संस्कृत और प्राकृतके असाधारण विद्वान, इतिहासके ज्ञाता, प्राचीन पुस्तकोंके संशोधक साहित्याचार्य मुनि श्री चतुरविजयजीको खोया।

गुरुदेवने नवीन साधुओंको बड़ी देनेके लिए इन्हें फलोदीसे जानेका सोचा था परन्तु भवितव्य जो वस्तु बननेकी होती है, वह मिथ्या नहीं बनती। इनको देहावसान बीकानेरके लिए ही निश्चित हुआ था इसमें परिवर्तन कैसे हो सकता?

इनकी एक बड़ी विशेषता कि बीकानेरके श्रीसंघने प्रत्येक धार्मिक कार्यमें बड़ा सहयोग खूब दिया था। चातुर्मासके पश्चात् निश्चित समय पर आपने स्वर्गकी ओर विहार किया।

# वचन—कसौटी पर

हमारी चरित्र-नायिकाकी तीव्र अभिलाषा थी कि वह बीका-नेरके विहारके पश्चात् सिद्धाचल तीर्थकी यात्रा करे। यह समय इनके जीवनका सांध्यकाल था। अतः एकबार पुनः इस परम पवित्र तीर्थकी यात्राकी इच्छा स्वाभाविक थी। पंजाबसे काठियावाड़की ओर जानेका यह मार्ग था परन्तु अत्यन्त अभिलाषा होने पर भी वचन-बद्धताके कारण वे उधर विहार न कर सकीं। इन्हें पुनः पंजाबकी ओर विहार करना पड़ा।

हीरक जयन्ती महोत्सव पर आनेके पूर्व पंजाबियोंने प्रवर्तिनी

आपने फरमाया – आजके हिन्दू या जैन श्रीमंत मोटर रखने के लिए मोटर गैरेज बनवाते हैं और मोटर सम्हालनेके लिए नौकर भी रखते हैं परन्तु गायके लिये इनके पास स्थान नहीं और नौकर भी नहीं। जो गाय आपको दूध देकर आपके शरीरको पुष्ट बनाती है, वही गाय जब दूध कम देने लगती है तब किसी पिंजरापोल या किसी दलालको दश-बीस रुपैयोंके लोभमें उसे बेच डालते हैं। फिर चाहे वह गाय कसाईखाने ही क्यों न जाती हो ? आज यदि गृहस्थ एक घरके पीछे एक गाय रखना प्रारम्भ कर दें तो फिर मुझे बताना कि कसाईखानेके लिए कितनी गायें पाई जाती हैं। लोग वस्तुस्थितिको न समझकर केवल हवा में बातें करते हैं पर करना धरना कुछ नहीं। कोरी बातोंसे क्या बनना है ?

आपके सत्य वचन सुनकर वह निरुत्तर हो गया और आप की प्रशंसा कर चलता बना। एकदिन प्रसंगोपात आपने मध्यम श्रेणीके लोगोंके विषयमें कहा—

"मध्यम श्रेणीकी दरिद्रताका मुख्य कारण,—कमानेवालोंसे खाने वालोंकी संख्या कई गुना अधिक है। दरिद्रता दूर करने का उपाय यह है कि जीवनमें अनावश्यक खर्चोंको कम किया जाय। क्योंकि एक कमाऊ और दस खाऊ। फिर साथमें चाय बीड़ी, पान, और नाटक-सिनेमाके पीछे बहुत खर्च कैसा किया जा सकता है। पहिले महिलाएँ दलना, पीसना, कूटना, सिलाई करना आदि २ सब काय अपने करों द्वारा किया करती थी परन्तु अब

समस्त कार्य मशीनों द्वारा कराये जाते हैं। जिससे आलसी बनने के साथ साथ खर्चीला वातावरण बढ़ता जाता है।

एक पुत्रको पढ़ाते वक्त बाप पूरा कर्जदार बन जाता है और एक पचीस वर्षका लड़का जबतक ग्रेज्युएट बनकर आता है तबतक अपने पेट भरका पावसेर अन्न भी वह उपार्जन नहीं करता। इसके पूर्व उसे शूट, पेंट, पावडर, इत्यादि अनेक फेशनेबल सामानों पर खर्च करनेकी आदत पड़ जाती है। यह है आजकलकी मध्यम श्रेणीके लोगोंकी दशा।

'आप लोग अपने जीवनमें जबतक सादगी न लावेंगे तब-तक आपलोगोंका श्रेय नहीं होनेका है।"

आपके प्रवचनका प्रभाव जनता पर अधिक पड़ा और कई लोगोंने सादगीसे जीवन व्यतीत करनेका नियम भी धारण कर लिया।

प्रवर्तिनीजीका प्रतापशाली व्यक्तित्व, दिव्य प्रकाश फैंकता ज्ञान, उनके हृदयकी गहराईसे आता था। आपके प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व तथा समस्त जीवोंके प्रति दयाकी भावनासे दर्शकों पर गहरी छाप पड़ती थी।

जैन साधुओंका आचार अति कठिन है वह ही उनकी सच्ची कसौटी है। [illegible] संयम और त्यागके साधक होते हैं। केशलुंचन, पदविहार, [illegible] नियमों आदिके पालन करनेमें जैन साधु-साध्वी को [illegible] है और ये सब विशेषताएं हमारी चरित्र नायिकामें भर रही थीं।

आपका वि० सं० २००२ का यह चातुर्मास जंडियालागुरुमें अनेक धार्मिक कार्यों सहित निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

आपने जंडियालागुरुसे, ग्रामानुग्राम विचरण करती, धर्मोपदेश देती अपनी शिष्या-प्रशिष्याओंके साथ गुजरांवालामें प्रवेश किया। एक दिन एक ब्राह्मणी आपके दर्शन करने आई और समय पाकर आपसे निवेदन करने लगी—

"पूज्यनिया ! आप मुझे ऐसा आशीर्वाद देनेकी अनुकम्पा करें जिससे मेरे घर लक्ष्मीका वास हो और दरिद्रता से छुटकारा मिले।

आपने फरमाया—

"जब सांसारिक लाभ हम साधु-साध्वियोंने तज दिया है तब अन्य लोगोंको सांसारिक लाभ देनेपर हमारा साधुत्व किस प्रकार का होगा, यह तो प्रत्येक समझदार व्यक्ति समझ सकता है !

केवल तुम्ही एक नहीं हो। समस्त संसारके प्राणी इष्ट वस्तु की प्राप्ति और अनिष्ट वस्तुके वियोगके लिए भटकते फिरते हैं— यदि एक साधु या साध्वी, सच्चे त्यागी, सच्चे महात्मा, सच्चे ब्रह्मचारी हों और दूसरा अभिलाषा रखनेवाला श्रद्धालु हो, उदय काल अच्छा हो और उसके अन्तराय कर्म दूर हो गये हों तो उसका फल अच्छा ही होता है। एक पवित्र महापुरुषका आशीर्वाद जब मनुष्यके श्रद्धा सरोवरमें पड़ता है तो उसके आत्मजलकी शुद्धि अवश्य होती है।

अशुभ कर्मका—अन्तरायके कर्मके आवरण दूर हुए बिना

कोई भी किसीको सुख नहीं दे सकता है। अतएव धर्म-ध्यानमें मन लगाओ। धर्म ही समस्त सुखोंको देने वाला है।

आपके स्पष्ट एवं निष्कपट वाक्योंको सुनकर वह श्राविका गद्-गद् हो उठी और आपकी इतनी अनन्य भक्त बन गई कि वह प्रतिदिन आपके दर्शनका लाभ लेती रही।

वि० सं० २००३ जेठ सुदि १४ के दिन लेखकको भी आपके दर्शन करनेका पुनः सौभाग्य प्राप्त हुआ। जेठ सुदि पूर्णिमाको उपाश्रयमें दोपहर लेखक द्वारा रचित श्री दादा प्रभावक सूरि ( जिनचन्द्र सूरि ) अष्टप्रकारी पूजा कोचर मंडली द्वारा विविध राग-रागिनियोंमें समारोहपूर्वक पढ़ाई गई। दादा साहबकी पूजा के पश्चात् गुरुदेवको वंदन कर ज्यों ही लेखक प्रवर्तिनीजी महाराजके दर्शन करने साध्वियोंके ठहरनेके स्थान पर गया त्योंही साध्वी श्री वल्लभश्रीजीने हमारी चरित्रनायिकाको सम्बोधन करते हुए कहा—

"महाराजजी! लालाजी आपके दर्शनार्थ आये हैं। आज तो दादा साहबकी पूजा सुनकर अत्यन्त आनन्द अनुभव हुआ।"

आपने फरमाया—

"[illegible] भो! यह हानीबाईका भतीजा है और इनकी दादी तथा भुआ दोनों ही बड़ी धर्मात्मा थीं। तो ये इन लोगोंसे कम क्यों रहें! पूजा तो सुमधुर राग-रागिनियोंसे है ही परन्तु साथ साथ दादा साहबका संक्षिप्त जीवन चरित्र भी रोचक शब्दोंमें दिया है।"

मैंने कहा :

"पूज्यनिया ! मेरी क्या शक्ति थी जो इतनी सुन्दर पूजाकी रचना कर पाता। परन्तु यह सर्व तो पूज्य माता-पिता द्वारा डाले गये संस्कार और आचार्य भगवान श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज जैसे महापुरुषके शुभाशिर्वाद तथा आप जैसी आदर्श प्रवर्तिनीजीकी शुभ दृष्टिका ही फल है।"

इतनेमें आपकी सुशिष्या साध्वीश्री हेमश्रीजीने कहा—

डागाजी ! पद्यमें तो तुम्हारी रचित पूजाएं और स्तवन अति सुन्दर बने हैं परन्तु गद्यमें भी कोई पुस्तक लिखी है या नहीं ?

"मैंने कहा, यह अवसर तो मुझे अभी प्राप्त नहीं हुआ परन्तु अब मैं सोचता हूं कि पूज्यनीया प्रवर्तिनीजीके ही जीवन चरित्र से यह कार्य प्रारम्भ करूं।"

इतनेमें प्रवर्तिनीजीने हमारी बातको बीच ही में भंग कर फरमाया—

"मेरे जीवनमें क्या धरा है। यदि लिखना ही है तो गुरुदेव जैसे प्रभावक आचार्यश्रीका जीवनचरित्र लिखो जो हम तुम सबको प्रेरणादायक होवे।"

मैंने निवेदन किया :

"गुरुदेव तो प्रभावक आचार्य हैं ही और उनके जीवन चरित्र को अच्छी प्रकारसे लिखनेका सामर्थ्य किसी अच्छे पंडित की शक्तिके बाहर है [illegible] मेरे जैसे [illegible] की कलममें इतनी शक्ति कहाँ है ? [illegible] लिखा गया है

चरित्रनायिकाके विषयमें आचार्य भगवन् श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज जैसे प्रभावक आचार्यके हृदयमें भी कितना मान है।

पर्य्यूषण पर्वमें गुरुदेवके व्याख्यानके समय अपने पास भी कल्पसूत्र ग्रन्थ रखती थी और ज्ञान पढ़नेमें इतनी अधिक रुचि रखती थी कि खाने-पीने तककी परवाह नहीं करती।

करती रहेगी। लाखों व्यक्ति बेघर बार हो गये और लाखों ललनाएं अनाथ हो गई। इनके करुण-क्रन्दनसे दसों दिशाएं क्रन्दित हो उठी। इस तूफानसे गुजरांवाला भी न बच सका। वहांकि तमाम अल्प संख्यक खतरेमें पड़ गये।

गुजरांवालामें भी लूट तथा आगकी घटनाएं घटने लगी। समाधि-मन्दिरके बाहरकी खिड़कियोंमें आग लगाई। जैन भाइयोंने पहलेसे ही अपने कुटुम्बियों औरतों और बालकोंको भारतमें सगा-सम्बन्धियों के यहां भेज दिया था। पर आचार्यश्री, साधु समुदाय, प्रवर्तिनीजी आदि साध्वियां तथा जिनेश्वर भगवानकी प्रतिमाओं आदिकी रक्षाकी दृष्टिसे २५० श्रावक-श्राविकाएं गुजरांवालामें रही।

पाकिस्तानसे तार-पत्रोंका व्यवहार बन्द हो गया, । गुजरांवालाके दूसरे हिस्सोंमें क्या परिस्थिति है। उसे जाननेका कोई साधन न रहा, भारतमें रहनेवालोंको भी आचार्य भगवान, साधुवर्ग तथा प्रवर्तिनीजी आदि साध्वियोंको क्या हुआ, इसका समाचार मात्र भी नहीं मिलता था। समाचार पत्रोंमें भी जो समाचार आते व अधूरे होते। एक समय तो ऐसे समाचार आये कि तीन साधु कत्ल हो गये, आचार्य श्री को भी पत्थर लगे हैं, साध्वियोंका पता नहीं है, सभी जिन-मंदिर भस्मीभूत हो गये हैं। इन सब समाचारोंसे मन उदास व्यग्र हो गया। [illegible] [illegible] दर्शन [illegible] पर धार [illegible]

साधु-साध्वियोंको हवाई जहाजमें लानेके लिए हलचल मच रही थी। परन्तु गुरुदेवने एक दम इनकार करते हुए कहा—जब जैन श्रावक-श्राविकाओंकी फेर-बदली होगी तभी साधु-साध्वी निकलेंगे। इस पर और भी अधिक बेचैनी होने लगी। परन्तु देव-गुरु-धर्मके प्रतापसे किसी भी जैन साधु-साध्वी, तथा श्रावक-श्राविकाको नुकसान नहीं हुआ।

पर्यूषणके पश्चात् विक्रम सं० २००४ के भाद्र शुद्धा एकादशी शुक्रवार ता० २६-९-४७ के दिन गुजरांवाला शहरसे आचार्य भगवान् आदि मुनि मण्डल तथा प्रवर्तिनीजी आदि साध्वियों और समस्त श्रावक-श्राविकाएं जिन प्रतिमाओं और जिन मंदिरकी कीमती वस्तुओंके सहित श्री आत्मानंद जैन गुरुकुल पधारे। वहां से मिती भाद्र शुद्धा १२, शनिवार ता० २७-९-४७ को संध्याको गुरुकुलसे संध्या ५॥ बजे लाहौर पहुंचे। अग्रिम व्यवस्थानुसार नेशनल कालेजमें सबने विश्रांति ली। दूसरे दिन प्रातः समस्त साधु-साध्वियोंने पानीसे पारणा किया और दोपहर थोड़ी खाद्य सामग्री पाने पर समस्त श्रावक-श्राविकाओंने दालके साथ दो-दो रोटी खाकर संतोष मनाया।

रविवार ता० २८-९-४७ को संध्याको अमृतसर शहरके बाहर जंगलकी भांति शरीफपुरामें रहे और दूसरे दिन सोमवार को प्रात: समस्त साधु-साध्वी श्रावक-श्राविकाओंने अमृतसर शहरमें प्रवेश किया।

मात्र आचार्य भगवान श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज, जैसे प्रभावक आचार्यकी प्रभावकताको था। परन्तु व्यवहारिक तौर पर इस यशको भागी बंबईकी मानवी राहत समिति और मुख्यतः गुरुभक्त श्री फूलचन्द शामजी, श्री फूलचन्द नगीनदास, झवेरी, श्री मणिलाल जयमल शेठ तथा गुजरांवाला निवासी लाला माणकचन्दजीके सुपुत्र लाला कपूरचन्दजी दुगड़ हैं, जिनका उल्लेख करते अनन्द आता है।

चातुर्मासके मध्य जैन साधु-साध्वी एक स्थानसे दूसरे स्थान पर साधारण स्थितिमें विहार नहीं करते हैं, यह उनकी मर्यादा है। परन्तु दुर्भिक्ष, महामारी, युद्ध, अशान्त वातावरण, रक्तपात आदि विषम समयमें एक साधु अन्यत्र विहार कर सकता है। चारित्र की रक्षाके लिए जैन शास्त्रोंमें 'अपवाद सेवन' का विधान है। अतएव ऐसे विषम समयमें आचार्य देव तथा समस्त साधु-साध्वियोंका चारित्रकी रक्षाकी दृष्टिसे पाकिस्तानसे भारत आना शास्त्रसम्मत तथा दूरदर्शितापूर्ण था।

पाकिस्तानसे आनेके समयसे हमारी चरित्र-नायिकाका घूमना-फिरना एकदम बन्द हो गया। आचार्य भगवान दो तीन दिनके अन्तरमें आपको दर्शन देने पधारते रहे।
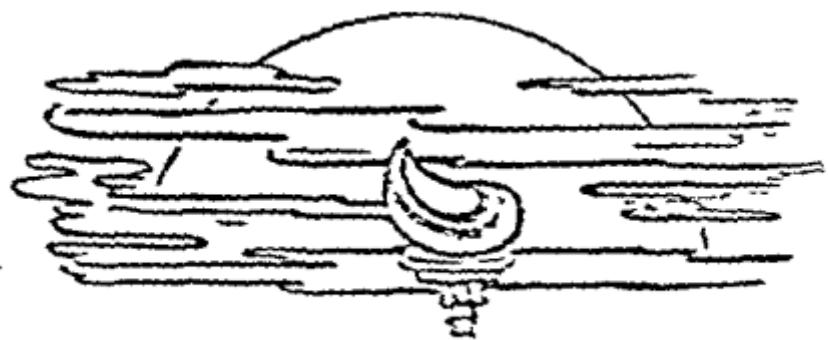
पर ये बस अपनी शिष्याओं, प्रशिष्याओं तथा भक्तजनको मेरे निमित्त उठानेवाले जो कष्ट मुझे देखने पड़े हैं उनकी जरा कल्पना तो करो। उन कष्टोंके सामने यह वेदना तुच्छ है।"

हाँ, आचार्य भगवानके उपदेशसे सिद्धिगिरि तीर्थकी शीतल-छायामें पञ्जाबियोंकी ओरसे धर्मशाला होगी। जगह पचास हजारमें खरीद हुई है। उसमें एक कमरेके लिए एक हजार रुपया लगानेकी भावना हो तो विचार करो।"

आपके उपदेशका इतना सुन्दर प्रभाव उन पर पड़ा कि उन्होंने एक कमरा बनवानेकी स्वीकृति दे दी।

आपकी तबियत दिनपर दिन गिरती गई और विक्रम सं २००४ की आश्विन शुक्ला पंचमीको आपकी तबियत अधिक नरम देख कर साध्वी श्री हेमश्रीजी उदास हो कहने लगी :

"पूज्या! मुझे किसके भरोसे छोड़कर जा रही हैं। मैंने दीक्षा ग्रहण करनेके दिवससे आज तक आपका साथ नहीं छोड़ा। आपकी छत्रछायामें शुद्ध चारित्रका पालन करती हुई आनन्द मग्न रहती आई हूं।"

आपने फरमाया –

हेम श्री! यह देह क्षण भगुर है एक दिन इसका त्याग करना ही होगा तूने चारित्र अंगीकार किया है फिर किस पर मोह करती है। लब्धिधारी गुरु गौतम जैसे भी प्रभु महावीरका जबतक मोह करते रहे, वहांतक केवलज्ञान उनके आसपास चक्कर काटता रहा और ज्योंही मोह हटाया त्योंही केवलज्ञान

प्राप्त हुआ। इसी प्रकार तू भी मेरे प्रति जो मोह रखती है उसको छोड़कर अपने कर्त्तव्यका ध्यान रख। गुरुदेव जैसे प्रभावक आचार्यकी छत्रछाया तुम्हे प्राप्त है। दानश्री वृद्ध हो चुकी है। तू अपने साध्वी संघाड़ामें कुसंप न आने देना। चित्तश्री, माणक्यश्री, वसंतश्री आदि होनहार हैं। समय समय पर इनकी सलाह भी ध्यानमें रखना। अपने संघाड़ेकी समस्त साध्वियोंकी बागडोर हाथमें लेकर संघाड़ेका सुसंचालन करती हुई अपने चारित्र पालनमें दृढ़ रहना। जिन शासनकी वफादारीमें उत्तीर्ण होना यही मेरा शुभाशीर्वाद है।"

आपने अपने जीवनमें अनेक तपस्याएं की थी और पंचमीका उपवास दीक्षा ग्रहण करनेके दिनसे अखण्ड चलता रहा परन्तु डाक्टरोंने अस्वस्थतावश उन्हें बहुत समझाया कि पथ्य ग्रहण करलें परन्तु आपने कहा "मैंने आज तक अपनी जानमें शुद्ध चारित्रका पालन किया है। मुझे अपने नियम अति प्रिय हैं। मुझे इससे कोई वंचित नहीं कर सकता है।"

दूसरे दिन मिती आसोज सुदी ६ को दोपहर दो बजे आपने फरमाया

"वसंतश्री ! आचार्य भगवान्के सेवामें जाकर निवेदन कर दो कि देवश्री आपके दर्शनोंकी [illegible] हैं और [illegible] दिन हैं इस देहको त्यागनेका [illegible] है

[illegible] भगवान् अपने [illegible]

[illegible] इस समय वह सिद्धगिरि [illegible]

गुरुदेवको देखते ही आपने हाथ जोड़कर वंदना की और गुरुदेवने आपको मांगलिक पाठ सुनाया और उनपर वासक्षेप डाला

चरित्र-नायिकाने कहा—

"गुरुदेव आप तो सिद्धगिरिकी यात्राका लाभ लेंगे और मेरी भावना सिद्धगिरि जानेकी रही, वह अब कैसे सफल होगी ?"

गुरुदेवने फरमाया—

"प्रवर्तिनीजी ! मैं तो चलता फिरता सिद्धगिरि जब पहुंचूंगा तब पहुंचूंगा। परन्तु ज्ञानीने ज्ञानमें देखा हो और जैसी तुम्हारी भावना है उससे कहीं मुझसे भी पहले सिद्धगिरि पहुंचनेका लाभ प्राप्त कर लो तो क्या आश्चर्य है ?"

इतना कह गुरुदेव तो पधार गये और आप सिद्धगिरिके नामका जाप जपती रहीं। अंत समय तक आपका ध्यान सिद्धगिरि की ओर लगा रहा। विक्रम सं० २००४ की आश्विन शुक्ला ६ को संध्याके ६। बजे अर्हन् अर्हन् शब्दोंका उच्चारण करते करते इस नश्वरदेहका त्याग कर स्वर्ग गमन किया।

समस्त पञ्जाबमें शोककी लहर दौड़ गई। सबका मन उदास हो गया। दूसरे दिन मिती आश्विन शुक्ला ७ को प्रातः बड़ी धूम-धामके साथ विमानरूपी पालखी बनाकर गाजे-बाजेके साथ आपकी मृत देहका अग्नि संस्कार पञ्जाबके श्री संघने किया।

# तपश्चर्या

जैनधर्ममें तपका अत्यन्त महत्त्व है। जिस प्रकार स्वर्ण अग्नि में तपकर निखर उठता है उसी प्रकार आत्मा भी तपस्याकी अग्नि में तपकर कर्म मलसे रहित होकर निर्मल हो उठती है। धर्मका लक्षण बताते हुए दशवैकालिक सूत्रमें अहिंसा, संयम और तप रूप क्रियाको धर्म कहा है। इन तीनोंका मिलन ही धर्म है। अतः अनन्तानन्त वर्षोंसे जैन साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाएं तप करते आ रहे हैं और आज भी यह आराधना अखंड रूपसे चली आ रही है। बिना तपके यहां कोई धार्मिक क्रिया या अनुष्ठान ही सम्पन्न नहीं होता। अपने चारित्रकी शुद्धि तथा इन्द्रियोंके दमनके लिए साधु-साध्वियां तो तपमें निरत रहते हैं [illegible]

हमारे परिवारजनोंका भी एक विशेष [illegible]

प्रत्येक दिन भाँति भाँतिके तपको लेकर आता। वो कोई न कोई प्रतिदिन स्वाभाविक उठनेवाली आकांक्षाओंको रोकनेके लिये अभिग्रह ले लिया करती थी। क्योंकि इच्छाओं के निरोधको ही तप कहा गया है। इच्छाओं के वशीभूत होकर मनुष्य अनेक दुष्कृत्य कर बैठता है।

आपने अनेकों उपवास, आयंबिलकी ओलियां अथवा छह, अट्ठम व अट्ठाइयाँ, आदि तप किये परन्तु इनकी निश्चित संख्या नहीं मिलती है। प्रवर्तिनीजीकी शिष्याओं और साध्वियोंने नोंध करनेमें इस ओर ध्यान नहीं दिया। पर इतना अवश्य निश्चित है कि वे एक महान तपस्विनी थी। उन्होंने अपने जीवन पर्यन्त अनेक तपश्चर्याएं कर महान् आदर्श उपस्थित किया।

# वचनामृत

आजकी शिक्षा प्रणालीमें नैतिक शिक्षाका अभाव है। व्यव-
ारिक शिक्षणके साथ २ धर्मके उन सार्वभौम सिद्धान्तोंकी शिक्षा
ना परम आवश्यक है, जो सभी धर्मोंको मान्य है।

* * *

सुन्दर २ वस्त्रों और शृंगारसे शोभा नहीं बढ़ती। धर्मका
ाचरण करनेवाला हर समय सादा भोजन करेगा, सादा वेश
हिनेगा और झूठा आडम्बर छोड़कर सादगीसे रहेगा।

* * *

देश-काल-भावके अनुसार जनसाधारणकी भाषामें पुस्तकों-
न्थोंका प्रकाशन करना चाहिये। जिससे साधारण व्यक्ति भी
ाभ उठा सके।

* * *

जिसके समागमसे अन्तःकरणकी शुद्धि हो, उसीका नाम
र्ग है।

—प्रवर्तिनी श्री देवश्रीजी

पू० साध्वी श्री हेमश्रीजी महाराजके सदुपदेशसे निम्न लिखित श्रावक-श्राविकाओं से वंदनीया प्रवर्तिनी साध्वी श्री देवश्रीजी महाराजकी जीवन-गाथाकी इस पुस्तकके प्रकाशनार्थ रुपया प्राप्त हुआ।

## पंजाब प्रांतसे

२३०) ला० श्रीलक्ष्मणदासजी जोधावाला ( लुधियाना )
२००) ला० श्री नेमदासजीकी धर्मपत्नी ( अम्बाला )
२००) ला० श्री लधासाहजी तरनतारनवाला
२००) ला० श्री अमरनाथजीकी धर्मपत्नी दौलतबाई ( जीरा )
१२५) ला० श्री कुन्दनलालजीकी धर्मपत्नी भागोदेवी ( सढौरा )
१२०) ला० श्री बाबूरामजीकी धर्मपत्नी ( अम्बाला )
१००) ला० श्री फकीरीलालजीकी धर्मपत्नी ( जीरा )
८०) ला० श्री छोटालाल कपूरचंद गुजरांवाला (वर्तमान आगरा) मारफत शिवदेवी।
५०) ला० श्री गोकुलचंद ( लुधियाना )
५०) ला० श्री रिखबदास वकीलकी माता हुक्मदेवी (अम्बाला)
५०) ला० श्री ज्ञानचंद सराफकी माता लक्ष्मीबाई (अम्बाला)
५०) ला० श्री मंगतरामजीकी धर्मपत्नी ( अम्बाला )
५०) ला० श्री दीपचंदजीकी धर्मपत्नी ( सढौरा )
५०) ला० श्री सूरतरामजीकी धर्मपत्नी ( सढौरा )
५०) श्रीमती बल्लोबाई ( सढौरा )
५०) ला० श्री बाबूरामजी ( कगवाड़ा )

१००) सेठ श्री मेघराजजी कोचरकी धर्मपत्नी
१००) सेठ श्री शिवबक्सजी मेघराजजी कोचर
१००) सेठ श्री भंवरलालजी वैदकी माता ज्ञानीबाई (रानीबाजार)
१००) सेठ श्री शिखरचंदजी वैद
५०) सेठ श्री बंशीलालजी पारखकी धर्मपत्नी रूपाबाई
५०) सेठ श्री कन्हैयालालजी गोलछाकी माता भूरीबाई
५०) सेठ श्री भंवरलालजी रामपुरियाकी धर्मपत्नी नत्थीबाई
४०) श्रीमती ममोलबाई रायपुरवाली
२५) सेठ श्री इन्द्रचन्दजी ढड्ढा जयपुरवाला
२५) सेठ श्री अमोलख चन्दजी कोचरकी धर्मपत्नी
२५) सेठ श्री कानजी कोचरकी पुत्री भीखीबाई
२५) सेठ श्री कृपाचंदजी कोचरकी धर्मपत्नी
५) सेठ श्री चन्दनमलजी सेठियाकी धर्मपत्नी

१४९५)

उपरोक्त नोट रुपया ३५१०) दी बीकानेर ऊलन प्रेस बीकानेरमें जमा थे, वे यहां पर सेठ श्री भैरूंदानजी सेठियाकी मारफत सधन्यवाद पाये।

# भूल-सुधार

| पृष्ठ | पंक्ति | भूल | सुधार |
|---|---|---|---|
| छ | १७ | नार | नारी |
| ज | १६ | अथ | अर्थ |
| झ | २१ | साधानी | सावधानी |
| ट | ८ | यहा | यहाँ |
| ण | ६ | प | नींव पड |
| ७ | ५ | चरित्रनायिक | चरित्रनायिका |
| ११ | ८ | चावता | चाहता |
| १५ | ३ | ने ग्रहण | ग्रहण |
| १७ | ५ | चुन्यामलजीके | चन्नामलजीके |
| २६ | ११ | सन्मागचे | सन्मार्गसे |
| ४४ | ८ | समथ | समर्थ |
| ४८ | ८ | कुसमय | कुसुम |
| ५४ | ६ | इन्हे | इन्होंने |
| ७२ | २ | श्री उत्तमविजयजी | श्रीनेमविजयजी<br>( वर्तमानमें पन्यास ) |
| ७२ | ३ | श्री नेमविजयजी | श्री नेमविजयजी म०<br>और उत्तमविजयजी म० |
| ७८ | ८ | नातेवालकी | नारीवालकी |

१६५६

| पृष्ठ | पंक्ति | मूल | सुधार |
| --- | --- | --- | --- |
| ८२ | ७ | १६५० | १६५६ |
| ८३ | ११ | पुद्दीयाला | पट्टियाला |
| ११७ | ३ | गंधारका | कावी और गंधारका |
| ११७ | ११ | पालता हुआ | पालता हुआ प्रथम कावी तीर्थकी यात्रा करके सास-बहुके बनाये हुए भव्य दो जिनालयोंकी यात्रा करके |
| ११७ | १२ | बढ़ा | संघ बढ़ा, |
| ११८ | १३ | सास-बहुके बनाये हुए—श्रीअमीजरा पार्श्व | |
| १३३ | १४ | होंगे | होते |
| १३५ | १ | अभक्ष्य | कन्द मूलादि अभक्ष्य |
| १५८ | २ | जन्म | जन्म और दीक्षा |
| १५८ | ३ | षष्ठी | अष्टमी |
| १६२ | ६ | कराने | करानेके |
| १६२ | ७ | बीकानेसे | बीकानेरसे |
| १६३ | ६ | प्रवर्त्तनी | प्रवर्तिनी |
| १६४ | ३ | की | को |
| १६४ | १५ | प्राप्त | प्राप्ति |
| १६५ | ३ | १६७५ | १६७६ |
| १६६ | ४ | आपकी पहुंच | आपको पंजाब |
| १६७ | ५ | सकना | रुकना |

| पृष्ठ | पंक्ति | मूल | सुधार |
|---|---|---|---|
| १६७ | १५ | ओर | ओरसे |
| १७० | ५ | जगतनलजी | जगतूमलजी |
| १८० | ८ | ४२ | १०० |
| १८३ | २३ | १६७८ | १६७६ |
| १८० | २० | माघ | मार्गशिर्ष |
| १८० | २२ | गुरुदेवको | शास्त्रानुसार विधि सहित गुरुदेवको |
| २०८ | ११ | १६६५ | १६६६ |
| २०८ | २१ | की | को |
| २१८ | ३ | हुई | हुई साधु धर्मके नियमानुसार |
| २२३ | १२ | भावक | श्रावक |